जब सूरज ने आँखें खोलीं

प्रेरणा के बोल

माटी की धरती पर सहसा सोने के फूल खिल उठे। सभी चौंके, मन में विस्मय आया। तभी सहयोग की बाँहें आगे बढ़ीं और जन-जागरण की जयमालायें सबके गले में डाल दीं। व्यक्ति मुस्करा दिया और उस की मुस्कराहट के साथ ही साथ पृथ्वी पर का घना अँधेरा दूर हो गया। फिर जब सूरज ने आँखें खोलीं तो धरती हँस रही थी। वह कह रही थी कि देखो मेरी माँग में मोती भरे हैं। मेरी काया कंचन की हो गई है। मेरा ब्याह हो गया है। मैं फल रही हूँ, फूल रही हूँ।

धरती के दो पुत्र एक नगर दूसरा गाँव। दोनों गरीबी-अमीरी का भेद भूल ऐक्य की डोर में बँध गये। सुमति की संगति देख गाँव की फूट ने डेरा उठाया। ऐसे ही चल दिया दारिद्र्य उल्टे पाँव। प्रत्यक्ष प्रतीक बन गया, परोक्ष के पाँव उखड़े और पतन रोने लगा ऐसे जैसे वह जिन्दा ही मर गया।

प्रस्तुत कृति जन-जागरण पर आधारित सहयोगी भावनाओं से ओत-प्रोत एक ऐसे कथानक को लेकर चलती है जो व्यक्ति और समाज दोनों की आँखें खोलता है कि काम करने से होता है सोचने से नहीं। योजना तभी पूरी होती है जब समुदाय का प्रत्येक व्यक्ति प्रगतिशील होता है। बड़े को छोटे का सहयोग सहज ही प्राप्त हो जाता है; लेकिन छोटा अधिकांश वंचित ही रहता है इस सुख से। बड़ा उसे हेय समझता है; लेकिन ऐसा नहीं। युग कहता है कि साथ चलो, सन्तोष करो। सुख को दुख और दुख को सुख समझो। दुनिया उसकी है जो स्वयं अपना नहीं।

इसी आधार को लेकर मैंने कथा का सृजन किया है। नई सृष्टि के नये फूल प्रस्तुत करने में मुझे हिचक नहीं, बल्कि प्रसन्नता हो रही है; क्योंकि मैंने जो सपना देखा था वह साकार हो गया।

३८।२५६ अनवरगंज
कानपुर

कमल शुक्ल

: १ :

दोपहर होने जा रही थी। आँगन में छाई धूप चिलक रही थी और हवा इतनी धीमी थी जैसे बिल्कुल बन्द हो। उमस प्रावल्य की सीमा को पार कर रही थी। गौरी धान कूट रही थी। उसके माथे पर पसीने की बूँदें छलछला आई, सलूका (ब्लाऊज) स्वेद से नहा गया। उसने मूसल रख दिया और ओढनी के एक छोर से माथे का पसीना पोंछ पास रखे खजूर के पंखे को उठा मुँह पर हवा करने लगी। उसके एक हाथ में पंखा था और दूसरा गाली में पड़े अध-कुटे धानों को चला रहा था। सामने दृष्टि गई आँगन की ओर, चटक धूप के सम्मुख उसकी आँखें नहीं टिकी। उसने मुँह फेर लिया और एक लम्बी साँस ले सोचने लगी कि देर बहुत हो गई है। रतन स्कूल से आता होगा। रात को उसने कुछ नहीं खाया और सवेरे भी वैसे ही मुँह बाँधे चला गया। चलूँ जल्दी करूँ धानों में अभी देर लगेगी।

अब गौरी का हाथ चल रहा था। धान गाली में ऊपर आते नीचे जाते। उनपर मूसल पड़ता धम्म की आवाज होती। उसका बाँया हाथ धान चलाने में व्यस्त था, दाहिने में मूसल था। वह पसीने-पसीने हो रही थी। पास ही टाट पर रूपा सो रही थी उसके मुँह पर मक्खियाँ भिन-भिना रही थी। गौरी ध्यान-मग्न थी कि वे (मँगरू) लकड़ी काटने गये हैं भूख से उनकी आँतें कल्ला रही होंगी, प्यास लगी होगी तो पानी पीकर अंतड़ियाँ धो ली होंगी। कैसा जमाना है? कैसा रिवाज है? जो दिन-रात मेहनत करता है वह भूखा क्यों रहता है यह समझ में नहीं

आना। हमारे घर में कोई तिजारत नहीं होती। हम लोग बड़े आदमी नहीं हैं। खेती-बाड़ी भी हमें मयस्सर नहीं। रोज कुआँ खोदना और पानी पीना। उस पर ये बरसात के दिन तो बेमौत मार डालते हैं। एक दिन मजदूरी मिलती है चार दिन घर पर बैठना पड़ता है। ऐसे ही जिस दिन पानी बरस जाता है वे लकड़ी लाने नहीं जा पाते। कैसे जीते हैं गरीब लोग। मैं तो गरीबी से तंग आ गई हूँ। भगवान कितना अच्छा करे अगर पैदा होते ही गरीबों को मौत दे दे। कल दिन भर पानी बरसा। रात को भी उसने साँस नहीं ली। पेड़ भीगे होंगे। मैं मना करती रही उनको कि न जाओ गीली डालों पर कैसे चढ़ोगे। लेकिन वे बाप हैं और मैं माँ हूँ। हम लोग रतन को भूखा नहीं देख सकते। उन्हें मजबूरी खींच ले गई। मैं भी उसका शिकार बनी बैठी हूँ। भगवान भला करे बिन्दो दीदी का जो मेहरबान हो गई और सेर भर धान उधार दे दिये। आधे कुट गये, थोड़ी देर और लगेगी। अभी भात बनाती हूँ, जिससे स्कूल से आते ही रतन को खाना मिल जाये। लौट रहे होंगे वे भी जंगल से। जल्दी-जल्दी हाथ चलाऊँ कि···।

"माँ लाओ खाना दो ! अब मुझसे नहीं रुकती भूख ! बड़ी ज़ोर से लगी है।" कहता हुआ सात वर्षीय रतन गौरी के सामने आकर खड़ा हो गया। उसका चेहरा उदास था और मुद्रा रोनी-रोनी सी हो रही थी।

गौरी की विचार शृंखला टूट गई। उसने मूसल रख दिया और जल्दी से पुत्र के हाथों से बोरिका, पट्टी और खड़िया, कलम ले, एक ओर रख, फिर स्नेहपूर्वक उसके सिर पर हाथ फेर मुँह चूमती हुई बोली—"हाँ-हाँ अभी लो। बस ! थोड़ी देर रुक जाओ तनिक कसर रह गई है, धान कुट गये।"

यह कह गौरी पुनः व्यस्त हो गई अपने काम में। मूसल चलने लगा। धानों की भूसी उनका साथ छोड़ने लगी। गाली में अब धान कम और चावल अधिक दिखलाई पड़ रहे थे। रतन जाँघिया, कमीज़ पहने

रखा था। उसने कमीज उतार डाली और गुस्से में आकर माँ के ऊपर फेंक दी।

गौरी चौंकी, उसने देखा रतन रो रहा है। वह जल्दी से उठी, कमीज खूँटी पर टाँगी और फिर मुस्कराती हुई पुत्र के पास पहुँच हँस कर कहने लगी—"अरे, तुम तो राजा बेटे हो रतन, रोते क्यों हो? देखो अब चावल कुट गये भात पकने तनिक भी देर नहीं लगेगी। आओ मेरे पास बैठो।" यह कहकर गौरी ने रतन के आँसू पोंछे और बाँह पकड़ कर उसको सानी के पास बैठा लिया। वह फिर धान कूटने लगी।

रतन भूख से बेचैन था वह जोर-जोर से रोने लगा। गौरी उसे चुप कराने का प्रयत्न करती तो वह और भी तेजी पकड़ जाता, जिद करने लगता। सहसा रूपा जाग पड़ी वह भी भूखी थी। उसका रोना सुन गौरी से न रहा गया। वह जल्दी से उठी उसको गोद में उठा लिया और फिर सूखा आँचल उसके मुँह में दे बहलाने लगी।

लेकिन आँचल में दूध की एक भी बूँद नहीं थी। रूपा चुपती तो कैसे? गौरी को बड़ी उलझन थी क्योंकि काम अभी पड़ा था और रूपा बीच में ही जाग गई। उसने हिम्मत की, ममता की ओर से मुँह मोड़ा, रूपा को खाट पर लिटा दिया और कूटे धानों को सूप से टाग पछोरने लगी। अभी उसने पछोरे हुए धान सानी में डाले और मूसल उठाया ही था कि सहसा कई लोगों की आवाजें उसके कानों में पड़ीं। वह चौंक गई और सामने की ओर देखने लगी। चार-पाँच आदमी उसके पति को हाथों पर उठाये लिए चले आ रहे थे। उसके हाथ का मूसल उठा-का-उठा ही रह गया। वह आँखें फाड़ मुँह बाये देख रही थी। आगे-आगे आते हुए पड़ोसी रामदयाल दादा कह रहे थे—"जल्दी करो गौरी सब काम छोड़ दो। देखो मँगरू पेड़ पर से गिर पड़ा है।"

गौरी की दृष्टि पति के लोहू-लुहान शरीर पर गई। उसे लोग चार-पाई पर लिटा रहे थे। वह धीरे-धीरे कराह रहा था। गौरी पास गई खून देखकर वह सहम गई। उसका सिर चकराया और वह धम्म से

ामीन पर गिर पड़ी ।

एक आदमी गौरी के मुँह पर पानी के छींटें मार उसे होश में लाने का उपक्रम करने लगा । दूसरा व्यक्ति दौड़ा दिया रामदयाल दादा ने, वह अपने घर से पीस कर हल्दी और चूना ले आया । जहाँ-जहाँ मँगरू के चोट लगी थी, वहीं हल्दी-चूना मिलाकर थोप दिया गया । थोड़ी देर बाद गौरी ने जब आँखें खोलीं तो देखा कि पति की देह पर जगह-जगह हल्दी-चूना लग रहा है और उसकी दाहिनी टाँग में लकड़ी की पच्चड़ें बाँध उन पर कपड़े की पट्टी लपेटते हुए रामदयाल दादा कह रहे थे लोगों से—"लगता है कि हड्डी टूटी नहीं हट गई है, मलने से ठीक हो जायेगी । लेकिन मँगरू बेचारा महीने-पन्द्रह दिन बेकार रहेगा । वह चल-फिर नहीं पायेगा ।"

गौरी सुनते ही घबड़ा गई । वह हड़बड़ा कर उठी और रामदयाल दादा के निकट जा व्यस्त गले से पूछने लगी—"क्या कहा दादा टाँग की हड्डी हट गई है । कैसे ठीक होगी ? कहीं कोई और बात तो नहीं ?"

इस पर गौरी को धीरज दिलाने के लिए बूढ़े रामदयाल दादा हँसने लगे । वे बोले—"अरे तुम तो घबड़ा गई गौरी हड्डी टूटी नहीं हट ग है । जल्दी ही ठीक हो जायेगी पच्चड़ें बाँध दी हैं । मन क्यों छोटा कर हो ।"

आँगन के एक कोने में चारपाई पर मँगरू लेटा था, वहाँ धूप तो थी; लेकिन उमस की कोई सीमा नहीं थी । गौरी सो रही थी कि प को कोठरी में लिटाये और पीछे के किवाड़े खोल दे तो उतनी गर्मी न मालूम होगी । इस काम के लिए उसने लोगों से सहायता ली ।

अब सब लोग चले गये थे । मँगरू आँखें खोले गौरी की ओर रहा था । उसने कहा बहुत धीमी आवाज में—"तुम्हारी तकदीर थी और बच्चों का मुंह देखना बदा था इसलिए घर लौट आया गौ वर्ना आज तो जान जाने में कुछ बाकी नहीं रह गया था ।"

गौरी ने कुछ जवाब नहीं दिया । वह चुपचाप एकटक पति

की निहारती रही। उसकी आँखों से दो बूँद आँसू ढुलक पड़े। उसने मुँह घुमा लिया और आँचल से गीले कपोल पोंछने लगी। तभी सहसा उसे बोध हुआ बच्चों का; क्योंकि रूपा और रतन दोनों के रोने की आवाज़ अब बिल्कुल सुनाई नहीं दे रही थी। वह घबड़ाई हुई-सी गई गाली के पास। रूपा सो रही थी पेट के बल और रतन के गालों पर आँसुओं के चिन्ह स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहे थे। रोते-रोते वह भी सो गया था चौगट पर। वह गुड़ी-मुड़ी होकर पड़ा था। गौरी ने उसे धीरे से गोद में उठा कर अलग जमीन पर सुला दिया रूपा के पास, जगाया इस भय से नहीं कि भात तैयार होने में अभी देर थी।

थोड़ी देर बाद धान कुट गये, भात बना गौरी ने रतन को जगाकर उसका मुँह धोया और उसके सामने कटोरे में भात रख दिया। वह खाने लगा तो रूपा को गोद में ले थाली में भात रख पति के पास पहुँच गई। यद्यपि वह जानती थी कि भात ठंडा होता है और उसके पति को इस समय वह हानि पहुँचा सकता है लेकिन मजबूरी थी। भूख में तो आदमी को मिट्टी तक खानी पड़ती है। पति को खिला उसने स्वयं भोजन किया और फिर लगे हाथ उसी समय टहल कर पति के पास आकर बैठ गई। उसने लकड़ियाँ जला आग बनाई मिट्टी की बरोसिया में। उसमें कुछ कन्डे के टुकड़े डाल दिये। जब आग प्रज्ज्वलित हुई तो तवा रख रूई का पहल ले पति के जख्मों को सेंकने लगी।

रतन बाहर जाकर खेल में लग गया। अब तीसरा पहर हो रहा था। गौरी ने बाहर का एक किवाड़ भेड़ दिया जिससे पति को हवा न लगे। वह सेंक रही थी। मँगरू की देह की पीड़ा कुछ-कुछ कम होने लगी। उसे सेंक अच्छा लग रहा था। वह बोला—"गौरी देखो आदमी क्या सोचता है और क्या होता है। मैं अपाहिज हो गया। घर का खर्च कैसे चलेगा। तुम अकेले क्या-क्या करोगी। बाहर मजदूरी पर जाओगी या घर में काम देखोगी। मेरी छोड़ो, बच्चों को बेहद तकलीफ होगी। भगवान बिगाड़ता है तो इस तरह। मुझे बड़ी चिन्ता है कि घर की गाड़ी

जमीन पर गिर पड़ी।

एक आदमी गौरी के मुंह पर पानी के छींटें मार उसे होश में लाने का उपक्रम करने लगा। दूसरा व्यक्ति दौड़ा दिया रामदयाल दादा ने, वह अपने घर से पीस कर हल्दी और चूना ले आया। जहाँ-जहाँ मँगरू के चोट लगी थी, वहीं हल्दी-चूना मिलाकर थोप दिया गया। थोड़ी देर बाद गौरी ने जब आँखें खोलीं तो देखा कि पति की देह पर जगह-जगह हल्दी-चूना लग रहा है और उसकी दाहिनी टाँग में लकड़ी की पच्चड़ें बाँध उन पर कपड़े की पट्टी लपेटते हुए रामदयाल दादा कह रहे थे लोगों से—"लगता है कि हड्डी टूटी नहीं हट गई है, मलने से ठीक हो जायेगी। लेकिन मँगरू बेचारा महीने-पन्द्रह दिन बेकार रहेगा। वह चल-फिर नहीं पायेगा।"

गौरी सुनते ही घबड़ा गई। वह हड़बड़ा कर उठी और रामदयाल दादा के निकट जा व्यस्त गले से पूछने लगी—"क्या कहा दादा टाँग की हड्डी हट गई है। कैसे ठीक होगी? कहीं कोई और बात तो नहीं?"

इस पर गौरी को धीरज दिलाने के लिए बूढ़े रामदयाल दादा हँसने लगे। वे बोले—"अरे तुम तो घबड़ा गई गौरी हड्डी टूटी नहीं हट गई है। जल्दी ही ठीक हो जायेगी पच्चड़ें बाँध दी हैं। मन क्यों छोटा करती हो।"

आँगन के एक कोने में चारपाई पर मँगरू लेटा था, वहाँ धूप तो न थी; लेकिन उमस की कोई सीमा नहीं थी। गौरी सो रही थी कि पति को कोठरी में लिटाये और पीछे के किवाड़े खोल दे तो उतनी गर्मी नहीं मालूम होगी। इस काम के लिए उसने लोगों से सहायता ली।

अब सब लोग चले गये थे। मँगरू आँखें खोले गौरी की ओर देख रहा था। उसने कहा बहुत धीमी आवाज में—"तुम्हारी तकदीर जोर थी और बच्चों का मुंह देखना बदा था इसलिए घर लौट आया गौरी। वर्ना आज तो जान जाने में कुछ बाकी नहीं रह गया था।"

गौरी ने कुछ जवाब नहीं दिया। वह चुपचाप एकटक पति के मुँह

की निहारती रही। उसकी आँखों से दो बूँद आँसू ढुलक पड़े। उसने मुँह घुमा लिया और आँचल से गीले कपोल पोंछने लगी। तभी सहसा उसे बोध हुआ बच्चों का; क्योंकि रूपा और रतन दोनों के रोने की आवाज अब बिल्कुल सुनाई नहीं दे रही थी। वह घबड़ाई हुई-सी गई ओसारे के पास। रूपा सो रही थी पेट के बल और रतन के गालों पर आँसुओं के चिन्ह स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहे थे। रोते-रोते वह भी सो गया था चौखट पर। वह गुड़ी-मुड़ी होकर पड़ा था। गौरी ने उसे धीरे से गोद में उठा कर अलग जमीन पर सुला दिया रूपा के पास, जगाया इस भय से नहीं कि भात तैयार होने में अभी देर थी।

थोड़ी देर बाद धान कुट गये, भात बना गौरी ने रतन को जगाकर उसका मुँह धोया और उसके सामने कटोरे में भात रख दिया। वह खाने लगा तो रूपा को गोद में ले थाली में भात रख पति के पास पहुँच गई। यद्यपि वह जानती थी कि भात ठंडा होता है और उसके पति को इस समय वह हानि पहुँचा सकता है लेकिन मजबूरी थी। भूख में तो आदमी को मिट्टी तक खानी पड़ती है। पति को खिला उसने स्वयं भोजन किया और फिर लगे हाथ उसी समय टहल कर पति के पास आकर बैठ गई। उसने लकड़ियाँ जला आग बनाई मिट्टी की बरोसिया में। उसमें कुछ कण्डे के टुकड़े डाल दिये। जब आग प्रज्ज्वलित हुई तो तवा रख रूई का पहल ले पति के जख्मों को सेंकने लगी।

रतन बाहर जाकर खेल में लग गया। अब तीसरा पहर हो रहा था। गौरी ने बाहर का एक किवाड़ भेड़ दिया जिससे पति को हवा न लगे। वह सेंक रही थी। मंगरू की देह की पीड़ा कुछ-कुछ कम होने लगी। उसे सेंक अच्छा लग रहा था। वह बोला—"गौरी देखो आदमी क्या सोचता है और क्या होता है। मैं अपाहिज हो गया। घर का खर्च कैसे चलेगा। तुम अकेले क्या-क्या करोगी। बाहर मजदूरी पर जाओगी या घर में काम देखोगी। मेरी छोड़ो, बच्चों को बेहद तकलीफ होगी। भगवान बिगाड़ता है तो इस तरह। मुझे बड़ी चिन्ता है कि घर की गाड़ी

कैसे चलेगी।"

इस पर गौरी मुस्करा पड़ी। वह बोली—"मन क्यों छोटा करते हो। जिसका कोई नहीं होता उसका भगवान होता है। टाँग की हड्डी टूट गई है। वह बैठ जायेगी। रह गई मेरी सो मैं रात को लोगों के धान कूटूंगी, अनाज पीसूंगी दिन में मजदूरी करूंगी। जब सिर पर भार आ पड़ता है तो आदमी की भूख, प्यास और नींद सब चली जाती है। उसे काम करना पड़ता है और उसी के सहारे वह जिन्दा रहता है।'

पत्नी की दिलासा भरी साहस पूर्ण बातें सुन मँगरू प्रसन्न हो उठा। उसके होठों पर हँसी दौड़ गई। और वह कहने लगा—"सचमुच गौरी तुममें बड़ी हिम्मत है। कहती तो ठीक हो; लेकिन यह सब चल पायेगा? तुम जितना सोचती हो कर लोगी?"

"क्यों नहीं।"

गौरी के मुँह से सुन मँगरू हँस पड़ा। फिर तत्क्षण ही कुछ उदास गया और लम्बी साँस ले निराशा भरे स्वर में कहने लगा—"गौरी सब की जिन्दगी में दुख आता है, सुख आता है। लेकिन हमारे घर में कभी सुख नहीं आया। वाकई मैं अभागा हूँ।"

गौरी छूटते ही बोली उठी—"अभागे होंगे तुम्हारे दुश्मन। क्या नहीं है तुम्हारे घर में। भगवान का दिया हुआ सब कुछ तो है, पैसा जरूर नहीं है। हमारा रतन बना रहे, रूपा खूब फले-फूले। पेट के लिए रोटी चाहिए और तन के लिए कपड़ा, पैसा नहीं चाहिये। मेरे पूत का मोल लाख मोहरों से भी ज्यादा है। ऐसी बातें न सोचा करो। अपने बच्चों का मुँह देखो, भगवान की मिन्नत करो। दिन ऐसे ही नहीं बने रहेंगे।"

इस समय मँगरू को ऐसा लग रहा था। जैसे वह सारी चिन्ताओं से मुक्त हो गया हो। गौरी कहती जा रही थी, वह सुन रहा था। उसे यह महसूस हो रहा था कि औरत बहुत बड़ा सहारा होती है मर्द का। जितनी कुर्बानी वह करती है उतनी आदमी नहीं कर पाता। मेरी गौरी कभी हिम्मत नहीं हारती। हर मुसीबत का सामना वह हँस कर

करती है।"

दम्पति की वार्ता का अन्त ही नहीं हो रहा था। साँझ हो गई। बरोसिया की आग ठंडी पड़ रही थी। अगारों पर राख की परतें जम रही थीं, फिर भी उस पर तवा रखा था और गौरी सेंक रही थी। पति की देह जब कि रुई का पहल मामूली-सा गरम होता। देह तक पहुँचते-पहुँचते उसकी गर्मी समाप्त हो जाती।

थोड़ी देर बाद गौरी ने दिया जलाया। इस समय मँगरू की आँख लग गई थी। यद्यपि कुबेरी वेला थी, उस समय का सोना अशुभ माना जाता है; लेकिन फिर भी गौरी पति को नहीं जगा सकी। उसका हाथ चारपाई की ओर जाकर फिर वापस लौट आया। वह बाहर आँगन में आई। तारे खिल रहे थे। नीले आकाश में और चाँद निकला था। हवा की गति मन्द थी। वह शनैः-शनैः बह रही थी। गौरी सोच रही थी कि कुदरत का खेल समझ में नहीं आता। कल इस समय मूसलाधार पानी बरस रहा था और उजाला होकर अँधेरा था। कोई नहीं जानता कि तनिक देर में क्या से क्या हो जायेगा।

सहसा दौड़ता हुआ रतन आकर माँ से लिपट गया। उसके कपड़े धूल-धूसरित हो रहे थे। गौरी ने जल्दी से पुत्र को दोनों बाँहों में उठा लिया और उसका मुँह चूमने लगी।

: २ :

कौन ऐसा था गाँव में जो मँगरू को नहीं जानता। वह विनयी था इसीलिये उससे प्रत्येक व्यक्ति सन्तुष्ट था। वह जाति का काछी था। गाँव में जहाँ काम मिलता वह करता। प्रायः मजदूरी में लोग उसे पैसे कम ही देते थे वह हँसी-खुशी चुपचाप ले लेता। किसी से कुछ नहीं कहता। उसके पास न कोई जानवर था और न अपनी खेती। जब गाँव और खेतों में काम नहीं मिलता तो वह जंगल की ओर निकल जाता। वहाँ से लकड़ियाँ काट, फिर कस्बे के बाजार में उनकी बिक्री कर घर वापस लौटता।

बड़ा मेहनती था वह।

मँगरू की आयु लगभग छब्बीस-सत्ताईस वर्ष की थी। विद्या के नाम पर वह शून्य था क्योंकि उसके बचपन में गाँव में पाठशाला नहीं थी। वह मुसीबतें उठाते-उठाते बहुत कुछ अनुभव प्राप्त कर चुका था। गरीबी उसके पीछे हाथ धोकर पड़ी थी। फिर भी वह हिम्मत नहीं हारता, क्या घर और क्या बाहर सबको खुश रखने की कोशिश करता। कोई उसे अगर दो कड़ी बातें भी कह देता तो चुपचाप सुन लेता। स्वभाव का वह इतना सरल था कि कभी किसी काम के लिये इन्कार नहीं करता। तभी उसके महाजन उससे होली-दीवाली और तिथि, त्योहारों पर बेगार लेते। बदले में रूखी-सूखी रोटियाँ मिलतीं। बेगार में वह लोगों के घरों की दीवालें लेसता, फनिया करता, पोतता और चबूतरे आदि लीपता था।

गौरी का स्वभाव भी न कठोर था और न बहुत ही नरम। वह सीधी-सादी राह पसन्द करती थी। उसके अन्दर एक गुण विशेष था। मँगरू को उस पर आस्था थी कि गौरी कभी झूठ नहीं बोलती है। जिस तरह मँगरू की औसत दर्जे की देह थी भरी हुई, हाथ-पैर सुडौल, वैसे ही गौरी भी मध्यम कद की नाटी थी। अन्तर केवल इतना था कि पति का रंग साँवला था और वह गोरी थी। गोरी ही नहीं वह थी अनिद्य सुन्दरी। दो बच्चों की माँ होने पर भी लगता था कि अभी षोडशी है। पैरों में गिलट के कड़े, उंगलियों में बिछिये कभी धोती साधारण घर में रंगी हुई और कभी लहँगा पहनती थी वह छींट का। उसकी गोरी कलाइयों में काली और लाल मोटी-मोटी कांच की चूड़ियाँ पड़ी रहतीं। वह चूड़ियों के साथ गिलट के कड़े, गले में हँसली और बाहों में टड़िया भी गिलट की पहनती। हाँ अलबत्ता नाक की चोंगिया सोने की जरूर थी। उसके कानों में पीतल की बालियाँ झूलती लाल चुन्नी और मोमिया मोती पड़ी। उसकी माँग सूनी नहीं रहती, वह भरी रहती सिन्दूर से और माथे पर ईंगुर की बिन्दी हमेशा लगी रहती।

मँगरू धोती ऊँची-ऊँची गांठों तक लुंगी की तरह बांधता। पैरों में

जूते नसीब नहीं होते थे, अतः वह नंगे पैर रहता जिससे प्राय: उसकी एड़ियों में बेवाई हो जाती। कभी सलूका, कभी कमीज और कभी उघारे बदन रहता वह। सिर के बाल जब बहुत बढ़ जाते तो सिर घुटा लेता। मुरैठा (एक प्रकार का साफा) दिन भर बाँधे रहने की उसकी आदत थी वह जो भी काम करता मुस्तैदी से और हमेशा चुस्त रहता था।

गाँव पार्वतीपुर में लगभग दो सौ घर थे, जिनमें अधिकतर खेतिहर किसानों के, दस-पन्द्रह घर ब्राह्मणों के। इसी तरह कुछ थोड़े से घर कलवार, बनियों तथा ठाकुरों आदि के थे। ऊँचे तबके के लोग करीब-करीब सभी महाजन थे और जमीन्दारी उन्मूलन के पहले जमीन्दार। गरीबों का पैसा वे बेरहमी के साथ वसूल करते जो एक बार ऋण ले लेता वह जीवनपर्यन्त मुक्त नहीं हो पाता। वही नहीं उसकी औलाद भी कर्ज चुकाते-चुकाते थक जाती और ब्याज बढ़ता ही जाता।

मुसम्मात बिन्दो मँगरू की महाजन थी। उसका हृदय पत्थर का था और स्वभाव क्रूर। उसकी बोली, बाणी और कार्य सभी जघन्य थे। वह कसकर सूद लेती, तनिक भी रियायत नहीं करती। बेचारे मियाँ-बीवी दोनों उसकी बेगार करते। जिस दिन मँगरू गिरा था उसने सेर भर धान सबेरे गौरी को उधार दिये थे यह कहकर कि सवाया(सवागुना) लेगी और जल्दी ही। फिर उसी रात को गौरी गई, उसके सामने वह गिड़गिड़ाई और दो रुपये माँगे। तब छूटते ही बिन्दो ने कहा–"जा, जा। यहाँ रुपयों का पेड़ लगा है क्या ? अगर हाँडी का मुँह खोल दो तो कुत्तों को तो शरम आनी चाहिए। मेरे पास रुपये नहीं है, पहले जो ले गई हो वे दे जाओ।"

गौरी चली आई आँखों की कोरें गीली किये और चौखट पर पैर रखते-रखते खारी पानी ढुलक पड़ा आँसू बनकर। उसने मन मसोश लिया। मँगरू ने पूछा कहाँ गई थी ? तब उसने बहाना किया कि बिन्दो दीदी बाहर जा रही थी, तुम्हारा हाल पूछ रही थी।

इस पर मँगरू तनिक हँसा। वह हँसी घृणा मिश्रित।

बड़ा मेहनती था वह।

मँगरू की आयु लगभग छब्बीस-सत्ताईस वर्ष की थी। विद्या के नाम पर वह शून्य था क्योंकि उसके बचपन में गाँव में पाठशाला नहीं थी। वह मुसीबतें उठाते-उठाते बहुत कुछ अनुभव प्राप्त कर चुका था। गरीबी उसके पीछे हाथ धोकर पड़ी थी। फिर भी वह हिम्मत नहीं हारता, क्या घर और क्या बाहर सबको खुश रखने की कोशिश करता। कोई उसे अगर दो कड़ी बातें भी कह देता तो चुपचाप सुन लेता। स्वभाव का वह इतना सरल था कि कभी किसी काम के लिये इन्कार नहीं करता। तभी उसके महाजन उससे होली-दीवाली और तिथि, त्योहारों पर बेगार लेते। बदले में रूखी-सूखी रोटियाँ मिलतीं। बेगार में वह लोगों के घरों की दीवालें लेसता, फनिया करता, पोतता और चबूतरे आदि लीपता था।

गौरी का स्वभाव भी न कठोर था और न बहुत ही नरम। वह सीधी-सादी राह पसन्द करती थी। उसके अन्दर एक गुण विशेष था। मँगरू की उस पर आस्था थी कि गौरी कभी झूठ नहीं बोलती है। जिस तरह मँगरू की औसत दर्जे की देह थी भरी हुई, हाथ-पैर सुडौल, वैसे ही गौरी भी मध्यम कद की नाटी थी। अन्तर केवल इतना था कि पति का रंग साँवला था और वह गोरी थी। गोरी ही नहीं वह थी अनिंद्य सुन्दरी। दो बच्चों की माँ होने पर भी लगता था कि अभी षोडशी है। पैरों में गिलट के कड़े, उंगलियों में बिछिये कभी धोती साधारण घर में रंगी हुई और कभी लहँगा पहनती थी वह छींट का। उसकी गोरी कलाइयों में काली और लाल मोटी-मोटी काँच की चूड़ियाँ पड़ी रहतीं। वह चूड़ियों के साथ गिलट के कड़े, गले में हँसली और बाहों में टड़िया भी गिलट की पहनती। हाँ अलबत्ता नाक की चोंगिया सोने की जरूर थी। उसके कानों में पीतल की बालियाँ झूलती लाल चुन्नी और मोमिया मोती पड़ी। उसकी माँग सूनी नहीं रहती, वह भरी रहती सिन्दूर से और माथे पर ईंगुर की बिन्दी हमेशा लगी रहती।

मँगरू धोती ऊँची-ऊँची गाँठों तक लुंगी की तरह बाँधता। पैरों में

जूते नसीब नहीं होते थे, अतः वह नंगे पैर रहता जिससे प्रायः उसकी एड़ियों में बेवाई हो जातीं। कभी सलूका, कभी कमीज और कभी उघारे बदन रहता वह। सिर के बाल जब बहुत बढ़ जाते तो सिर घुटा लेता। मुरैठा (एक प्रकार का साफा) दिन भर बांधे रहने की उसकी आदत थी वह जो भी काम करता मुस्तैदी से और हमेशा चुस्त रहता था।

गाँव पार्वतीपुर में लगभग दो सौ घर थे, जिनमें अधिकतर खेतिहर किसानों के, दस-पन्द्रह घर ब्राह्मणों के। इसी तरह कुछ थोड़े से घर कलवार, बनियों तथा ठाकुरों आदि के थे। ऊँचे तबके के लोग करीब-करीब सभी महाजन थे और जमीन्दारी उन्मूलन के पहले जमीन्दार। गरीबों का पैसा वे बेरहमी के साथ वसूल करते जो एक बार ऋण ले लेता वह जीवनपर्यन्त मुक्त नहीं हो पाता। यही नहीं उसकी औलाद भी कर्ज चुकाते-चुकाते थक जाती और ब्याज बढ़ता ही जाता।

मुसम्मात बिन्दो मँगरू की महाजन थी। उसका हृदय पत्थर का था और स्वभाव क्रूर। उसकी बोली, वाणी और कार्य सभी जघन्य थे। वह कसकर सूद लेती, तनिक भी रियायत नहीं करती। बेचारे मियाँ-बीबी दोनों उसकी बेगार करते। जिस दिन मँगरू गिरा था उसने सेर भर धान सबेरे गौरी को उधार दिये थे यह कहकर कि सवाया (सवागुना) लेगी और जल्दी ही। फिर उसी रात को गौरी गई, उसके सामने वह गिड़गिड़ाई और दो रुपये माँगे। तब छूटते ही बिन्दो ने कहा—"जा, जा। यहाँ रुपयों का पेड़ लगा है क्या? अगर हाँडी का मुँह खोल दो तो कुत्तों को तो शरम आनी चाहिए। मेरे पास रुपये नहीं हैं, पहले जो ले गई है वे दे जाओ।"

गौरी चली आई आँखों की कोरें गीली किये और [illegible] रखते-रखते [illegible] पानी ढुलक पड़ा आँसू बनकर [illegible] लिया। मँगरू ने पूछा कहाँ गई थी? तब उसने [illegible] दीदी बाहर जा रही थी, तुम्हारा हाल पूछ रही [illegible]

इस पर मँगरू तनिक हँसा। वह हँसी [illegible]

कहा पत्नी की ओर उन्मुख होकर—"हाँ गरीबों का हाल-चाल बाहर से ही पूछा जाता है। काम के लिए वे भइया और मुनुआँ बन जाते हैं और तकलीफ के समय उन्हें कुत्तों की मौत मरने दिया जाता है। विन्दो क्यों आयेगी मेरे घर उसे कौन-सी बेगार लेनी है।" यह कहकर मँगरू ने एक दीर्घ उच्छ्वास ली।

और गौरी चुप रही।

रात भर अण्डी के तेल का दिया टिमटिमाता रहा। मँगरू काँखता, सोता और जागता रहा। नींद रूठी रही गौरी से भी। वह सोच रही थी कि सबेरे क्या होगा ?

सबेरा हुआ रामदयाल दादा आये। मँगरू के पाँव से लेकर जाँघ तक सूजन आ गई थी। पाँव लगता था जैसे भँरिया। रामदयाल ने देखा और छूटते ही गौरी से कहने लगे "अरे गौरी मुझे लगता है कि हड्डी हटी नहीं, टूट गई है। जल्दी ही किसी आदमी को जमालपुर भेजो। रामचरण महतो को बुलवाओ। बेचारा मँगरू, पेड़ से क्या गिरा लँगड़ा ही हो गया।"

सन्निपात के रोगी की तरह गौरी एकदम चिहुँक उठी। वह सकते की हालत में आ दोनों आँखें काढ़ गला फाड़ कर बुरी तरह चिल्ला पड़ी—"मैं लुट गई दादा कल कहते थे कि हड्डी टूटी नहीं हट गई है और अब यह तुम क्या कह रहे हो दादा। गरीबी में आटा गीला। मैं मर जाऊँगी भगवान गरीबी दे तो कम से कम दुख-दर्द तो न दे।"

रामदयाल दादा गौरी को समझाने लगे। दो-तीन स्त्रियाँ मँगरू को देखने आई थीं। वे अपनी-अपनी खिचड़ी अलग पकाने लगीं। एक बोली—"अरे रतन की माँ 'दइया-तोबा' करने से काम नहीं चलेगा जल्दी से महतो को बुलवाओ।"

तभी तत्क्षण ही दूसरी स्त्री उसके समर्थन में बोल उठी—"हाँ और क्या ? टाँग का मामला है तनिक भी नेक-बद हो गया तो मँगरू अपाहिज हो जायेगा।"

और तीसरी थी दकियानूसी विचारों की। उसने अपना सुर्रा छोड़ा दुनियादारी के लहजे में। हाथों की उँगलियाँ नचाती हुई वह बोली—"मुँह क्या देखती हो गौरी! जाओ किसी से कर्जा काढ़ो। ऐसे मौके पर तो आदमी कपड़े तक बेचकर अपनी जरूरत पूरी करता है। क्या करूँ। तुम तो लेकर फिर किसी का देती ही नही हो। नहीं तो बिन्दो दीदी से मैं अपनी जमानत पर तुम्हे रुपये अभी दिलवा देती।"

... ऐसी सहानुभूति मिल रही थी गौरी को। वह किसी को कुछ भी जवाब नही देती, माथे पर दोनो हाथ रखे बैठी अपनी दुनिया में खो रही थी।

थोड़ी देर बाद रामदयाल दादा जाने लगे और जाते-जाते कहते गये—"अगर तनिक भी लापरवाही की गौरी तो तुम्हारा आदमी जिन्दगी भर के लिए लँगड़ा हो जायेगा। महतो पाँच रुपये से कम नहीं लेगा।"

पाँच रुपये! गौरी के मस्तिष्क मे तूफान उठ खड़ा हुआ, सिर भन-भना कर रह गया। उसकी जिह्वा पर मूक शब्द दौड़ने लगे—पाँच रुपये! पाँच मुहरों से भी महँगे। वह बैठी रही हतबुद्धि-सी। मौखिक सहानुभूति प्रगट करने वाली पड़ोसिनें जा चुकी थीं और मँगरू कह रहा था—"गौरी तुम सोचती क्या हो? महतो को बुलाना कोई जरूरी नही। मैं ठीक हो जाऊँगा। तुम को एक बात बतला दी कि भगवान पर भरोसा रखो। गरीब-अमीर सबका वही मालिक है।"

गौरी सुनती रही। वह कुछ बोल नहीं पाई। मँगरू उसे समझाता रहा। लेकिन उसके अन्तर्द्वन्द्व ने उसका साथ नहीं छोड़ा। वह पति की बातें न सुन अपनी सोच रही थी कि मजबूरी में आदमी क्या नहीं करता। क्या हर्ज है सर्व एक बार बिन्दो को फिर खटखटाऊँ। रोकर उसके पैरों पर सिर रख दूँ और चिरौरी करूँ कि दुख-सुख मे तुम्हीं काम आती हो दीदी। पाँच रुपये दे दो मुझ दुखिया पर तरस खाओ।

गौरी देर तक विचारों में खोई रही। कभी वह साहस करती कि

विन्दो के पास अभी जाऊं और कभी मन कहने लगता कि नहीं विन्दो के पास जाने का कोई मतलब नहीं निकलेगा। क्या करूँ ? हर राह कांटों से भरी है। जहां तनिक गुंजाइश है वहीं आग जल रही है। बुद्धि कुछ काम नहीं करती। भगवान सब का भला करे। दुश्मन को भी ऐसे दिन न देखने पड़ें जैसे कि मैं देख रही हूँ।

उधेड़-बुन में ही दोपहर हो गई। गौरी कुछ भी तय नहीं कर पाई कि वह क्या करेगी ? रतन स्कूल से आ गया। वह भूखा था। उसने रोटी मांगी। गौरी ने उसे अंक में छिपा लिया और आंखें मूंद ईश्वर से विनय करने लगी।

: ३ :

पहली समस्या पांच रुपये प्राप्त करने की थी और दूसरी थी रोटी की। रतन भूखा था। वह रोटी मांग रहा था। गौरी बिलबिला उठी। उसका विवेक घोर असन्तुलन में बदल गया। तब ठीक दोपहर थी। वह निकल पड़ी घर से और उसके पांव जा कर रुके विन्दो के दरवाजे पर।

वर्षा की धूप इतनी तेज थी कि जमीन तवा-सी जल रही थी। उमस क्या, सड़ी गर्मी थी। सारा गांव जैसे उबला जा रहा था। हवा रूठी थी उसकी गति मन्द थी बहुत ही अधिक। अन्दर से दरवाजा बन्द था। गौरी ने कुंडी खटखटाई। बरोठे में विन्दो का नौकर लठैत ठाकुर जंगी-सिंह खुर्राटे ले रहा था। वह उठा बड़बड़ाता हुआ कि कौन है ? भरी दोपहर में आ धमका। ऐसी तो आग बरस रही है और उसे चैन नहीं। फिर जैसे ही उसने किवाड़ खोले, देखा सामने गौरी खड़ी थी दीन-मलीन-सी। वह अन्दर आने लगी तो उसने झिड़का और कहा भद्दे स्वर में—"चली आई मरने। अरे दोपहर को तो घर में बैठती।"

"दीदी से कुछ काम है। इसीलिए अभी आना पड़ा। नाराज क्यों होते हो जंगी भइया। मैं मुसीबत की मारी हूँ, मुझ पर तरस खाओ।"

गौरी की यह बात सुन जंगी प्रगल्भ हँसी हँसा और भोंड़े स्वर में

बोला—"तुम लोगों की माया भगवान भी नहीं जानते सबके सब बहुरूपिया हो। यहाँ आती हो तो मुसीबत की मारी होती हो और जब मैं जाता हूँ उगाहने तो अकड़कर बोलती हो। चलो निकलो, दीदी अभी सो रही हैं।"

गौरी आगे बढ़ रही थी। बंसी उसे पीछे लौटने के लिए बाध्य कर रहा था। तब तक सामने की बरसाती से आवाज आई—"कौन है बंसी? अरे किस पर बिगड़ रहे हो, यहाँ भेजो मेरे पास।"

गौरी की जान-सी मिल गई। बिन्दो की आवाज सुनकर वह आगे लपकी। तब तक बड़ी-बड़ी मूछों वाले उस जवान ने उसका मार्ग रोका और जवाब दिया अपनी मालकिन को—"कोई नहीं दीदी मेहतर की घरवाली है। मैं कहता रहा कि दीदी सो रही हैं; लेकिन यह अड़कर रह गई।"

बिन्दो की आवाज तेज ही नहीं हुई, बल्कि उसमें जहर का विष घुल गया। वह कर्कश स्वर में बोली—"क्या है गौरी? यहाँ आओ। वाकई तुम लोग बड़े मक्कार हो। रोटी का टुकड़ा देखते ही दुम हिलाते हो और फिर गुर्राते हो पागल कुत्ते की तरह। रात को ही जवाब दे दिया था कि मैं रुपये नहीं दे सकती। फिर इस समय क्या करने आई हो?"

बिन्दो की बात पूरी होते-होते गौरी उसके पास पहुँच गई और बंसी अपनी बाईं तरफ की बिन्दा भाग फिर चारपाई पर लेट आँखें मूँद सोने का उपक्रम करने लगा।

बिन्दो पलंग पर बैठी थी। पास ही स्टूल पर रखे पान-दान से निकाल गिलौरी मुँह में दाबी और पहली पीक कलई के उगालदान में थूककर बोली—"बड़ी जल्दी हो गौरी? कहो कैसे आई? तीसरे पहर भी आ सकती थी। बंसी से उलझने की क्या जरूरत थी।"

"दीदी! जिनका पेट भरा है उन्हें दिन में भी नींद आती है और जो भूखे हैं उनकी रात एक युग की तरह हो जाती है। मेरा रतन भूखा

है। घर में अन्न का एक दाना नहीं है। रामदयाल दादा कह गये हैं कि जमालपुर में रामचरण महतो को बुलवाओ। उनकी (मँगरू) टाँग की हड्डी टूट गई है। मुझे सेर भर धान और दो दीदी। कल मजदूरी पर जाऊँगी जो मिलेगा तुम्हें दे दूँगी। महतो की फीस पाँच रुपिया है। तुम्ही मेरा उद्धार करोगी दीदी, इसीलिये आई हूँ।" यह कह गौरी दोनों हाथों में आँचल थाम फूट-फूट कर रोती हुई फिर बोली—"दीदी मुझे सहारा दो। मैं मर जाऊँगी। मेरा लाल भूखा है। मैं तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ।" यह कहने के साथ ही गौरी ने माथा टेक दिया बिन्दो के चरणों में।

बिन्दो एक बालिश्त पीछे हट गई और गौरी के सिर पर लात मारती हुई बोली—"मैं कोई भगवान हूँ क्या? जैसा नसीब वैसा फल। जैसे कर्म हैं वैसा फल भोगो। अपनी भाग्य मरो अपनी भाग्य जियो मुझ से क्या मतलब। मँगरू लँगड़ा हो जाये उसका कुछ भी हो मैं एक पाई नहीं दूँगी।"

अब गौरी की शक्ल भयानक हो गई। वह एक झटके के साथ उठकर खड़ी हुई और लाल-लाल आँखें करके तेज गले से बोली—"बस! बहुत कह चुकी दीदी! मैं तुम्हारी इज्जत करती हूँ। तुमने मेरे सिर पर लात मार कर मेरे सुहाग का अपमान किया है, मेरे आदमी को बुरा-भला कहा है कोई दूसरा होता तो मैं मुँह नोच लेती, उसका खून पी लेती।"

अब बिन्दो खिसिया गई। वह उछलकर कूद पड़ी पलँग से और गला फाड़कर चिल्लाई—"अरे जंगी कहाँ मर गया जाकर। निकालो इस हरामजादी को घर से, सिर पर चढ़कर बोल रही है।"

जंगी तीर-सा आकर वहाँ खड़ा हो गया। बिन्दो बड़बड़ा रही थी—"मुँह लगाई डोमनी गावे ताल बेताल, जिसका खाती है उसी को गालियाँ देती है। औरत जाति है इसलिये छोड़ दिया वर्ना जंगी से अभी तेरी बोटी-बोटी कटवाती।"

उस निर्दयी ठाकुर ने ताव में आकर गौरी की नरम कलाई पकड़ ली और बेरहमी से खींचता हुआ उसे बाहर ले चला। गौरी की कलाई खून से नहा गई। चूड़ियां मसमसाकर टूट गईं वे चुभ गईं पहुँचे में और गौरी आँचल से लाल कलाई पोंछती हुई घर की ओर चल दी।

गौरी घर आई उसने देखा रतन बाप की छाती पर सिर रखकर सो गया है और रूपा सो रही है एक कोने में पड़ी। वह कई क्षण तक किंकर्तव्यविमूढ़ावस्था में आँगन की चौखट पर खड़ी रही। उसके मस्तिष्क में तीर छूट रहे थे, गोलियां चल रही थीं, संग्राम छिड़ा था समस्याओं का। वह हत-प्रभ हो गई। तभी मंगरू कराहा और उसने सुना कि वह पानी मांग रहा है। वह अचकचा गई उलझन में पड़ गई कि खाली पेट पानी कैसे पिला दूँ। न जाने कैसे और किस धुन में वह कुयें की जगत पर पहुँची, एक डोल पानी भरा। फिर लोटा भर दोनों हाथों पर रख पति की ओर चली। उसके कलेजे में सुइयाँ चुभ रही थी। वह एक कदम चलती, सोचती और ठिठक कर रह जाती। सहसा सामने के आले पर उसकी दृष्टि पड़ी। वहाँ पत्थर की काली कुंडी में पिसा हुआ नमक रखा था जब उसने कुंडी उठाई तो उसका कलेजा कांपा और आँखें भर आईं।

पति के पास पहुँच गौरी ने कुंडी आगे बढ़ा दी और नीची दृष्टिकर क्षीण स्वर में बोली—"लो इसमें से एक चुटकी मुँह में डाल लो फिर पानी पियो। मैं नहीं जानती थी कि ऐसे भी दिन आयेंगे। जब हम लोगों को नमक फाँककर पानी पीना होगा।"

"भगवान की यही इच्छा है। अफसोस क्यों करती हो गौरी। यह नमक नहीं अमृत है।" यह कहकर मंगरू ने नमक फाँक पानी पिया। तब तक उसकी निगाह पड़ गई पत्नी के पहुँचे पर। वह लाल हो रहा था। जहाँ चूड़ियाँ चुभी थी वहाँ खून की बूँदें छलछला रही थी। वह चौंक उठा और घबड़ाहट भरे स्वर में जल्दी-जल्दी पूछने लगा—"यह क्या गौरी! हाथ में चोट लग गई क्या! अरे सब चूड़ियां टूट गईं।

कहीं गिर पड़ी थीं क्या ?"

इस पर गौरी रो दी और रोते-रोते बोली—"गई थी विन्दो के यहाँ कुछ जिन्स और रुपये उधार लेने। वहाँ उसने ऐसी बात कह दी जो कलेजे के आर-पार हो गई। मुझे भी गुस्सा आ गया। मैंने जैसे ही मुंह खोला और दो एक बातें कहीं वैसे ही उसने जंगी को बुलाया और कहा निकाल दो इसे बाहर। जंगी ने मेरा पहुंचा पकड़ कलाई मरोड़ दी। चूड़ियां टूट गईं वही खून बह रहा है।"

मंगरू की आंखों में खून उतर आया। विन्दो की निर्दयता और जंगी की उद्दंडता पर उसे क्रोध आ रहा था, वह जोश से भर रहा था। और गौरी बता रही थी सविस्तार दोपहर की बातें, साथ ही कल रात की भी घटना जिसके लिए उसने पति से बहाना किया था। मंगरू को जब सहा नहीं हुआ तो वह बोल उठा छाती पर हाथ मारकर—"सच कहता हूं गौरी मुझे अच्छा हो लेने दो। मैं जंगी को जी भरकर के कुच-लूंगा। उसने तुम्हारी चूड़ियां तोड़ी हैं मैं उसकी गर्दन तोड़ दूंगा। नीच को शर्म भी नहीं आई औरत के साथ जल्लादी करते और विन्दो का तो बहुत ही बुरा हाल होगा। गरीबों की हाय का पैसा उसे हजम नहीं होगा। देख लेना कोढ़ फूटेगा, कीड़े पड़ेंगे। लोग उससे घिनायेंगे और तब यह जंगी भी उसका साथ नहीं देगा।"

"छिः छिः अपने मुंह से किसी को बुरा क्यों कहते हो। अच्छा और बुरा फल तो देने वाला भगवान है। अपनी-अपनी करनी जैसा ही सब को बदला मिलता है तुम अपनी जबान बेकार गन्दी करते हो। मुझे अच्छी तरह याद है कि जब मैं छोटी थी तो मेरे गांव में महात्मा गांधी आये थे। उनका लेक्चर हुआ था तब उनकी एक बात को सुनकर सब लोग जोर से हंस पड़े थे कि जो अपने थप्पड़ मारे तो उससे बिगड़ो नहीं फौरन ही दूसरा गाल सामने कर दो। और कहो, लो भाई इस पर भी मारो तब मैं कुछ नहीं जानती थी; लेकिन अब समझती हूं कि नेकी उसी को कहते हैं। समाई करो। आखिर भगवान कब तक दुःख देंगे।"

मंगरू हँस पड़ा और बोला—"गौरी न जाने तुम में कौन-सा जादू है कि आग को पानी कर देती हो। खैर देखा जायेगा। आदमी को बुराई का बदला मिलता जरूर है, वह किसी तरह मिले, किसी रूप में मिले। रतन आया था रोया और सो गया। उसे क्या खिलाओगी ? गाँव में तो हमें कोई एक पैसा भी उधार नहीं देगा।"

"यही मैं भी सोचती हूँ। अगर कहो तो गाँव के बाहर वाले झावर पर जाऊँ, नारी तोड़ लाऊँ और नार गुजेरी कोंके निकाल लाऊँ। बस नारी के धोधे (लड्डू) बन जायेंगे और नार गुजेरी पानी में उबालकर खिलाऊँगी रतन को। मैंने तय कर लिया है कि गाँव में अब किसी के सामने हाथ नहीं फैलाऊँगी।"

गौरी के मुँह से यह सुन मंगरू को ऐसा लगा कि वह साक्षात् देवी भगवती का रूप है। कितनी हिम्मत है उसमें हर काम को सिर पर उठा लेती है और उसे कठिन नहीं आसान समझती है। वह कुछ बोला नहीं केवल मुस्कराकर रह गया। गौरी उसका आशय समझ गई। उसने एक बार सोते हुए रतन तथा रूपा की ओर देखा फिर एक टाट का झोला ले निकल गई घर से बाहर। अब तीसरा पहर हो रहा था।

गौरी झावर पर पहुँची। वह गाँठों तक पानी में उतरी नारी तोड़ी, कोंके और नार गुजेरी निकाली। फिर सामान झोले में भर मगन मन चल दी घर की ओर तभी उसके अन्तर में कचोटन हुई और ध्यान आया कि रामचरण महतो पाँच रुपये लेगा। खाने का इन्तजाम तो हो गया। आज रात आराम से कटेगी। सवेरे का भगवान मालिक है, लेकिन उन की टाँग की हड्डी टूटी है। उसके लिए कुछ भी नहीं हुआ। यहाँ से है ही कितनी दूर। चार खेतों का रास्ता होगा। सामने ही जमालपुर दीख पड़ रहा है। चलूँ महतो को अपने साथ लिवाती लाऊँ।

यह सोच गौरी जमालपुर की ओर बढ़ी। वह आगे बढ़ रही थी और उसके पाँव पीछे लौट रहे थे। चिन्ता की डोर बार-बार उसे पीछे खींचती। उसका अन्तःकरण कहता कि कहाँ जा रही

तो नहीं हो गई। तुम्हारे पास रुपये कहां हैं महतो को देने के लिए ? किस बल-बूते पर जमालपुर जा रही हो !

लेकिन गौरी को अपने पर विश्वास था कि वह खुशामद करेगी महतो की। धीरे-धीरे उसे रुपये दे देगी, हाथ जोड़ मिन्नत कर उसे घर लिवा लायेगी। इसी आशा और विश्वास की बुनियाद पर वह लपकती चली जा रही थी। जब वह जमालपुर के धूरे पर पहुँची तो पश्चिम का आकाश लाल हो रहा था। बसेरों पर जाती हुई चिड़िया चीं-चीं कर रही थीं। दिशायें धूमिल हो रही थीं और खेतों की लम्बी पांति, हरा परि-धान पहने अत्यन्त सुहावनी लग रही थी। सूरज का सात घोड़ों वाला रथ अपनी गति अवरुद्ध कर चुका था। धीरे-धीरे अँधेरा उतर रहा था; किन्तु अभी उजाले की आभा शेष थी।

: ४ :

पूछते-पूछते गौरी रामचरण महतो के दरवाजे पर पहुँची। उसने आवाज दी। एक बुढ़िया बाहर आई। शायद वह महतो की मां थी। उसने बताया कि महतो गांव में ही है। किसी की चौपार में बैठा होगा। गौरी अन्दर जाकर आंगन में बैठ गई। बुढ़िया ने एक आदमी को भेजा कि वह जाकर महतो का पता करे।

गौरी ने देखा कि महतो के घर की हालत अच्छी है। घर कच्चा नहीं, पक्की ईंटों का बना है। कुयें की जगत भी पक्की है। उसकी जोरू सोने-चांदी के गहने पहने है। बच्चों के गले में भी चांदी के कठुले पड़े हैं। सबका पहनावा औसत दर्जे का है। जब महतो उसके सामने आया उसने देखा कि वह पूरे पांच हाथ का लम्बा जवान है। उसका बदन गठीला मूंछें रोबदार और नुकीली। लम्बी धोती और सफेद चिकन का कुरता पहना था वह। जिसमें चांदी की जंजीर-लगी बटनें लगी थी। उसके पैरों में देहाती चमरौधा जूता नहीं, बूट जूते थे, उन पर लाल पालिश हो रही थी और वे आधे से अधिक कीचड़ में सन रहे थे।

महतो गौरी की ओर एकटक देखता रह गया। आँगन में सामने खूंटी पर टंगी लालटेन जल रही थी। उसका प्रकाश पड़ रहा था गौरी के चेहरे पर। रूप की खान फटी, पुरानी और मैली धोती में लिपटी वह लग रही थी साक्षात् अप्सरा। उसकी सुन्दरता बेजोड़ थी। महतो कुछ सोच रहा था कि तब तक गौरी ने उसके पैर पकड़ लिये और रोकर बोली —"मुझे उबार लो महतो। मैं तुम्हारे दरवाजे भीख माँगने आई हूँ। मैं गरीब हूँ। मेरे पास देने के लिए कुछ भी नहीं है। मेरा घर वाला पेड़ पर से गिर पड़ा। उसकी टाँग टूट गई है। चलो, जल्दी चलो महतो दादा मैं दुखियारी हूँ मेरा दुःख तुम्हीं दूर करोगे।"

महतो असमंजस में पड़ गया। उसके मन का स्वार्थ आँखों में प्यास बन कर उतर आया और वह ललचाई दृष्टि गौरी पर डालता हुआ बोला —"अरे-अरे ! तुम कौन हो, कहाँ रहती हो ? मैं बिना नजराना लिये कहीं नहीं जाता। मैं···।"

अभी महतो की बात पूरी भी नहीं हो पाई थी कि बुढ़िया बीच में बोल उठी—"वाह ! अच्छी आई। कौन नहीं जानता है रामचरण महतो को। घर बैठे पुजता है मेरा लड़का। जाओ रुपये ले आओ। बिना रुपये के दुनिया का कोई काम नहीं चलता।"

इस पर गौरी रो-रोकर अपनी कहानी सुनाने लगी। महतो का मन फिसला उसमें विकार आया। तभी वाणी मीठी हो गई उसकी मिश्री की तरह। वह बोला—"अच्छा तो इस समय मुझे माफ करो, सबेरे चलूँगा। तुम पार्वतीपुर में रहती हो न। मैं सबेरे आ जाऊँगा। जाओ तब तक खूब सेंकना टाँग को, और देखो ! नमक मत देना खाने को। इसमें···।"

"उसमें क्या होगा महतो ? मैंने तो उन्हें (सेंधा) नमक दिया था आज ही और दोपहरै को।" गौरी के चेहरे पर घबड़ाहट की रेखायें दौड़ रही थीं। उसकी स्थिति अजीब-गरीब थी।

हँसकर महतो ने कहा—"चलो कोई बात न..ो आगे मत देना बस ! अब तुम जाओ।"

"लेकिन मैं तुम्हें लेने आई हूँ महतो दादा। मेरे बच्चे भूखे सो गये थे वे जागे होंगे, बिलबिला रहे होंगे। कहो तो कि कल से मैं मजदूरी पर जाऊँगी रुपये चुका दूंगी तुम्हारे। मुझे ऐसे न लौटाओ। मैं बहुत बड़ी उम्मेद लेकर आई हूँ। रहम करो महतो दादा। मेरे आदमी की हड्डी ठीक कर दो ? यह एहसान आपका मैं जिन्दगी भर नहीं भूलूंगी।"

गौरी बलर-बलर रो रही थी। महतो चुपचाप खड़ा था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करे ? उसके मन में न जाने कैसी-कैसी बातें आ रही थीं और जा रही थीं और वह मन ही मन बार-बार दोहरा रहा था कि यह औरत कितनी सुन्दर है। उसको मौन देख गौरी ने दुःखी स्वर में फिर अपनी माँग पेश की और कहा—"फिर क्या कहते हो महतो दादा ? क्या जाऊँ मैं ? भगवान तुम्हारा भला करेंगे। मेरे साथ चले चलो। मेरे पास दौलत नहीं, दुआ है महतो। ईश्वर दिन-दूनी और रात-चौगुनी तरक्की दे। तुम्हारी औलाद खूब फले-फूले। तुम्हारा घर घी और दूध से भरा रहे। अगर गरीबी न होती तो पैदल नहीं तुम्हें परोहन (बैलगाड़ी) पर ले चलती। मगर मजबूरी है। इस समय मेरा हाथ बिल्कुल खाली है। बस अब रात होने का ख्याल न करो। चलो मैं तुम्हारे पांव पड़ती हूँ महतो। मैं दुखियारी हूँ। मुझे अपनी दया की थोड़ी-सी भीख दे दो। आदमी ही आदमी के काम आता है दादा ! मेरे लिए तुम भगवान से भी बढ़कर हो। मैं अकेली नहीं तुम्हे साथ लेकर जाऊँगी।"

अब महतो इन्कार नहीं कर सका। वह बोला—"अच्छा चलो अब तुम्हें मैं निराश नहीं कर सकता। जल्दी करो, क्योंकि मुझे अभी लौटना भी है।"

गौरी फूल-सी खिल उठी। वह चल पड़ी महतो के पीछे-पीछे। तब रात हंस रही थी, चांद मुस्करा रहा था और चांदनी बिछ रही थी पथ पर सफेद चांदी जैसी। हवा डोल रही थी मन भावन होकर और सारसों की जोड़ियां खेतों में विचर रही थीं, कंड़ँ-कंड़ाँ कंड़ँ-कंड़ाँ करती हुई। ये जोड़ियां जा रही थीं झाबर की ओर धान के खेतों से गुजरती हुई।

जहाँ धान के नन्हें-नन्हें पौधे सिर उठाये खड़े थे पानी मे । महतो ने कहा —"लाओ झोला मुझे दे दो तुम थक गयी होगी ।"

"नही थकी नही, चले चलो दादा कदम बढाये मुझे बड़ी देर हो गई है ।" *यह कहकर गौरी लपकने लगी, उसका आँचल उड़ने लगा हवा मे ।*

महतो ने पीछे घूमकर देखा । चाँदनी पड़ रही थी गौरी के मुंह पर। उसका चेहरा चमक रहा था । उसके मुख की कान्ति दीप्ति हो रही थी । वह चुपचाप चल रही थी । राह बहुत कट गई, थोड़ी रह गई थी और महतो को लग रहा था कि वह अभी-अभी गाँव मे चला हूँ, पार्वतीपुर बहुत दूर है । सहसा ऊपर से कोंकें निकली कें-कें करती हुई । ये बरसाती चिड़ियाँ रात मे निकली थी आमोद-प्रमोद के लिए । दोनों की दृष्टि ऊपर उठ गयी । गौरी बोली—"आज कोंकें निकली हैं । इसका मतलब मौसम अच्छा रहेगा । महतो दादा बता सकते हो ये कोंकें किस राजा की हैं ? सुना है कि ये पहाड पर से आती हैं, किसी राजा के यहाँ कैद रहती हैं और बरसात के ही मौसम में छोडी जाती है; वह भी दिन मे नही चाँदनी रात में ।"

महतो अपनी दुनिया में खो रहा था । उसे गौरी की बातें रुचिकर नही लगी । वह दूसरी बात कहने लगा—"छोडो इस पचड़े को कि कोंकें किसकी हैं, कहाँ से आई हैं और कहाँ जा रही है । यह बताओ कि तुम रात को घर से बाहर निकलते डरती नही । तुम्हे डर नही लगता । औरतें तो सूरज डूबने के बाद घर से निकलते कापती है । और तुम····।"

"मैं डरती सिर्फ भगवान से हूँ दादा आदमी से नही । और फिर जरूरत अन्धी होती है वह रात मे क्या आँधी और तूफान मे भी निकलने को मजबूर कर देती है ।"

गौरी की यह बात सुन रामचरण महतो मन ही मन सोचने लगा कि औरत दिलेर मालूम होती है। अब पार्वतीपुर आ गया था । दोनों गाँव मे प्रविष्ट हुए । गौरी ने देखा कि रतन दरवाजे पर खड़ा है । वह दौड़कर माँ से लिपट गया और कहने लगा रुआँसा होकर—"*तुम कहाँ*

चली गई थीं माँ ? चलो जल्दी से मुझे खाना दो अब भूखा नहीं रहा जाता।"

गौरी ने जल्दी से झोले में से एक नार गुजेरी निकाली। वह फोड़ कर रतन को देती हुई बोली—"लो खाओ।" और यह कहने के साथ वह अन्दर प्रविष्ट हुई। आंगन में चाँदनी फैली थी। मँगरू कराह रहा था, रूपा रो रही थी। कोठरी में अन्धेरा था। आंगन में खड़े महतो के सामने वह मोढ़ा डालती हुई बोली—"लो बैठो महतो दादा मैं अभी दिया जलाती हूँ।"

महतो बैठ गया और गौरी कोठरी में जा जल्दी-जल्दी दिया जलाने का उपक्रम करने लगी।

: ५ :

महतो ने जब मँहरू की टाँग देखी तो वह हँसकर बोला गौरी से—"अरे किसने कह दिया तुमसे कि हड्डी टूट गई है। वह टूटी नहीं, बल्कि अपनी जगह से हट गई है। अभी बैठाये देता हूँ। चन्द दिनों में ही ठीक हो जायेगी। तुम चिन्ता क्यों करती हो।"

गौरी को जैसे मुँह माँगी मुराद मिल गई हो। वह मगन होकर दोनों हाथों से आँचल फैला भगवान से विनय करने लगी। उसकी आँखें मुंद रही थीं और वह कह रही थी धीरे-धीरे—"यह सब तुम्हारी ही मेहरबानी है भगवान। तुम्हीं अन्धे को आँखें देते हो। तुम्हीं उसकी रोशनी छीनते हो। मेरे घर का चिराग रोशन बना रहे। मेरा सुहाग अचल रहे बस दया बनाये रखो भगवान ! दुनिया में गरीबों का कोई नहीं एक तुम ही तो हो।"

इसके बाद गौरी आजिजी करने लगी महतो की। वह अपने काम में व्यस्त था। कराहने की अपेक्षा अब मँगरू जोर-जोर से चिल्लाने लगा; क्योंकि महतो उसके पाँव का पन्जा पकड़ कर झिटक रहा था। जोर से एक चट्ट की आवाज हुई और मँगरू चिल्ला पड़ा पूरी ताकत के साथ—

"हाय मर गया !"

महतो हँस पड़ा और गौरी की ओर उन्मुख होकर विजय गर्व से मुस्कराता हुआ बोला—"बस हड्डी बैठ गई। अब इसको मैं रोज आकर मिलूँगा, दवाई लगाऊँगा। तुम खूब सेंक करो। भगवान ने चाहा तो जल्दी ही आराम हो जायेगा, यही आठ-दस दिन में।"

महतो ने दवाई लगा मँगरू की टाँग पर पट्टी बाँध दी और जब वह चलने लगा तो गौरी दरवाजे तक भेजने आई। चौखट पर आ वह कहने लगी विनयी स्वर में—"महतो दादा मैंने बहुत तकलीफ दी तुम्हें। कल दिन में ही आ जाना। मैं राह देखूँगी। अगर दिन छिप गया और तुम न आए तो मैं रात को नहीं गिनूँगी, दौड़ी आऊँगी। बस समझ लो दादा कि मेरी नाव मँझधार मे है।"

महतो पीछे घूमा। वह कई क्षण तक एकटक देखता रहा गौरी की ओर, फिर बोला—"मैं जो कह देता हूँ उसे जरूर करता हूँ। मैं आऊँगा इससे बेफिक्र रहो। बस अब चलूँ देर बहुत हो रही है।" यह कहने के बाद वह चल पड़ा। गौरी खड़ी देखती रही। वह मन ही मन दुआयें दे रही थी महतो को कि वह नेकदिल इन्सान है। भगवान उसकी इज्जत मे चार चाँद लगाये। गंगा-जमुना जैसा उसका यश फैले।

और महतो बार-बार पीछे घूमकर देखता। वह सोच रहा था, अपनी राह तय करता हुआ कि मँगरू की औरत लाखों मे एक है। गुदड़ी मे यह लाल अब तक कैसे छिपा रहा। किसी ने देखा नहीं। सुना जाता है कि पैसे वालो की आँखें जमीन और आसमान की उस तह को भी देख लेती हैं जिनमे साक्षात् भगवान वास करते हैं। मँगरू कोयला है और उसकी जोरू हीरा। उस पर एहसान करके ही उसको अपना बनाया जा सकता है। वह जब इस बोझ मे दब जायेगी तो वही बोल बोलेगी जो उसे मजबूरी बोलायेगी। मैं कल जल्दी ही जाऊँगा उसके यहाँ। वह सुन्दर ही नहीं महा सुन्दर है उसका रूप अनोखा है, एकदम निराला।

× × ×

उस रात मँगरू पूरी नींद सोया। उसके दर्द नहीं हुआ। गौरी जब तक सो नहीं गई, रुई के पहल से उसकी टाँग सेकती रही।

सवेरे गौरी मजदूरी पर न जा ऊसर गई, नार गुजेरी कोंके तोड़ लाई। घर में आ उसने नारी के थोंधे बनाए। उस दिन इतवार था, रतन की छुट्टी थी। उसने भर पेट खाना खाया। मँगरू ने भी क्षुधा शान्त की और गौरी वह पूरे दिन प्रसन्न रही। तीसरे पहर महतो आया। टाँग की मालिश कर दवा बाँध चला गया। रात हुई। सवेरे वह निकली मजदूरी के लिए। कोरी-कोरी वापस आई। एक जगह काम मिला। वह घर पर ही बैठ कर करने वाला था। उरद की दाल दलनी थी, पूरे डेढ़ मन। उसमें एक पसेरी उरद मिलने की मजदूरी थी। वह बैठ गई दाम पर। दरतिया घुर-घुर चल रही थी। ऊपर का पाट नाच रहा था कीली पर, गौरी खूँटा पकड़े थी। वह गा-गाकर दाल दल रही थी।

मँगरू अपने मन में मगन था। रतन उसके पास बैठा खेल रहा था रूपा के साथ। रूपा बाल क्रीड़ा कर रही थी। मँगरू सोच रहा था कि गौरी मर्दों जैसी हिम्मत रखती है। वह तनिक भी नहीं घबड़ाती। देखो जमालपुर जाकर महतो को लिवा लाई। कुछ भी खाने को नहीं रहा तो नार गुजेरी और कोंके निकाल लाई। आज उसे अच्छी मजदूरी मिली है, इसीलिए बहुत खुश है। भगवान उस की यह खुशी बनाए रहे। वह मगन रहे। उसे कभी कोई दुःख न मिले।

सहसा कड़ी धूप विलीन हो गई। गरम हवा ठंडी हो गई और काले बादलों ने आकर ढक लिया सूरज को। अँधेरा-सा झुक आया और नन्हीं-नन्हीं बूंदें गिरने लगी आँगन में। मँगरू ने संतोष की साँस ली और उसके मन ने कहा कि चलो कुछ राहत मिली। बड़ी उमस थी मौसम ठण्डा हो गया।

लेकिन तब तक अरर बाँधकर पानी बरसने लगा। गौरी घबड़ा गई; क्योंकि कोठरी चूने लगी जिसमें वह बैठी थी। वह जल्दी-जल्दी

उरद समेटने लगी। अभी वह थोड़े ही उरद उठा पाई थी कि सहसा छत का पनारा फट गया और उस दाने से पानी बह कर अन्दर आने लगा। सारी कोठरी में पानी ही पानी भर गया। दाल और उरद सब पानी में समा गये। गौरी का कलेजा धक्-धक् करने लगा कि दाल उरद मिट्टी में मिल गये। दूसरे का नुकसान वह कैसे पूरा करेगी। पानी में हाथ डाल उरद निकालने लगी। तभी कोने की एक धन्नी टूटकर नीचे आ गिरी। वह चीखी और चिल्लाकर बाहर भागी। अर-र धम्म उसके आँगन में आते ही कोठरी की छत नीचे आ गई।

गौरी पति की कोठरी की ओर भागी और जाते ही जमीन पर कटे पेड़ की भाँति गिर पड़ी। उसके मुँह से निकला—"गजब हो गया। अब मैं कौन-सा मुँह दिखलाऊँगी नरबदी जिजिया को। उसके उरद माटी में मिल गये।"

मँगरू ने करवट बदली और पत्नी की ओर देखता हुआ दुःखी स्वर में बोला—"सबर करो गौरी। भगवान ने हमें गुड़ दिखला कर ईंट मारी है। पाँच सेर उरद मिलते मजदूरी के, अब उसके पचगुने देने पड़ेंगे डाँड़ में। लोग कहते हैं कि जब ऊपर वाला रूठता है तो मुँह से कौर भी छीन लेता है। गरीब समाई के अलावा और कर ही क्या सकता है।

गौरी उठी, संयत हुई। वह फिर गई आँगन में और देखा कोठरी को जिसकी छत गिरी थी। उसमें पानी भर रहा था। बरसा हो रही थी इतने जोर की कि कान नहीं दिये जाते। रतन ससेटा-सा खड़ा था कोठरी की चौखट पर। वह कह रहा था—"माँ भीतर आ जाओ जल्दी से, नहीं तो दीवाल भी गिर पड़ेगी।"

गौरी अन्दर आई और मत्थे पर दोनों हाथ रखकर बैठ गई। तभी रूपा रोने लगी। उसने उसे उठा लिया और आँचल में छिपा दूध पिलाने लगी। उसके कपड़े गीले थे। रूपा का रोना बन्द नहीं हुआ। तब कहा जोर देकर मँगरू ने—"अरे गौरी कपड़े तो बदल डालो। रूपा इसलिए नहीं चुप हो रही है।"

उस रात मँगरू पूरी नींद सोया। उसके दर्द नहीं हुआ। गौरी जब तक सो नहीं गई, रुई के पहल से उसकी टाँग सेकती रही।

सवेरे गौरी मजदूरी पर न जा झावर गई, नार गुजेरी कोंके तोड़ लाई। घर में आ उसने नारी के घोंघे बनाए। उस दिन इतवार था, रतन की छुट्टी थी। उसने भर पेट खाना खाया। मँगरू ने भी क्षुधा शान्त की और गौरी वह पूरे दिन प्रसन्न रही। तीसरे पहर महतो आया। टाँग की मालिश कर दवा बाँध चला गया। रात हुई। सवेरे वह निकली मजदूरी के लिए। कोरी-कोरी वापस आई। एक जगह काम मिला। वह घर पर ही बैठ कर करने वाला था। उरद की दाल दलनी थी, पूरे डेढ़ मन। उसमें एक पसेरी उरद मिलने की मजदूरी थी। वह बैठ गई दाम पर। दरतिया घुर-घुर चल रही थी। ऊपर का पाट नाच रहा था कीली पर, गौरी खूँटा पकड़े थी। वह गा-गाकर दाल दल रही थी।

मँगरू अपने मन में मगन था। रतन उसके पास बैठा खेल रहा था रूपा के साथ। रूपा बाल क्रीड़ा कर रही थी। मँगरू सोच रहा था कि गौरी मर्दों जैसी हिम्मत रखती है। वह तनिक भी नहीं घबड़ाती। देखो जमालपुर जाकर महतो को लिवा लाई। कुछ भी खाने को नहीं रहा तो नार गुजेरी और कोंके निकाल लाई। आज उसे अच्छी मजदूरी मिली है, इसीलिए बहुत खुश है। भगवान उस की यह खुशी बनाए रहे। वह मगन रहे। उसे कभी कोई दुःख न मिले।

सहसा कड़ी धूप विलीन हो गई। गरम हवा ठंडी हो गई और काले बादलों ने आकर ढक लिया सूरज को। अँधेरा-सा झुक आया और नन्हीं-नन्हीं बूँदें गिरने लगी आँगन में। मँगरू ने संतोष की साँस ली और उसके मन ने कहा कि चलो कुछ राहत मिली। बड़ी उमस थी मौसम ठण्डा हो गया।

लेकिन तब तक अरर बाँधकर पानी बरसने लगा। गौरी घबड़ा गई; क्योंकि कोठरी चूने लगी जिसमें वह बैठी थी। वह जल्दी-जल्दी

उरद समेटने लगी। अभी वह थोड़े ही उरद उठा पाई थी कि सहसा छत का पनारा फट गया और उस दाने से पानी बह कर अन्दर आने लगा। सारी कोठरी में पानी ही पानी भर गया। दाल और उरद सब पानी में समा गये। गौरी का कलेजा धक्-धक् करने लगा कि दाल उरद मिट्टी में मिल गये। दूसरे का नुकसान वह कैसे पूरा करेगी। पानी में हाथ डाल उरद निकालने लगी। तभी कोने की एक धन्नी टूटकर नीचे आ गिरी। वह चीखी और चिल्लाकर बाहर भागी। अर-र धम्म उसके आँगन में आते ही कोठरी की छत नीचे आ गई।

गौरी पति की कोठरी की ओर भागी और जाते ही जमीन पर कटे पेड़ की भाँति गिर पड़ी। उसके मुंह से निकला—"गजब हो गया। अब मैं कौन-सा मुंह दिखलाऊँगी नरवदी जिजिया को। उसके उरद माटी में मिल गये।"

मँगरू ने करवट बदली और पत्नी की ओर देखता हुआ दु खी स्वर में बोला—"सबर करो गौरी। भगवान ने हमें गुड़ दिखला कर ईंट मारी है। पाँच सेर उरद मिलते मजदूरी के, अब उसके पचगुने देने पड़ेंगे डाँड़ में। लोग कहते हैं कि जब ऊपर वाला रूठता है तो मुंह से कौर भी छीन लेता है। गरीब समाई के अलावा और कर ही क्या सकता है।

गौरी उठी, संयत हुई। वह फिर गई आँगन में और देखा कोठरी को जिसकी छत गिरी थी। उसमें पानी भर रहा था। बरसा हो रही थी इतने जोर की कि कान नहीं दिये जाते। रतन ससेटा-सा खड़ा था कोठरी की चौखट पर। वह कह रहा था—"माँ भीतर आ जाओ जल्दी से, नही तो दीवाल भी गिर पड़ेगी।"

गौरी अन्दर आई और मत्थे पर दोनो हाथ रखकर बैठ गई। तभी रूपा रोने लगी। उसने उसे उठा लिया और आँचल मे छिपा दूध पिलाने लगी। उसके कपड़े गीले थे। रूपा का रोना बन्द नही हुआ। तब कहा जोर देकर मँगरू ने—"अरे गौरी कपड़े तो बदल डालो। रूपा इसलिए नही चुप हो रही है।"

गौरी ने कपड़े बदले और पति के पास आकर बैठ गई। वह दुःख से भरी थी। उसके मुंह से बोल नहीं निकल रहा था। पानी बरस रहा था खूब तेजी से और हवा बेंड़ी होकर बह रही थी।

× × ×

सभी व्यक्ति एक जैसे नहीं होते। रुचि वैभिन्य मानव जाति की एक विशेषता है। तभी सब एक-दूसरे से पृथक हैं। जैसी बिन्दो थी नरबदी जिजिया वैसी नहीं। उनके सामने जब गौरी जाकर गिड़गिड़ाई और रोई तो वे बोलीं कि कोई हर्ज नहीं गौरी, उरद खराब हो गये हो जाने दो। तुम से डांड़ नहीं लूंगी। तुम खुद ही मुसीबत में हो।

गौरी को जान-सी मिल गई। वह छाती ठोंक कर बोली—"बड़ी मेहरबानी है जिजिया मेरे पास जब भी होगा तुम्हारा नुकसान पूरा करूंगी। भगवान् तुमको खूब दे।"

नरबदी जिजिया ने गौरी को बहुत समझाया। उसे ढाढ़स बँधाया। गौरी घर आई। उसने पति को सारी बातें बतलाईं। मँगरू ने एक लम्बी साँस ली और कहने लगा—"गौरी दुनियां में सभी लोग जल्लाद नहीं होते। नरबदी जिजिया ने बहुत बड़ी समाई की। मगर कहीं बिन्दो का इतना नुकसान हो गया होता तो वह जमीन-आसमान एक कर देती। तहलका मचा देती, हम लोगों को चैन से नहीं बैठने देती।"

दम्पति में नरबदी के प्रति उस दिन देर तक बातें होती रहीं। दोनों यद्यपि घबड़ाये हुए थे; लेकिन उन्हें न तो उलझन थी और न किसी प्रकार की अशान्ति।

दिन चल रहे थे। रामचरण महतो नित्य आता। वह मँगरू की टांग की मालिश कर दवा बाँध चला जाता। मँगरू को दिन पर दिन आराम हो रहा था, धीरे-धीरे वह उठकर बैठता लाठी टेककर खड़ा होता। चल अभी नहीं पाता था, क्योंकि ऐसा करने में उसके पैर की सारी नसें तड़क कर रह जातीं।

गौरी अभी तक रामचरण महतो को एक पैसा भी नहीं दे पाई थी।

इसकी उसे चिन्ता थी; लेकिन महतो उससे तकाजा नहीं करता। उसने उसे कभी नहीं टोका। दम्पतिमें अक्सर उसके विषय में बातें होती रहती। गौरी कहती कि महतो बहुत भला आदमी है। बेचारा हमारी गरीबी पर न जाने कितना तरस खाता है। देखो तो रुपये के लिए एक दिन भी नहीं टोका। सोचती हूँ कि चार आने रोज भी बचाऊं तो धीरे-धीरे करके उसके रुपये निकल सकते है। कल मजदूरी मिली थी गोकुल चाचा के घर। शाम को एक रुपया पाया और चुट्ट-पट्ट हो गया। आज घर पर ही बैठी रही, बेसन पीसती रही। कल फिर जाऊँगी गोकुल चाचा के घर। सुना है कल से उनके खेतों में निकाई और गुड़ाई शुरू होगी।

मँगरू पत्नी की बातें सुनता। वह प्रसन्न होकर कहने लगता कि जो बिगाड़ता है गौरी वही बनाता भी है। भगवान दुःख देता चला जाये ऐसा नहीं। वह रहम भी करता है आदमी की गिरी हालत पर। जरूर देना चाहिए रामचरण महतो को रुपये। जो अपने साथ नेकी करे उस का एहसान जिन्दगी भर नहीं भूलना चाहिए और देखो अगर ईश्वर ने चाहा तो आठ-दस दिन में मैं चलने-फिरने लगूँगा। फिर किसी का तगादा नहीं रह जायेगा। नरवदी जिजिया के उरद मैं दे दूँगा। रामचरण महतो के रुपये भी चुका दूँगा और बिन्दो को भी कुछ दूँगा। इधर उसका ब्याज बहुत चढ़ गया है।

एक दिन शाम को अचानक जगी आँगन में आकर खड़ा हो गया और कहने लगा—"गौरी चलो मेरे साथ तुम्हें बिन्दो दीदी बुला रही हैं। तुम लोग पैसे के मामले में बहुत मैले हो। मँगरू क्या गिरा, उस की टाँग क्या टूटी तुम्हें रुपये न देने का एक अच्छा खासा-बहाना मिल गया। चलो आज देखो दीदी कैसी छीछालेदर करती है।"

"लेकिन जंगी भइया मैं अभी चल कैसे सकती हूँ। दिन भर बाद काम पर से उठी हूँ, रोटी बनानी है। सबेरे से घर में चूल्हा नहीं जला। सब लोग भूखे हैं दीदी से कह देना मेरी तरफ से हाथ जोड़कर कि कल सबेरे उनकी सेवा में पहुँचूँगी और जल्दी ही ब्याज के कुछ रुपये चुकाने

की कोशिश करूँगी।"

गौरी की यह बात सुन मँगरू उसके समर्थन में बोल उठा—"हाँ जंगी भइया दीदी को समझा देना। उन्हें बड़ी जल्दी गुस्सा आ जाता है। जैसा गौरी कहती है वैसा ही होगा। अरे भइया, आदमी सलामत बना रहे फिर पैसा तो उसके हाथ का मैल होता है। ये दिन नहीं रहेंगे भइया मैं दीदी की पाई-पाई चुका दूंगा।"

लेकिन जंगी पसीजा नहीं। वह उखड़ पड़ा और गरम होकर बोला—"चुका क्या दोगे खाक़। एक कौड़ी तो दीं नहीं और लम्बी-चौड़ी हाँकते हो। मेरी समझ में नहीं आती तुम्हारी बेसिर पैर की बातें। मैं कुछ नहीं जानता या तो मुझे कुछ रुपये दो या गौरी को दीदी के पास भेजो।"

इस पर मँगरू तो बोलते-बोलते रह गया गौरी उठकर खड़ी हो गई और विनय स्वर में जंगी की ओर उन्मुख होकर बोली—"जब है नहीं तो कहाँ से दे दूं भइया। घर में रुपया रखा हो और तगादा सुनूं यह तो अच्छा नहीं लगता। मैं सवेरे आऊँगी दीदी को मना लूंगी। अभी चलती मगर...।"

"कान खोलकर सुन लो गौरी। मैं तुम्हारी अगर-मगर सुनने नहीं आया हूं। मुझे रुपया चाहिए रुपया। अगर नहीं दे सकती हो तो साथ चलो। मैं मालिक नहीं जो तुम्हें माफ कर दूं। मैं भी पराई गुलामी करता हूं। इसलिए हुकम की तालीम मेरे लिए जरूरी है। दीदी ने कहा था कि तनिक भी रियायत न करना, खूब नंगई मचाना अब तो तुम गोकुल चाचा के घर काम करने लगी हो। एक रुपया मिलता है, आठ आने में घर का खर्च चलाओ और आठ आने व्याज में दीदी को दो। वादा करने से रुपया अदा नहीं हो जाता, काम करने से होता है कहने से नहीं। बस अब देर न करो मुझे और भी काम हैं। मैं···।"

मँगरू अब अधिक नहीं सुन सका। वह बीच में ही बोल उठा—"कैसी बातें करते हो जंगी भइया। इस महंगाई के जमाने में भला कहीं

आठ आने में पूरा पड़ सकता है। बच्चों के पेट की रोटी छीनकर मैं दूसरों को नहीं दे सकता। समझा देना दीदी को। मैं अच्छा हो जाऊँ, बस फिर ब्याज चुकाते देर नहीं लगेगी। अभी तुम जाओ अपना मन न खराब करो।"

जंगी एकदम चिढ़ उठा। वह तेज गले से बोला—"तू चुपचाप पड़ा रह मंगरू, चिविड़-चिविड़ मतकर और गौरी तू चल मेरे साथ, नहीं तो मुझे जबरदस्ती करनी पड़ेगी।"

"क्या कहा ? मैं नहीं जाऊँगी तो तू जबरदस्ती ले चलेगा मुझे। खबरदार अगर ऐसी हिम्मत की तो तेरा मुँह नोच लूँगी। मर्दों पर जोर नहीं चलता और औरत को रोब दिखाने आया है। जाओ चले जाओ जंगी। चिराग-बत्ती का समय है। इस वक्त ठाँय-ठाँय न करो। मैं नहीं जा सकती अभी, कल सवेरे आऊँगी।"

अब आग में घी पड़ गया। जंगी खिसिया गया बुरी तरह। वह लाठी का हुरा जमीन पर पटक दाँत पीस कर बोला—"तू औरत है इसी लिए मैं मजबूर हो जाता हूँ। अगर कोई मर्द जवान लड़ाता तो हड्डी-पसली तोड़ देता। चलती है या नहीं। मैं···।"

"नहीं! नहीं!! नहीं!!! चल तू ले चल मुझे, देखूँ तेरी ताकत।"

उत्तेजित गौरी की यह बात सुन जंगी आग बबूला हो उठा। उसने आगे बढ़ जल्दी से पहुँचा पकड़ लिया और गौरी को अपनी ओर खींचता हुआ बोला—"ले देख मेरी ताकत मैं तुझे अभी घसीटकर दीदी के कदमों में डालता हूँ।"

गौरी दोनों हाथों जंगी को नोचने और बकोटने लगी। वह खिंचती चली आई आँगन की चौखट तक। वहाँ आते ही देहरी में पाँव अड़ा दिये। वह बुरा-भला कह रही थी उसको। रतन उसके पीछे खड़ा जोर-जोर से रो रहा था। रूपा भी सिसक रही थी और मंगरू वह गुस्से से पागल हो रहा था। वह जल्दी से उठा, लाठी टेककर खड़ा हुआ और फिर ललकार कर बोला जंगी से—"खड़ा रह बदमाश ! अभी तेरी

खबर लेता हूँ। तूने समझ क्या रखा है। दिन दहाड़े ही गदर मचा रखा है।"

धीरे-धीरे मँगरू उस ओर बढ़ता जा रहा था। उसकी टाँगों की नसें चट्ट-चट्ट बोल रही थीं। गौरी पैर अड़ाए थी और जंगी उसे खींच रहा था। रतन ने बाप को आते देखा। उसने उसे सहारा दिया और मँगरू ने निकट आ जोर से एक लाठी का प्रहार किया जंगी पर। लाठी उसके कन्धे पर पड़ी। वह बिलबिला कर रह गया। बस ! फिर क्या था वह दूसरे क्षण ही सम्हला और गौरी को छोड़ अपनी लाठी साध तनकर खड़ा हो गया मँगरू के सामने और जोर से एक लात उसके पेट में मार कर बोला—"जाहिल जोर आजमाता है, ले जमीन सूँघ।"

मँगरू भरभराकर गिर पड़ा। वह दोनों हाथों पेट पकड़ कर रह गया। तब गौरी के रोष का पारावार न रहा। वह पति की लाठी उठा ले दौड़ी जंगी की ओर। लेकिन तब तक जंगी बड़बड़ाता हुआ घर से बाहर जा चुका था।

: ६ :

बिन्दो ब्राह्मण परिवार में पैदा हुई इसी पार्वतीपुर गांव में। दूर ब्याही गई, विधवा हो गई। मां-बाप की अकेली थी इसलिए मैके चली आई। घर में महाजनी पहले से होती थी। उसने बाप की मृत्यु के बाद इस काम को खूब बढ़ा लिया था। उसके अपने खेत थे और बैलों की गोई (जोड़ी) ये नागौरी बैल थे, गाड़ी में बहुत अच्छे चलते और हल भी जोतते थे। इसके अलावा एक मन्दराजी भैंस थी जो पूरे बारह सेर दूध देती। घर में खाने वाली अकेली वही थी।

बिन्दो का हजारों का लेन-देन फैला था अपने गांव से लेकर पास-पड़ोस के गांवों तक। इसीलिए उसने जंगी को नौकर रखा। इसके अलावा एक गोड़ैत (मजदूर) था जो भैंस की सेवा करता, घर में झाड़ बुहारू लगाता। खाना बिन्दो अपने आप ही बनाती थी।

बिन्दो की नीयत दुरुस्त नहीं थी। उसके पास बेशुमार पैसा था; फिर भी उसका पेट नहीं भरता। वह दिन-रात पैसा पैदा करने की धुन में ही लगी रहती जबकि उसके आगे न तो कोई नाथ था और न पीछे कोई पगहा। जंगी को वह बहुत मानती। उसके साथ अच्छा व्यवहार करती। उसकी तीस रुपया महीना तनख्वाह थी और खाना वह उसी के चौके में खाता। वह भी बिलकुल अकेला था उसका न कोई घर था और न द्वार। यद्यपि उम्र में वह बिन्दो से कुछ बड़ा था; लेकिन उसे दीदी कह कर सम्बोधित करता। बिन्दो उससे जब अधिक प्रसन्न होती तो जंगी नहीं जंगी भइया कहकर पुकारती।

जंगी ने मँगरू और गौरी का हाल बताया जाकर बिन्दो को, तो वह क्रोध से उबल उठी और कहने लगी कि गौरी की हिम्मत बहुत बढ़ गई है। उस दिन मेरे मुँह लग गई, आँखें तुड़ेरने लगी और आज यह हरकत की तुम्हारे साथ। मालूम होता है कि चींटी के पर जम आये हैं। मैं कल ही मुखिया से सलाह लूँगी कि इन दोनों के लिए क्या किया जाये। पानी अब सिर पर चढ़ता चला आ रहा है। इसका उपाय निकालना ही होगा।

जंगी जितना अधिक तूल-अर्ज दे सकता था मामले को उतना दिया और फिर अन्त में कहने लगा कि हाँ दीदी ये शूद्र लोग अपनी कहते हैं दूसरे की सुनते ही नहीं। भली बात कहो इन्हें बुरी लगती है। इनसे हँसकर बोलो तो सिर पर चढ़ बैठते हैं। मैंने तुम्हारा ख्याल किया नहीं, तो वहीं पर सिर कुचल देता मँगरू का। चाहे फिर मुझे फाँसी की ही सजा होती।

बिन्दो जंगी की स्वामी भक्ति पर मुग्ध हो गई। वह शान्त स्वर में उसे समझाने लगी कि अच्छा किया तुमने जो गुस्से पर काबू पा लिया। ऐसी चाल चलो कि न साँप मरे और न लाठी टूटे, अपना काम बन जाये। देखो मैं बताती हूँ मँगरू और गौरी को कि बदतमीजी करने और बद-जबान बोलने का नतीजा क्या होता है।

× × ×

गौरी और मँगरू दोनों बहुत चिन्तित थे कि कहीं कोई उन पर नई आफत न आ जाये; क्योंकि जंगी यहाँ से जहर का घूंट पीकर गया है। वे दोनों एक-दूसरे को समझाते रहे अपनी-अपनी बात कहते रहे, लेकिन दोनों ही हैरान थे। उनका चित्त स्थिर नहीं था।

रामचरण महतो दूसरे दिन तीसरे पहर आया तो मँगरू पेट के दर्द से कराह रहा था। उसे चिन्ता हुई। उसने घबड़ाकर पूछा गौरी से कि क्या बात हुई। मँगरू कराह क्यों रहा है। तब गौरी ने रो-रो कर जंगी की बर्बरता का हाल बतलाया।

यह सब सुनते ही महतो बोल उठा—'कितना रुपया देना है तुम्हें बिन्दो का ? मुझसे ले लो और उसका चुका दो। रह गई ब्याज की बात। वह मुझे नहीं चाहिए। मुझे तुम मेरा असल ही लौटा देना जल्दी नहीं धीरे-धीरे करके।"

गौरी और मँगरू एक-दूसरे का मुँह देखने लगे। दोनों को मौन देख महतो फिर कहने लगा—"सोचते-विचारते क्या तुम हो लोग। मुझे बहुत दुःख हो रहा है कि जंगी ने मँगरू तुम्हारे पेट में लात मारी और गौरी तुम्हें खींचा बिन्दो के पास ले जाने के लिए बेरहमी से। मुझे अपनी ही नहीं सब की इज्जत प्यारी है। बताओ कितना रुपया है ? मैं कल लेता आऊँ, कल ही बिन्दो को दे दो।"

अब गौरी चुप न रह सकी। वह बोल पड़ी—"महतो दादा दुनिया तो हमदर्दी का एक बोल भी नहीं बोलती और तुम्हारा दिल कितना बड़ा है। मुझे बहुत खुशी है कि अब विपत्ति में किसी के पास न जाकर तुम्हारा ही दरवाजा खटखटाऊँगी। मुझे तुम पर भरोसा है दादा। लेकिन मैं रुपया नहीं लूंगी तुमसे। अभी तुम्हारे वे पांच रुपये तो दे नहीं पाई और उल्टा तुमसे उधार ले लूँ। यह कुछ समझ में नहीं आता। बिन्दो का रुपया तुमसे लेकर भरूँ, यह नहीं कर पाऊँगी मैं। बस दया बनाये रहो दादा। हम गरीबों के लिए यही बहुत काफी है।"

अब मँगरू का भी साहस बढ़ा। वह पत्नी के समर्थन में बोल उठा —"हाँ महतो, गौरी ठीक कहती है। एक से लेकर दूसरे को दूँ। इस तरह कर्जा कभी नहीं अदा हो सकता। बस मैं चलने-फिरने लगूँ। बिन्दो का रुपया चुकाना शुरू कर दूँगा। ज्यादा नहीं करीब डेढ़ सौ रुपये है। बस उसी के लिए आये-दिन हाय-हाय मचाये रहती है।"

रामचरण महतो थोड़ी देर चुप रहा। फिर कुछ सोचकर बोला— "मैं कल रुपया ले आऊँगा। मुझे यह बिल्कुल अच्छा नहीं लगता कि रुपये के पीछे तुम लोग मार और गाली खाओ। आदमी को इन्सानियत कभी नहीं भूलना चाहिए। मैं तुम लोगों की मदद नहीं करना चाहता, बल्कि अपनी इन्सानियत का फर्ज पूरा करना चाहता हूँ। इसके लिए तुम दोनों मुझे नहीं रोक सकते।"

इस पर छूटते ही गौरी बोली—"नहीं दादा नहीं। ऐसा मत करना। रुपये मत लाना। मैं बिन्दो को समझा लूँगी।"

और मँगरू भी कहने लगा व्यस्त स्वर में—"हाँ महतो ऐसा मत करना। दूसरे का दुःख देखा जाता है, समझा जाता है और हमदर्दी भी की जाती है; लेकिन वह बाँटा नहीं जा सकता। कोई किसी की तकदीर का साथी नहीं। जो भाग्य में लिखा है वह नहीं मिट सकता महतो, कभी नहीं मिट सकता। रुपये मत लाना। भगवान आपको खूब बरक्कत दे। आप दरिया दिल आदमी हैं। गरीबों का दुःख नहीं देख सकते।"

इस तरह दम्पति ने बहुत समझाया महतो को। वे उसे देर तक समझाते रहे जब तक वह गया नहीं। लेकिन वह नहीं माना और चलते-चलते कहता गया कि नहीं मैं रुपये जरूर लाऊँगा। मैं तुम लोगों की तकलीफ नहीं देख सकता।

महतो चला गया। मँगरू और गौरी दोनों मुँह बाये अवाक् हो एक दूसरे की ओर देख रहे थे। उनके बीच मौन पसर रहा था। दिन ढल रहा था। साँझ उतर रही थी धीरे-धीरे आँगन में। और रतन वह बाहर से खेलता, दौड़ता, हँसता हुआ आ रहा था माँ की ओर। वह आ

गौरी के आँचल से लिपट गया; लेकिन फिर भी गौरी को कुछ भी बोध नहीं हुआ। वह प्रस्तर प्रतिमा की भाँति निश्चल बैठी न जाने क्या सोच रही थी और मँगरू को लग रहा था कि न जाने कहाँ का सन्नाटा आकर समा गया है उसके मस्तिष्क में। उसका दिमाग सांय-सांय कर रहा है। वह हतबुद्धि हो गया और कुछ भी नहीं सोच पा रहा है।

: ७ :

वह दृश्य भी सामने आ गया। जब रामचरण महतो दूसरे दिन रुपये लेकर आया और गौरी को देने लगा। गौरी ने रुपये नहीं लिये। वह श्रद्धा से भरकर बोली—"दादा ! बहुत बड़ा एहसान कर रहे हैं मुझ पर। इस बोझ से मैं दब जाऊँगी। हमें तो तुम बड़े-बूढ़ों का आशीर्वाद चाहिए। रुपये रख लो दादा, आप आदमी नहीं देवता हैं।"

मँगरू भी हर तरह से समझाने लगा महतो को और आखिर विवश होकर महतो को रुपये रख लेने पड़े। जब वह चला गया तो गौरी प्रसन्न होकर कहने लगी पति से—"महतो कितने बड़े दिल का आदमी है। तभी भगवान ने उसे खूब पैसा दिया है।"

"पैसा ही नहीं गौरी। उसकी शोहरत कितनी है। यहाँ से दस कोस की दूरी के गाँव का आदमी भी भागा चला आता है रामचरण महतो के पास टूटी और हटी हड्डी ठीक कराने। पैसा तो आदमी को किसी न किसी तरह हासिल हो जाता है; लेकिन नाम और इज्जत उसी को मिलती है जो दूसरों की सेवा करता है, दुखियों का दुःख हरता है। रामचरण महतो बहुत भला आदमी है। देखो ! कोशिश करके जल्दी से जल्दी उसके रुपये चुका दो। पाँच रुपये कोई बहुत नहीं होते हैं।"

पति की ये बातें सुन गौरी निहाल हो उठी। वह कहने लगी मगन होकर—"मैं तो पहले ही कह चुकी हूँ कि गोकुल चाचा के घर काम कई दिन का है। इस बीच महतो के रुपये अदा हो जायेंगे।"

दम्पति नित्य ही महतो की चर्चा करते; लेकिन अभी तक उसका

एक भी रुपया नहीं चुकाया जा सका था। मजदूरी में जो मिलता उसमें से आठ आने रोज बिन्दो को दिये जाते। बिन्दो चुप थी। गोरी और मंगरू समझ रहे थे कि उसको ब्याज पहुँचने लगा है। अब वह नाराज नहीं है।

लेकिन एक दिन जब मंगरू लाठी टेककर चलने लगा था, वह गया मुखिया की चौपार में; वहाँ उसने सुना लोगों के मुँह से कि बिन्दो कहती है कि वह दावा करेगी और रुपये के बदले मंगरू का मकान कुर्क करवा लेगी। क्योंकि मंगरू से रुपये मिलने की कोई उम्मेद नहीं है। अरे आठ आने रोज अब देने लगा है इससे क्या होता है। डेढ़ सौ की रकम है। न जाने कितने वर्ष लगेंगे अदा करने में।

उस जमात में रामदयाल दादा भी थे। मंगरू उनकी ओर देखकर बोला—"यह कहाँ का इन्साफ है दादा? गरीब को सहारा देना तो दूर रहा उल्टा उसका घर भी छीन लिया जाये। तुम्हीं बताओ दादा क्या मैं बच्चों को लेकर मैदान में रहूँगा? तुम सब लोगों ने बिन्दो की बातें तो सुन लीं; मगर उसे यह नहीं समझाया कि मेरा बसेरा न छीने। यह तो बहुत बड़ी ज्यादती होगी। मैं चलने लगा हूँ। कुछ दिन बाद मजदूरी पर जाऊँगा। जल्दी-से-जल्दी बिन्दो दीदी के रुपये चुका दूँगा। मकान मैं नहीं दूँगा।"

इस पर रामदयाल दादा तो बोलते ही बोलते रह गये। एक-दूसरे सज्जन बोल उठे—"मंगरू कौन करे तुम्हारी सिफारिश। तुमने और तुम्हारी घरवाली ने इधर बहुत ही बेअदबी और बेकायदगी का काम किया है। तुमने जंगी के लाठी मारी। गोरी ने उसे गालियाँ दीं और यही नहीं गोरी की हिम्मत तो यहाँ तक बढ़ गई है कि उसने बिन्दो के घर में जाकर उसको गालियाँ दीं उसके सामने उनके मुँह पर। तुम लोग यह क्यों भूल जाते हो कि तुम नीच हो और बड़े लोगों की बातें सुनना, बर्दाश्त करना तुम्हारा धर्म है।"

मंगरू सबके मुँह देखकर रह गया फिर वह बोला मस्त होकर—

"मैं तो भगवान से बड़ा किसी को नहीं मानता। अच्छा कहते हो तुम सब लोग कि मैं दूसरों की मार और गालियाँ खाने के लिए ही पैदा हुआ हूँ। कभी मैंने यह नहीं देखा कि हमदर्दी के नाम पर मेरे बच्चों को कोई रोटी का एक टुकड़ा ही दे देता। गाँव वाले हमसे बेगार ले सकते हैं, हमारी बेइज्जती कर सकते हैं; लेकिन सहारा देने के नाम पर सभी खामोश हो जाते हैं। यह सब नहीं चलेगा। बिन्दो अपना रुपया लेगी, वह हमारी इज्जत से नहीं खेल सकती।"

अन्य लोग आपस में काना-फूसी करने लगे। किसी की भौंहें तन रही थीं; किसी की आँखें लाल हो रही थीं और कोई मुस्करा रहा था मन्द-मन्द। मुखिया लाल-पीला होकर कह रहा था मँगरू से—"मँगरू छोटे मुँह बड़ी बात न बोलो। जब महाजन से कर्ज काढ़ने जाते हो तो उसे उसके मुँह पर भगवान से भी ऊँचा बताने लगते हो और जब देने की नौबत आती है तो वही गति करते हो कि लेने की मछली और देने के काँटे। सच बात तो यह है कि तुम लोगों की नीयत दुरुस्त नहीं रहती जाओ अपना काम देखो। हम लोगों से कहने से कोई फ़ायदा नहीं। बिन्दो के पैर पकड़ो। उसकी खुशामद करो। वही कुछ कर सकती है। बाकी दूसरे लोगों से क्या मतलब।"

"हाँ दूसरे लोगों को मतलब क्यों होने लगा मुझसे। मैं हाड़-माँस की एक मशीन हूँ। जिसे तुम लोग मनमाने ढंग से चलाते रहो और अगर मशीन का कोई पुर्जा घिस जाये, टूट जाये तो फौरन ही कह दो कि मशीन बेकार हो गई; अब वह किसी काम की नहीं रही। तुम सब लोगों को अच्छा लगेगा ? मैं घर से बेघर हो जाऊँगा। अच्छा करो। जिसके जो जी में आये करो ? मैं तो सिर्फ एक बात जानता हूँ कि "रूठे सब संसार; मगर रूठे न प्रभु पालनहार।" यह कहकर मँगरू वहाँ से चल दिया क्योंकि लोगों की बातें सुनते-सुनते उसके कान फूटे जा रहे थे। वह घर की ओर जा रहा था कि रास्ते में मिल गये पुजारी पाठक। मँगरू ने पायलागन की। फिर दोनों में बातें होने लगीं। मँगरू वहीं जमीन पर

बरगद के नीचे बैठ गया।

: ८ :

दोपहर को मँगरू घर से बाहर निकला था और सांझ हो गई अभी तक नहीं लौटा। गौरी उसकी राह देख रही थी। रामचरण महतो अब नित्य नहीं आता। वह तीसरे-चौथे दिन आता, मँगरू का पैर देखकर चला जाता। पैर करीब-करीब अब ठीक था। टाँग की हड्डी बैठ गई थी। अब उस पर पट्टियाँ नहीं बाँधी जाती, केवल तेल की मालिश होती थी। गौरी सोच रही थी कि वे कहीं बैठे होंगे बातों में। महतो के आने का समय निकल गया अगर वहीं वह आ जाता तो मुझे उनको (मँगरू) ढूँढने जाना पड़ता। कितना कहा कि आराम करो, चला-फिरा न करो; लेकिन वे मानते ही नहीं।

ठीक जिस समय गौरी ने दिया जलाया वैसे ही आँगन में एक परिचित कंठ सुनाई दिया—"गौरी! अरे, कोई बोलता नहीं। मँगरू कहाँ हो तुम?"

गौरी आँगन में आ गई। सामने देखा सांझ के झुटपुटे में कि रामचरन महतो खड़ा मुस्करा रहा है। उसने फौरन ही आदर सहित उसको चारपाई पर बिठलाया। दिया कोठरी से लाकर आँगन के आले में रख दिया और फिर उसके निकट जमीन पर बैठ अपनी बात कहने लगी—"देखो तो महतो दादा! कितने लापरवाह हैं वे। दोपहर को घर से निकले और अभी तक नहीं लौटे। तुम्हीं बताओ? ऐसा अभी इतना चलने-फिरने की क्या जरूरत है?"

महतो गौरी की बातें सुन रहा था। उसकी दृष्टि चकर-मकर करती हुई इधर-उधर दौड़ रही थी। उसने कुछ जवाब नहीं दिया केवल हँस कर रह गया। तब गौरी फिर कहने लगी—"हाँ दादा, मुझे बड़ा संकोच लगता है तुम्हारे सामने। गरदन शरम से झुककर रह जाती है कि मैं तुम्हारी कुछ सेवा नहीं कर सकी। बस सादी बीतने दो। क्वार

में कांस फूलेंगे, आँरड बिकेंगे। तब मजदूरी अच्छी होगी। सेंठे और सिरकियाँ भी खूब निकलेंगी। बस ! तब यही मन किये हूँ दादा—पाँच नहीं तुम्हें दस दूँगी, इकट्ठे एक साथ ही।"

महतो फिर हँसा और गौरी तब अतीव श्रद्धा से भर आई। वह बोली घबराहट भरे स्वर में—"अरे मैं तो भूल ही गई थी दादा तुम्हारे लिए चिलम तो भर लाऊँ, अभी आई।" कहकर वह वहाँ से चली गई द्रुत वेग के साथ और थोड़ी देर बाद जब लौटी तो उसके हाथ में चिलम थी जिसमें ऊपर आग दहक रही थी कंडे की और तम्बाकू की कड़ुवी, सोंधी खुशबू वातावरण में घुल-मिल रही थी।

महतो ने चिलम हाथ में ली और दो-तीन लम्बे-लम्बे कस खींचे, फिर नथुनो और मुँह से धुआँ निकालते हुए वह बोला मीठी वाणी में—"अरे मेरे रुपयों की तुम इतनी चिन्ता क्यों करती हो। मैं तुम्हें गैर नहीं अपनी समझता हूँ। कोई जरूरत नहीं। तुम देना चाहती हो, लेकिन मैं रुपये लूँगा ही नहीं। बस···।"

"क्या मतलब ? क्या कहा दादा ? वाह ! यह कैसे हो सकता है। रुपये तुम्हें लेने ही पड़ेंगे।" गौरी यह कहकर महतो का मुँह देखने लगी।

और महतो की निगाहें बदलीं उसने तत्क्षण ही कलाई पकड़ ली गौरी की। दूसरे हाथ से चिलम जमीन पर रख दी।

कलाई पकड़ते ही महतो की देह काँपने लगी। सारे रोयें खड़े हो गये थर्राकर और गौरी एकदम बिचक उठी। वह फनगी बिच्छू की तरह। उसने दृढ़ता के साथ कहा एक झटके में खड़ी होकर—"यह क्या दादा ? तुम और यह करतूत ! तुम्हें नहीं; बल्कि मुझे शरम आती है।"

दिये की लौ काँप रही थी धीरे-धीरे। उसे हवा लग रही थी। और महतो के मानस में वासना नृत्य कर रही थी नग्न। वह आसक्तावास्था में बैठा जैसे गूंगा हो गया था।

गौरी ने अपना हाथ झिटका और तेजी के साथ कहा—"कलाई छोड़ो महतो। मैं झूठी पत्तलें चाटने वाली कुतिया नहीं हूँ। जो गली-गली छु-छु

आती फिरूँ।"

"नहीं गोरी ! मैं यह कमाई जिन्दगी भर नहीं छोड़ूंगा। तुम नहीं जानती कि मेरी एक-एक साँस में तुम ही तुम समा रही हो। रुपये मैं तुमसे लूं। उसके बदले, मैं तुम्हें दूंगा।" यह कह कर महतो ने टेंट मे पच्चीस रुपये के नोट निकाले और दूसरे हाथ से गोरी की ओर बढ़ाता हुआ बोला—"लो ये अभी पच्चीस हैं, बाकी फिर दूंगा। मंगरू तुम्हें क्या सुख रखेगा ? जो तन के लिए कपड़ा और पेट के लिए रोटी तक नहीं दे सकता। मेरी बात···।"

"तेरी बात ! नीच कमीने कुत्ते मैं कभी नहीं सुन सकती। खबरदार जो मेरे आदमी को तनिक भी बुराई की तो जबान खींच लूंगी। छोड़ो मेरा हाथ। मैं कहती हूँ कि मुँह तोड़ दूंगी तुम्हारा। तुमने मुझे समझ क्या रखा है।"

उत्तेजित गोरी का चेहरा क्रोध के कारण लाल हो रहा था। उसकी आँखें जल रही थीं। उनसे आग निकल रही थी और महतो मुस्कराकर कह रहा था—"गोरी मैं तुम्हें कली समझता हूँ कली। तुम मुझे बहका नहीं सकती। मैं कमाई नहीं छोड़ूंगा। यहाँ आओ। मेरे पास बैठो।" यह कह कर महतो ने जैसे ही गोरी को अपनी ओर खींचा वैसे ही उसने तड़ाक से एक थप्पड़ जमा दिया उसके मुँह पर और दाँत पीसकर अपने को छुड़ाती हुई बोली—"तेरे पास बैठूं। मैं हरजाई नहीं हूँ। ब्याहता हूँ ब्याहता। नरम चारा पाकर तू मेरी इज्जत से खेलने आया है। खून उतर आया है मेरी आँखों में। कहती हूँ कलाई छोड़ और चला जा यहाँ से नहीं तो अनर्थ हो जायेगा।"

थप्पड़ खाकर भी महतो हँसता रहा। वह बोला आगे बढ़ता हुआ—"तुम चाहे एक नहीं बीस थप्पड़ मारो, लेकिन मैं बुरा नहीं मानूंगा दुधारू गाय की चार लातें सही जाती हैं और औरत कुछ भी नहीं बिगाड़ सकती मर्द का। वह तो खिलौना होती है। अब तुम मुझसे बचकर कहीं नहीं जा सकती गोरी। तुमने मेरी रातों की नींद छीन ली। मुझे हान-

बेहाल कर दिया। गजब की सुन्दर हो और हर खूबसूरत चीज इन्सान को अच्छी लगती है।"

अब महतो और गौरी में धींगा-मुश्ती होने लगी। महतो उसे बाहों में बाँधने की कोशिश करता। वह उसे नोचती-बकोटती और काटती तभी लाठी टेकता हुआ आ पहुँचा मँगरू। उसने जो कुछ देखा उसकी आँखें फटकर रह गईं। उसे देखते ही महतो ने गौरी को छोड़ दिया और अलग हटकर खड़ा हो गया। गौरी कुछ कहे इसके पहले ही, वह मँगरू को जल्दी-जल्दी बताने लगा। वह बोला—"अच्छी घर वाली है तुम्हारी मँगरू। पराये मर्दों पर डोरे डालती है, मुझसे रोज-रोज आँखें लड़ाती रही। मैंने तुम से नहीं कहा और आज तो इसने हद कर दी। तोबा-तोबा कैसे कहूँ। मुझ से कहने लगी कि मुझे आपने साथ ले चलो। मैं इस लँगड़े के नहीं रहूँगी। मैंने आना-कानी की तो मेरा यह हाल किया। देखो कैसा काटा है ?"

मँगरू की आँखें सुर्ख हो रही थीं। उसका चेहरा क्रोध से तमतमा रहा था। वह सुन रहा था महतो की बातें तभी बीच में गौरी सिहनी सी आकर गरज पड़ी। वह बोली दोनों हाथ फटकार कर—"इसकी सुन ली तुमने। अब मेरी सुनो ? फिर मैं तुम्हारे सामने इसको छठी का दूध याद दिलाऊँगी कि गैर की औरत को छेड़ने का मजा कैसा होता है।" यह कहकर गौरी वह सब बतलाने लगी जो उस पर बीता था। बीच-बीच में महतो बोल पड़ता तो वह उसे डाँट देती।

मँगरू अब गुस्से से पागल हो रहा था। वह टूटने ही वाला था महतो पर कि तब तक गौरी को महतो ने धक्का दिया वह गिर पड़ी। महतो जाने लगा यह कहता हुआ कि बदजात औरत मुझे बदनाम करती है अच्छा नेकी का बदला दिया।

"नेकी का बदला चाहते हो महतो तो लिये जाओ। अरमान क्यों रह जायें ? तुमने मेरे सामने मेरी औरत पर हाथ उठाया। मैं तुम्हारी खोपड़ी फोड़ दूँगा। ले सम्हल पाजी, कुत्ते।" यह कहने के साथ मँगरू

ने दोनों हाथों से लाठी उठाई और चोट की महतो की खोपड़ी पर—"हाय मर गया।" महतो के मुँह से निकला। वह गिर पड़ा जमीन पर और उसके सिर से खून की धार बह चली। गौरी चीख पड़ी खून देख कर। वह सहमकर पति से लिपट गई और धीरे-धीरे कहने लगी अस्फुट स्वर में—"तु···म···ने म···ह···तो को मा···र डा···ला। अ···ब क···या···हो···गा ?"

गौरी आँखें फाड़कर रह गई और मंगरू हतबुद्धि-सा खड़ा था।

: ६ :

गाँव के कच्चे घर प्रायः एक मंजिल के ही होते हैं। उनकी छतें एक दम सपाट होतीं और मुंडेरें छोटी छोटी। एक छत से दूसरी छत पर जाने का सिलसिला रहता है। नीचे-नीचे न जाकर आदमी अगर चाहे तो छतों पर से ही एक दूसरे के घर आसानी से पहुँच सकता है। जिस समय मंगरू और महतो की बातचीत हो रही थी। छत पर से पड़ोस की स्त्रियाँ सुन रही थीं। जब उन्होंने देखा कि मंगरू ने महतो की खोपड़ी फाड़ दी है तो वे घबड़ाकर नीचे गईं और बाहर से आदमियों को बुला लाईं।

बस फिर क्या था मंगरू के आँगन में भीड़ इकट्ठी होने लगी। महतो बेहोश हो गया था। लोग कह रहे थे कि मंगरू ने उसकी जान तो नहीं ली; लेकिन मार डालने में कुछ उठा नहीं रखा। रामदयाल दादा, सुखिया और बिन्दो आदि सभी लोग वहाँ एकत्रित थे। महतो को फौरन ही बैलगाड़ी पर ले जाया गया। कुछ लोग उस पर बैठ कस्बे की ओर चल पड़े।

अब आँगन में सन्नाटा था। गौरी कह रही थी पति से—"महतो को लोग अस्पताल ले गये हैं। वहाँ रपट (रिपोर्ट) जरूर लिखी जायेगी। गाँव वाले हम लोगों पर यों ही जलते हैं, कोई भी खुश नहीं है। अगर किसी ने पुलिस थाने में इत्तिला कर दी तो वह यहाँ आ सकती है।

हमें और तुम्हें दोनों को हैरान करेगा। मैं कहती हूँ कि रातों-रात तुम चले जाओ गाँव से बाहर। नहीं तो कोई भी आफत आ सकती है। मेरा जी घबड़ा रहा है। ऐसा लगता है कि कुछ होने वाला है। जाओ! चले जाओ।" "लेकिन कहाँ गौरी? अपने लोगों का तो कहीं ठिकाना नहीं है। और अगर पुलिस मुझे पकड़ना ही चाहेगी तो मैं कहीं भी नहीं छिप सकता। घर से भागना बुज़दिली है और तुम ऐसा सोचती ही क्यों हो कि पुलिस आयेगी और मुझे पकड़ ले जायेगी। मैं कहता हूँ कि कुछ नहीं होगा गौरी! मैंने कोई झगड़ा नहीं किया है। महतो ने आकर खुद अपने मुँह में लगाम ले ली। इसके लिए क्या करूँ?"

यह कहकर मँगरू बैठ गया चारपाई पर। गौरी ने एक लम्बी साँस ली और फिर कुयें से पानी भर आँगन में पड़ा महतो का खून धोने लगी।

रूपा और रतन आँगन में ही उसी चारपाई पर सो रहे थे जिस पर मँगरू बैठा था। गौरी जब खून धो चुकी तो वह जल्दी से जाकर बाहर के किवाड़े बन्द कर आई। उनकी आँखों में नींद नहीं थीं। भादों के अँधेरे पक्ष की रात थी। दिया न जाने कब बुझ चुका था। नीले आकाश में तारे चमक रहे थे जुगुन से और अँधेरा साँय-साँय कर रहा था। दूर कहीं बाहर सियार बोल रहे थे—'हुवा-हुवा!' गौरी काँप रही थी मन ही मन। उसका मन अशुभ आशंका से भर रहा था। तब तक उसके ऊपर से चमगादड़ उड़ते हुए निकल गये फर्र-फर्र। यह असगुन (अपशकुन)! राम! कैसा बेड़ा पार लगेगा। गौरी सोचती रही पति के पास बैठी और रात बीतती रही।

× × ×

सवेरा हुआ। चिड़ियाँ चहकीं। सूरज निकला। ताजगी का दौरा चला। सभी नित्य कर्म से निवृत होने लगे; लेकिन गौरी और मँगरू वे अब भी बैठे उसी समस्या पर विचार कर रहे थे। रात को भले ही थोड़ी देर के लिए दोनों की आँखें लगी हों। दोनों के मन चिन्ता के रथ

पर सवार थे।

रात को जो लोग महतो को कस्बे के अस्पताल ले गये थे वे रात भर वहीं रहे। सवेरे जब लौटे तो उनके साथ पुलिस का एक दस्ता था। दरोगा, हेड कानिस्टिबिल और उनके साथ चार सिपाही। मँगरू के घर के किवाड़े बन्द थे। सहसा उन पर दस्तक हुई, जन्जीर खटकी। मँगरू मौन रहा और गौरी बोली घबड़ाहट भरे स्वर में—"कौन है ? क्या काम है ?"

बाहर से आवाज आई—"जल्दी किवाड़े खोलो ? दरोगा साहब मुआइना करने आये हैं।"

"दरोगा क्यों आया है ?" मन ही मन कहा अस्फुट स्वर में गौरी ने। तब तक मँगरू उसके पास आ गया था। गौरी डर रही थी। मँगरू ने किवाड़े खोले और पुलिस अन्दर आ गई।

दरोगा ने आते ही मँगरू के चार-पाँच हन्टर मारे और बोला डाँट कर—"क्यों तेरा ही नाम मँगरू है ? तूने ही खोपड़ी फाड़ी है रामचरण महतो की ?"

पिटकर भी मँगरू ने हिम्मत न हारी। वह सत्य-सत्य कहने लगा, लेकिन दरोगा ने फौरन ही आदेश दिया हेड कानिस्टिबिल को—"देखते क्या हो गिरफ्तार कर लो इस बदमाश को। बड़ा रुस्तमेहिन्द बना है।"

इस पर मँगरू के हाथों में हथकड़ियाँ पहनाई जाने लगीं। गौरी रो कर दरोगा की ओर भागी। उसने उसके पाँव पकड़ लिये और रोकर बोली—"दरोगा साहब ! इन्हें मत ले जाओ। हथकड़ी न पहनाओ। मेरे बच्चे भूखे मर जायेंगे। गलती इनकी नहीं महतो की थी।"

दरोगा ने गौरी को झिटक दिया और दूर हट कर खड़ा होता हुआ तीखे स्वर में बोला—"चल हट मुझको राह बतानी है। तुम लोग बड़े कमीन हो। जलालत तुममें कूट भरी है।"

गौरी रोती रही। मँगरू निश्चल खड़ा था। उसके चेहरे पर न चिन्ता थी और न घबड़ाहट के चिन्ह। रोते-रोते गौरी उसकी ओर बढ़ी

हमें और तुम्हें दोनों को हैरान करेगी। मैं कहती हूँ कि रातों-रात तुम चले जाओ गाँव से बाहर। नहीं तो कोई भी आफत आ सकती है। मेरा जी घबड़ा रहा है। ऐसा लगता है कि कुछ होने वाला है। जाओ! चले जाओ।" "लेकिन कहाँ गौरी? अपने लोगों का तो कहीं ठिकाना नहीं है। और अगर पुलिस मुझे पकड़ना ही चाहेगी तो मैं कहीं भी नहीं छिप सकता। घर से भागना बुजदिली है और तुम ऐसा सोचती ही क्यों हो कि पुलिस आयेगी और मुझे पकड़ ले जायेगी। मैं कहता हूँ कि कुछ नहीं होगा गौरी! मैंने कोई झगड़ा नहीं किया है। महतो ने आकर खुद अपने मुँह में लगाम ले ली। इसके लिए क्या करूँ?"

यह कहकर मँगरू बैठ गया चारपाई पर। गौरी ने एक लम्बी साँस ली और फिर कुयें से पानी भर आँगन में पड़ा महतो का खून धोने लगी।

रूपा और रतन आँगन में ही उसी चारपाई पर सो रहे थे जिस पर मँगरू बैठा था। गौरी जब खून धो चुकी तो वह जल्दी से जाकर बाहर के किवाड़े बन्द कर आई। उनकी आँखों में नींद नहीं थीं। भादों के अँधेरे पक्ष की रात थी। दिया न जाने कब बुझ चुका था। नीले आकाश में तारे चमक रहे थे जुगुन से और अँधेरा साँय-साँय कर रहा था। दूर कहीं बाहर सियार बोल रहे थे—'हुवा-हुवा!' गौरी काँप रही थी मन ही मन। उसका मन अशुभ आशंका से भर रहा था। तब तक उसके ऊपर से चमगादड़ उड़ते हुए निकल गये फर्र-फर्र। यह असगुन (अपशकुन)! राम! कैसा बेड़ा पार लगेगा। गौरी सोचती रही पति के पास बैठी और रात बीतती रही।

× × ×

सवेरा हुआ। चिड़ियाँ चहकीं। सूरज निकला। ताजगी का दौरा चला। सभी नित्य कर्म से निवृत होने लगे; लेकिन गौरी और मँगरू वे अब भी बैठे उसी समस्या पर विचार कर रहे थे। रात को भले ही थोड़ी देर के लिए दोनों की आँखें लगी हों। दोनों के मन चिन्ता के रथ

पर सवार थे।

रात को जो लोग महतो को कस्बे के अस्पताल ले गये थे वे रात भर वहीं रहे। सवेरे जब लौटे तो उनके साथ पुलिस का एक दस्ता था। दरोगा, हेड कानिस्टिबिल और उनके साथ चार सिपाही। मँगरू के घर के किवाड़े बन्द थे। सहसा उन पर दस्तक हुई, जन्जीर खटकी। मँगरू मौन रहा और गौरी बोली घबड़ाहट भरे स्वर में—"कौन है ? क्या काम है ?"

बाहर से आवाज आई—"जल्दी किवाड़े खोलो ? दरोगा साहब मुआइना करने आये हैं।"

"दरोगा क्यों आया है ?" मन ही मन कहा अस्फुट स्वर में गौरी ने। तब तक मँगरू उसके पास आ गया था। गौरी डर रही थी। मँगरू ने किवाड़े खोले और पुलिस अन्दर आ गई।

दरोगा ने आते ही मँगरू के चार-पाँच हन्टर मारे और बोला डाँट कर—"क्यों तेरा ही नाम मँगरू है ? तूने ही खोपड़ी फाड़ी है रामचरण महतो की ?"

पिटकर भी मँगरू ने हिम्मत न हारी। वह सत्य-सत्य कहने लगा; लेकिन दरोगा ने फौरन ही आदेश दिया हेड कानिस्टिबिल को—"देखते क्या हो गिरफ्तार कर लो इस बदमाश को। बड़ा रुस्तमेहिन्द बना है।"

इस पर मँगरू के हाथों में हथकड़ियाँ पहनाई जाने लगी। गौरी रो कर दरोगा की ओर भागी। उसने उसके पाँव पकड़ लिये और रोकर बोली—"दरोगा साहब ! इन्हें मत ले जाओ। हथकड़ी न पहनाओ। मेरे बच्चे भूखे मर जायेंगे। गलती इनकी नहीं महतो की थी।"

दरोगा ने गौरी को झिटक दिया और दूर हट कर खड़ा होता हुआ तीखे स्वर में बोला—"चल हट मुझको राह बताती है। तुम लोग बड़े कमीन हो। जलालत तुममें खूब भरी है।"

गौरी रोती रही। मँगरू निश्चल खड़ा था। उसके चेहरे पर न चिन्ता थी और न घबड़ाहट के चिन्ह। रोते-रोते गौरी उसकी ओर बढ़ी

तब तक सिपाही उसे लेकर आगे चल दिये ।

जब गौरी रोकर पति के पीछे भागी तो रतन भी रोने लगा खूब जोर-जोर से । वह आगे जा सिसकता हुआ पूछने लगा उन सिपाहियों से जो रस्सी पकड़े थे हथकड़ियों की । वह बोला—"कहाँ लिये जा रहे हो बापू को ? उनके हाथ क्यों बाँधे हैं ? खोल दो, न ले जाओ । बापू ! ओ बापू !! तुम इनको मना क्यों नहीं करते ? देखो माँ रो रही है ।"

सिपाहियों ने रतन को कुछ भी जवाब नहीं दिया । वह रोता रहा । तब मँगरू ने उसे समझाया और कहा—"जाओ रतन घर जाओ ? मैं अभी आता हूँ ।" यह कहते-कहते उसकी हिचकी भर आई । रतन को सिपाहियों ने डाँट दिया । गौरी ने उसे अंक में भर लिया ।

दोनों माँ-बेटे रो रहे थे और मँगरू चला जा रहा था सिपाहियों के साथ । पड़ोसी मन ही मन हँस रहे थे । वे आपस में कानाफूसी कर रहे थे ।

: १० :

गौरी दिन भर भूखी-प्यासी पड़ी रही । बच्चे भी बिल-बिलाते रहे । लेकिन गाँव का एक बच्चा भी नहीं गया उसके घर जो सहानुभूति के दो बोल बोलता और पानी-बूंद को पूछता । गौरी के मस्तिष्क में आँधी सी चल रही थी । उसे लग रहा था कि भगवान उस पर रूठ गया है । इसीलिए यह दिन देखने को मिला । कौन जानता था कि यह सब कुछ हो जायेगा । और वे (मँगरू) गिरफ्तार हो जायेंगे ।

गौरी न जाने क्या-क्या सोचती रही । साँझ को वह उठी । देखा एक हाँडी में थोड़े से चावल पड़े थे और दूसरी में कुछ दाल । रोते-रोते उस की आँखें सूज गईं, वे लाल हो गईं थीं और अब आँसुओं का नाम तक न था । उसने पानी भरा । मुँह धोया । चूल्हा जलाकर खिचड़ी चढ़ाई और जब वह पक गई तो थाली परोस कर रतन के सामने रखी । उसने कहा—"माँ तुम भी खाओ ? बापू नहीं आये बहुत देर हो गई । कहाँ

गये हैं ? गाँव में हों तो मैं बुला लाऊँ।"

इस पर गौरी को बडी जोर की रुलाई आई; लेकिन वह मन मसोस कर रह गई। उसने हिम्मत से काम लिया। वह आँसुओ को अन्दर ही अन्दर पीती हुई बोली—"तुम्हारे बापू गाँव मे नहीं हैं, दूर गये हैं। कई दिन बाद आयेंगे। ले खा ले बेटा रात बहुत हो गई है। तू खा के लेट फिर मैं खाती रहूँगी। तनिक रूपा को उठा लाऊँ। आज दिन भर हो गया उसे कुछ नही मिला।"

यह कहकर गौरी वहां से उठने लगी तो रतन ने उसकी धोती पकड़ ली और जिद करके बोला—"नही माँ मैं अकेले नही खाऊँगा। तुम भी तो भूखी हो।"

अब गौरी अजीब परेशानी मे पड़ गई। कोई चारा न देख वह बोली —"अच्छा ठहर ! मैं रूपा को ले आऊँ।"

और जब गौरी रूपा को लेकर आयी तो वह अपने हाथो से खिलाने लगी रतन को। लेकिन रतन मचल गया, भिड़ पकड गया। वह बोला —"नही माँ नही ! मैं अकेले नही खाऊँगा तुम भी खाओ ?"

"कैसे कहूँ मेरे लाल। तू समझता क्यों नही। मैं बाद मे खाऊँगी। अभी भूख नही है।" यह कहते क्षण गौरी की आँखो में बरबस ही आँसू आ गये। उसने जल्दी से मुँह घुमा लिया।

और रतन वह भी रुआँसा हो आया। वह उठकर खड़ा हो गया और एक कौर खिचडी हाथ मे ले माँ के मुँह की ओर बढाता हुआ बोला— "तुम झूठ बोलती हो माँ ! तुम भूखी हो ! लो मैं तुम्हें अपने हाथ से खिलाऊँगा।" यह कहकर रतन ने गौरी के मुँह में कौर रख दिया।

बहुत रोकने पर भी गौरी की आँखो से आँसुओ की धारा बह चली। वह पुत्र को खिलाने लगी अपने हाथो से। उसकी गोद मे लेटी रूपा सूखा आँचल मुंह में दबा चिचोड़ रही थी। उसमे दूध की एक बूंद भी नही थी। वह कौर चबिला रही थी लेकिन वह बाहर निकला पड रहा था। उसकी आँखों के सामने उसका जीवन देवता खड़ा था हथकड़ियाँ [illegible]

वह भूखा था।

गौरी शोक की तन्द्रा में डूबी बैठी थी। अतीत उसकी आँखों के सामने नाच रहा था। वर्तमान से बेसुध थी। आज रात काली थी अमावस की। घर में सन्नाटे का आलम था और आँगन के एक कोने से मुहरी की ओर जाती हुई छछूंदर चीं-चीं कर रही थी।

: ११ :

मँगरू हवालात में बैठा अपनी बेबसी पर मन ही मन रो रहा था। वह सोच रहा था कि गुस्सा अन्धा होता है, उसमें आदमी पागल हो जाता है। वह तो कहो ग़नीमत हुई कि रामचरण महतो का सिर्फ सिर ही फूटा। अगर कहीं वह चल बसा होता तो फिर मुझे फाँसी होती। गौरी रतन और रूपा तीनों अनाथ हो जाते। न जाने कैसी बीत रही होगी बेचारी गौरी पर। सारा गाँव मेरा ही नहीं उसका भी दुश्मन है। कोई उसे सहारा नहीं देगा, दिलासा नहीं और न यही करेगा कि तुम चिन्ता न करो गौरी! मैं मँगरू की जमानत करने जाता हूँ। भगवान क्या तुम्हारे दरबार में गरीबों की सुनवाई हमेशा देर में ही होती है। तुम इतने कठोर क्यों हो? पसीजते क्यों नहीं? कैसा होगा मेरा रतन? वह कितना रोया था मेरे चलते समय। तब सिपाहियों ने उसे डाँट दिया था मैं बदनसीब न होता तो यहाँ हवालात में आकर क्यों बन्द होता। क्यों मार खाता और क्यों गालियाँ सुनता जबकि दोषी मैं नहीं कोई दूसरा ही है।

मँगरू इसी तरह सोचता रहा। दो रातें और एक दिन वह रहा थाने में। इस बीच में कोई भी उसकी पैरवी के लिए नहीं गया। वह राह देखता गौरी की कि शायद वह आयेगी।

मँगरू का चालान कस्बे से जिले की जेल में भेज दिया गया और गौरी थाने नहीं पहुँच पाई। वह पहुँचती भी तो कैसे। उसके सामने एक नहीं अनेकों मजबूरियाँ थीं। गाँव की हालत यह हो रही थी कि उससे

सीधे बोलना भी लोग गुनाह समते थे। विन्दो गाँव भर मे यह जहर फैला रही थी कि गौरी का रामचरण महतो से अनुचित सम्बन्ध था। जब मँगरू को यह भेद मालूम हुआ तो सारा दोष मढ़ दिया गया महतो के सिर और उसने औरत की बातों में आ महतो पर हाथ छोड़ दिया। ऐसी औरत गाँव में नही रह सकती। इससे बहु-बेटियों पर बुरा असर पड़ेगा। गौरी बदचलन है साथ ही बदजबान भी। सीधे स्वभाव उससे कह दिया जाये कि वह गाँव छोड़ दे और किसी दूसरी जगह चली जाये।

इस तरह गाँव भर में गौरी की थू-थू हो रही थी। कोई उसे काम नहीं देता। औरतें उसके मुँह पर उसे धिक्कारती। आदमी उसे देखते ही मुँह घुमा लेते। वह तंग आ गई। उसका मन हुआ कि घर से बाहर ही न निकले; लेकिन यह कैसे हो सकता था। बच्चों का सवाल सामने था। पेट की समस्या को लेकर गौरी उलझी रही भ्रमजाल मे। उसने कई बार कोशिश की; मगर थाने नही जा पाई और जिस दिन जाने का पक्का निश्चय किया उसी दिन सबेरे उसने गाँव भर में यह चर्चा सुनी कि थाने में मँगरू पर मार बहुत पड़ी है और कल उसका चालान जेल भेज दिया गया।

गौरी काठ हो गई यह सुनते ही। अब न उसमे शक्ति रही और न साहस। वह जीवनन्मृत-सी हो घर के एक कोने मे आ पड़ रही। लेकिन वहाँ भी शान्ति उसे देखते ही पलायन कर गई। कर्तव्य का देवता उसके सामने आकर खड़ा हो गया। रतन भूखा था, रूपा रो रही थी। वह माँ थी। उसका हृदय चीत्कार कर उठा। उसके अन्त करण ने कहा कि चल उठ खड़ी हो। इस तरह हाथ-पैर ढीले कर देने से काम नही चलेगा। बच्चे भूखे हैं। उनके पेट के लिए चारा जुटा, पति जेल मे है उसके छुड़ाने की कोशिश कर। इस गाँव मे काम नही मिलता है दूसरे गाँव में जा। तू बैठी रहेगी। तेरा संसार लुट जायेगा तेरी ही आँखों के सामने। तू यह भूल जा कि तू एक औरत है। तू माँ है जोरू है किसी गरीब की। तू अपना फर्ज निभा। तेरा कल्याण इसी में है।

गौरी विचलित हो उठी। उसने रतन की उँगली पकड़ी और रूपा को गोद में उठा लिया और चल पड़ी गाँव से दूर दिशा की ओर। लेकिन यह क्या ? आस-पास के गाँवों का वातावरण भी उसी भाँति दूपित था जैसे पार्वतीपुर का। लोग उसका परिचय पाते ही कहने लगते कि जाओ। जाओ ! तुम्हारे लिए मेरे यहाँ काम नहीं है। बदचलन आदमी हो या औरत कोई उसकी मदद नहीं कर सकता।

गौरी के कान फूटे जा रहे थे अपनी बदनामी सुनते-सुनते। वह सोच नहीं पा रही थी कि क्या करे ? पति को उसने भगवान के सहारे छोड़ रखा था। उसका विश्वास था कि अगर वे सच्चे हैं तो सजा महतो को मिलेगी उनको नहीं। इज्जत से बड़ी कोई चीज दुनिया में नहीं होती। अपनी इज्जत के लिए आदमी दूसरे का खून भी कर देता है; लेकिन वह गुनाहगार नहीं कहा जाता।

गौरी घर-घर डोली, गाँव-गाँव भटकी; लेकिन कहीं भी उसे काम नहीं मिला। तब वह हार मानकर घर लौट आई। एक लोटा छोड़ बाकी सब बरतन पीठ पर लाद वह ले गई कस्बे के बाजार में। फूल और पीतल के बरतन मिट्टी मोल बिके। वहीं बाजार से उसने जौ, चना और दाल खरीदी फिर घर आई। थकी-हारी होने पर भी चक्की पर बैठी। आटा पीस, रोटी बना, रतन को खिला उसने संतोप की साँस ली।

रात को गौरी लेटी तो उसे नींद नहीं आई। वह सोचती रही अपनी समस्या पर कि मेरा हाल, पानी से भी पतला हो गया है। आज मिट्टी की हाँड़ी में दाल पकाई, मिट्टी के कूँडे में आटा गूँधा और मिट्टी की ही प्याली में खिलाया अपने लाल को। न जाने कैसे बुरे दिन आ गये हैं। उधर मजदूरी नहीं मिलती। घर में रोटियों के लाले पड़े हैं, उधर गाँव वाले मुझे फूटी आँखों भी नहीं देखना चाहते। कहाँ जाऊँ। मैं तो कहती हूँ कि धरती फट जाये और मैं उसमें समा जाऊँ। लेकिन है कोई ऐसा जो मेरी औलाद को खिलाये पिलाये और लाड़ से रखे। जमाना हँसी उड़ाता है, हमदर्दी नहीं करता। यही लोक-रीति है। कैसे रहूँगी

मैं यहाँ ? कब तक चलेगा यह थोड़ा सा अनाज ? भगवान मुझे न दे, बच्चों को तो दे। क्योंकि मुझे माँगने से भीख भी नहीं मिलती। कैसे जियेंगे ये ? अच्छा मैं दूसरी राह चलूँगी। उसमें तो किसी का कुछ नहीं जाता।

रात भर गौरी को उलझन रही। उसे नींद नहीं आई। सवेरा होते ही वह निकल गई पश्चिम की ओर। गाँव से लगभग दो मिल की दूरी पर ढाक के पेड़ थे। उसने पत्ते तोड़े। बड़ा-सा गट्ठर बाँधा और उनको बेच आई बाजार में। लेकिन जब घर लौटी तो देखा गाँव के सोबरन काका दरवाजे पर लट्ठ लिए खड़े थे। देखते ही वे बोले—"ला गौरी। रख दे सब पैसे तू नहीं जानती कि इधर के ढाक का जंगल मेरे हिस्से में है। वहाँ से जो लोग पत्ते लाते हैं वे मुझे पैसे देते हैं और तू बिना पूछे ही कैसे तोड़ लाई। आगे से पैसे पहले जमा कर देना फिर पत्ते तोड़ने जाना।

गौरी सोबरन का मुँह देखकर रह गई। उसने कुछ कहना चाहा; लेकिन फिर न जाने क्या सोच आँचल में बँधे सब पैसे निकाल कर उसकी ओर बढ़ा दिये।

सोबरन ने पैसे लिए, गिने, एक रुपया पाँच आना था। एक रुपया उसने अपनी अन्टी में खोंस लिया और पाँच आने गौरी के सामने फेंकता हुआ बोला—"एक रुपया मेरा हो गया और ये रहे पाँच आने तेरी मजदूरी के।"

सोबरन चला गया। गौरी किंकर्त्तव्यविमूढ़-सी वहीं खड़ी रही। पैसे सामने पड़े थे जिनको रतन बीन रहा था। रूपा की रोने की आवाज बाहर तक आ रही थी। लेकिन गौरा उसे नहीं सुन रही थी। उसे लग रहा था कि जिस धरती पर वह खड़ी है खूब तेजी के साथ घूम रही है। आसमान नीचे आ रहा है और वह उसके नीचे दब जायेगी।

: १२ :

यद्यपि गाँव पार्वतीपुर से गौरी का जी ऊब गया था वह वहाँ से आँखें फेर कहीं और चली जाना चाहती थी; लेकिन पति की याद कहती कि घर में रहो। घर सूना और अंधेरा नहीं रहना चाहिये। उसमें दिया जलता रहे तो वंश का बिरवा बढ़ता रहेगा। बरक्कत एक दिन अपने आप ही आँगन में आकर खड़ी हो जायेगी। यह सोच वह रह जाती। दिन भर भटकती काम की तलाश में और रात को अपने बच्चों को गले से लगाकर सो जाती।

एक दिन गौरी उदास बैठी थी गांव के बाहर कुएँ की जगत पर। वह वापस लौट रही थी। बहुत थक गई थी, लम्बी-लम्बी साँसें ले रही थी। तब तक उधर से कंजड़ों का एक छोटा-सा काफिला निकला। वह काफिला वहीं रुक गया; क्योंकि सांझ हो रही थी। वहाँ गौरी को सुस्त बैठे देख एक बुढ़िया ने पूछा। गौरी दुःख से भरी हुई थी। वह रो-रोकर अपनी कहानी कहने लगी। तब बुढ़िया बोली जोर देकर कि चलो तुम हमारे साथ। हम लोगों का अगला पड़ाव गाँव तेजीपुर के पास होगा। वहाँ मरम्मत हो रही है पक्की सड़क की। मजदूरी तुम्हें भी मिल जायेगी। सड़क कुछ चौड़ी भी की जा रही है। करीब-करीब छः-सात महीने काम चलेगा। गांव-वालों के सहारे बैठोगी तो भूखों मर जाओगी। तुम नहीं जानती कि ये अमीर कहे जाने वालों लोग गरीबों का खून चूसते हैं और यही चाहते रहते हैं कि मरते दम तक उनसे बेगार लेते रहो।

बुढ़िया की बातें सुन गौरी को तसल्ली हुई। वह सोचने लगी कि तेजीपुर यहाँ से करीब आठ दस मील दूर है। वहाँ रोज सवेरे मजदूरी के लिए जाना और शाम को वापस लौटना यह कैसे हो पायेगा। गाँव मैं छोड़ना नहीं चाहती हूँ। सड़क पर मजदूरी करने वाली बात फिर कैसे हो सकती है। वह चल दी वहाँ से उदास मन भारी पाँव। जब घर आई उसे कोई चारा नहीं मिला तो उसी समय गई बाहर और रात में

ही कुछ पेड़ों की छालें ले आई। उन्हें उबाल कर खुद खाई और रतन को खिलाई। ये छालें बरगद, गूलर और जामुन की थीं।

दिन भर की थकी-हारी होने के कारण गौरी सो गई। सवेरे जब वह उठी तो कहीं काम पर नहीं गई। रात की बची हुई छाल मिट्टी की हाँडी में आग पर चढ़ा दी और झाड़ू लेकर आँगन बुहारने लगी। रतन स्कूल जा चुका था। रूपा लेटी हुई किलकारियाँ मार रही थी। गौरी का चेहरा उदास था। उसके माथे पर चिन्ता की रेखायें खिंच रही थीं। तभी सहसा बिन्दो ने घर में प्रवेश किया।

उसे देखते ही गौरी ने चारपाई डाल दी और बोली—"आओ दीदी बैठो ?"

लेकिन बिन्दो बैठी नहीं वह खड़ी रही और आँखों में बल डालकर बोली—"गौरी अब मैं समाई नहीं कर सकती। बहुत दिन राह देखी तुम लोगों की। कुछ दिन तक आठ आने रोज़ मिलते रहे, अब वे भी बन्द हो गए। मैं कल ही शहर जाती हूँ। वहाँ दावा करूँगी, रुपये तुम क्या दे पाओगी। मैं तुम्हारा मकान कुर्क करवा लूँगी।"

गौरी कुछ नहीं बोली। वह चुपचाप बिन्दो की ओर देखती रही और बिन्दो फिर कहने लगी—"हाँ तो सुन लिया तुमने फिर बाद में शिकायत मत करना। और कहो आजकल क्या करती हो ? कैसे तुम्हारे गुजर-बसर होती है ?"

इस पर गौरी रूखी हँसी हँसी और धीरे-धीरे कहने लगी—"बस समझ लो दीदी कि हवा खाती हूँ और पानी पीती हूँ। जमाना जितना सतायेगा उतना सहूँगी मैं। कोई भी अपना नहीं है, सभी गैर हैं। तुम भी दावा करने जा रही हो। इसलिए चुप हूँ कि उस मामले में मेरा कुछ भी कहना-सुनना बेकार होगा। बछड़ा खूँटे के बल पर कूदता है। आदमी की ताकत होती है। पैसा और औरत की ताकत उसका आदमी होता है। मैं सब तरह मिटी और लुटी बैठी हूँ। कोई भी आये दो पत्थर और मार दे सब सह लूँगी; लेकिन याद रखो दीदी ! यह मैं फिर कहे देती

हूँ कि मैं जिन्दा रहूँगी और जमाने से लड़ती रहूँगी।"

बिन्दो को गौरी की बातें अच्छी नहीं लगीं। वह छूटते ही कहने लगी—"रस्सी जल गई, लेकिन एेंठन नहीं छूटी। तुम्हारी जवान ही तुम्हारी दुश्मन है गौरी, सीधे बोलना सीखो। बेटा बनकर दुनिया खाती है बाप बनकर नहीं। तुम...।"

"हाँ क्यों नहीं दीदी! सच्ची बात कड़ुवी होती है और सबको बुरी लगती है। चाहे जो समझो मैं अब गाँव में किसी के सामने हाथ फैलाने नहीं जाऊँगी। मेरा कोई नहीं है। मैं उनके (मँगरू)आने तक यहाँ टिकी भी हूँ। फिर यह गाँव छोड़ दूँगी। बेकार दावा करोगी। मकान तब तुम्हीं को सौंपती जाऊँगी।"

गौरी की यह बात सुन बिन्दो आपे से बाहर हो गई। वह उसे जली कटी सुनाने लगी कि तुम्हारी जवान बारह हाथ की है तमीज और तहजीब तुममें छू भी नहीं गई है। देखे जाओ मैं मकान लेती हूँ या नहीं। तू चली जायेगी और गाँव छोड़ देगी यह किसी और को समझाना। बिन्दो कच्ची गोलियाँ नहीं खेली है वह तुम्हारी नस-नस पहचानती है।

इस तरह बड़बड़ाती हुई बिन्दो वहाँ से चली गई और गौरी आँगन बटोरने लगी। उसके मन में इस समय वही बात बार-बार गूँज रही थी कि बिन्दो मेरा घर हड़पना चाहती है, उस पर कब्जा करना चाहती है। न जाने उसे इतना लालच क्यों सता रहा है। जो कुछ अब तक हुआ वह मैंने देखा, जो झेलना पड़ा वह सहा और अब जो आगे आयेगा उसे भी देखूँगी। देखूँ कितना दुःख मिलता है और दुनिया कितना सताती है मुझे। मैं डर कर भागूँगी नहीं, मुसीबतों से लड़ूँगी। कहा जाता है कि हिम्मत ही जिन्दगी की सबसे बड़ी नियामत होती है। जिसने हिम्मत हार दी वह फिर कहीं का नहीं रह जाता।

गौरी यद्यपि बहुत समाई कर रही थी; लेकिन आखिर थी तो स्त्री ही। वह घबड़ा गई और सोचने लगी कि उनके आने तक मैं यहीं

ठहरना चाहती हूँ। अगर इसके पहले ही बिन्दो ने घर पर दखल कर लिया तो फिर कहाँ भटकूँगी। न जाने क्या-क्या बदा है तकदीर में और क्या-क्या भोगना पड़ेगा। खैर मैंने भी तय कर लिया है कि काँटों पर सोऊँगी, आग पर जलूँगी, जमाने से नहीं डरूँगी। बिन्दो घर ले लेगी तो ले ले। मैं उसके सामने मड़ैया डालकर रहूँगी। कुछ नहीं मिलेगा तो मिट्टी खाऊँगी। समाई की ताकत होनी चाहिए। एक दिन दुःख के बादल अपने आप ही छँट जाते हैं। क्यों डरूँ किसी की धमकी से। पैसे वाला तो हमेशा नशे में रहता है वह कुछ-न-कुछ कहता ही रहता है।

गौरी समस्याओं से लड़ते-जूझते इस निष्कर्ष पर पहुँच गई थी। सारे गाँव में उसकी निन्दा हो रही है और ढिंढोरा पीट रही थी बिन्दो, कि गौरी बदचलन ही नहीं, बदजात ही नहीं, बल्कि बेशर्म भी हो गई है वह हर आदमी पर कीचड़ उछालने की कोशिश करती है।

: १३ :

रामचरण महतो स्वस्थ होने लगा था। इधर मुकदमा भी शुरू हो गया था मँगरू का। महतो अदालत में जाता हर पेशी पर। अस्पताल से उसे छुट्टी मिल गई थी। अब सिर्फ दिन में एक बार उसे जाना पड़ता पट्टी बँधवाने के लिए। गाँव भर में चर्चा चल रही थी कि मँगरू पर मुकदमा चल रहा है। उसकी सफाई के बयान बिल्कुल खराब हो गये। उसकी तरफ से सरकारी वकील पैरवी कर रहा है। जिरह में उसने महतो को बहुत तोड़ना चाहा, लेकिन महतो के बयान सच्चे थे। वह जिरह में नहीं टूटा। देखो! अब आगे क्या होता है।

और एक दिन सुना गौरी ने कि उसके पति को छः महीने की सजा हो गई है। यह सुनकर सन्न रह गई। उसे लगा जैसे उसका दिल बैठा जा रहा है, आँखों के सामने अँधेरा झुकता चला आ रहा है। वह रो नहीं सकी। उसके कलेजे में अंगारे दहकने लगे और धुआँ उठने लगा मस्तिष्क में। वह दो दिन तक खोई-खोई सी बनी रही। न घर से बाहर निकली

और न कहीं काम की ही तलाश में गई। रतन स्कूल से छुट्टी होने के बाद खुरपी और झोली लेकर चला जाता। वह पेड़ों की छाल छील लाता। वही दोनों समय उबाली जाती और सब लोग खाते।

तीसरे दिन सवेरे जब गौरी घर से बाहर जाने की तैयारी कर रही थी तो उसी समय बिन्दो आ पहुँची और आते ही बोली—"दावा मैंने दायर कर दिया है गौरी, अब तुम जानो और तुम्हारा काम। सीधे मुँह कुत्ते चाटते हैं। मैं भलाई करती रही और उसका बदला तुम मुझे बुराई से देती रही। जब तुम्हें जरूरत से ज्यादा शान है तो फिर मैं रियायत क्यों करूँ। अपना और कहीं इन्तजाम कर लो। बस समझ लो कि यह घर तुम्हारे हाथ से गया।"

इस पर गौरी व्यंग्यात्मक हँसी, हँसी और कहने लगी—"जब जायेगा तब जायेगा अभी से चिन्ता क्यों करूँ दीदी। आओ बैठो और कहो दावा दायर करने में कितने रुपए खर्च हुए ?"

अब बिन्दो जल-भुन उठी। वह बोली तीखे स्वर में—"तुम्हारी यह जुर्रत गौरी कि मुझे ताना मारती हो; बोल बोलती हो। जा कीचड़ का कीड़ा कीचड़ में ही रहेगा। तू कभी नहीं पनपेगी। तेरी हालत दिन पर दिन गिरती ही जायेगी।"

इसके बाद भी बिन्दो देर तक ऊट-पटाँग बकती रही। गौरी हँसती रही, मुस्कराती रही। तब वह खिसियाकर अँगारों पर पैर रखती हुई वहाँ से चली गई।

यद्यपि बिन्दो के सामने गौरी ने बहुत ही दृढ़ता से काम लिया था लेकिन अन्दर ही अन्दर वह काँप कर रह गई। अब वह बहुत परास्त हो गई थी परिस्थितियों से। उसके जी में आता कि बच्चों को लेकर किसी कुएँ में कूद पड़े या फिर जहर खा ले, बच्चों को भी खिला दे मगर यह सब सोचकर ही रह जाती, कुछ कर नहीं पाती। उसके मन में यह बात घर किए थी कि छः महीने की सजा साढ़े चार महीने में पूरी हो जाएगी। वे (मँगरू) जेल से छूटकर घर आयेंगे तब यहाँ किसी को

न पाकर हैरान होंगे। घर गिर जाये, उजड़ जाये या उसमें आग ही लग जाये; लेकिन जब घर वाले बरकरार रहते हैं तो किसी को दुःख नहीं होता। पिछला दुःख भूल सभी आगे बढ़ने की कोशिश करते है।

गौरी जब सोचते-सोचते बहुत थक जाती तो बच्चों के साथ मन बहलाने की कोशिश करती। वह अपने पुत्र और पुत्री को बचपन के रंग में रंगने लगती। दुर्बल मन उसे शान्ति नहीं लेने देता। वह उसे कोचता रहता निरन्तर और भय के दृश्य उसकी आँखों के सामने प्रस्तुत करता रहता।

: १४ :

रामचरण महतो का व्यवहार उस ढंग का था जो बहेलिया हिरणों के साथ करता है। वह तीर चलाता है, हिरण भागता है और तीर खा कर जब गिरता है, फिर भागता है; किन्तु बहेलिया उसका पीछा नहीं छोड़ता। वह तीर पर तीर चलाता जाता है। इसी तरह महतो की भी यह नीति थी कि बुड्ढा मरे चाहे जवान, उसे हत्या से काम। उसकी आँखों मे गौरी की सुन्दरता समा रही थी। वह उसे साम, दाम, दण्ड और भेद किसी तरीके से भी अपने वश मे करना चाहता था। इसीलिये सबसे पहले उसने मीठी छुरी चलाई, परोपकारी वृत्ति का बहाना लिया, फिर बदल गया उस दिन मँगरू के सामने, गौरी पर लांछन लगाया और अब वह सोच रहा था कि गौरी की बदनामी सारे गाँव में फैल रही है। क्यों न मैं जाकर उसे ताकत से अपने काबू मे करूँ। बद अच्छा और बदनाम बुरा होता है। कोई भी उल्टी-सीधी बात हुई तो कलंक का टीका उसके माथे पर लगाते तनिक भी देर नहीं लगेगी।

यह सोच महतो एक दिन आया पार्वतीपुर दिन ढले। तब गौरी कुछ जड़ें लाई थी पेड़ों की। चूल्हे पर मिट्टी की हांडी चढ़ी थी, उसमें जड़ें चुर रही थी फुदुर-फुदुर। उसने दिया जलाकर रखा ही था और बाहर की ओर जा रही थी रतन को बुलाने कि मुस्कराता हुआ महतो आ

में आकर खड़ा हो गया। उसे देखते ही वह उबल पड़ी और फटकार कर बोली—"अब यहाँ क्या लेने आये हो ? चले जाओ महतो मैं तुम्हारी सूरत भी नहीं देखना चाहती हूँ।"

"इतनी नफ़रत।" यह कहता हुआ महतो आगे बढ़ा।

गौरी पीछे हट रही थी महतो आगे बढ़ रहा था। उसके चेहरे पर दुष्ट हँसी नाच रही थी। गौरी काँपती जा रही थी और बोलती जा रही थी—"मैं कहती हूँ चले जाओ महतो। मेरे पीछे क्यों पड़े हो ? मैं···।"

"तुम एक खूबसूरत बला हो गौरी और भौंरा उसी पर मँडराता है जो फूल सबसे सुन्दर होता है। आज मैं तय करके आया हूँ कि तुमने और मँगरू ने मेरी बेइज्जती की है उसका बदला जरूर लूँगा। मैं ··।"

गौरी बीच में ही बोल पड़ी—"कैसा बदला ? कैसी बेइज्जती ? तू मुझ पर जोर आजमाने आया है। अभी जलता हुआ चैला तेरे मुँह में लगाती हूँ।" यह कहकर वह चूल्हे की ओर बढ़ी। उसने हाथ में जलता हुआ चैला उठा लिया, फिर झपटी महतो की ओर। लेकिन अब तक तरकीब से पीछे आकर महतो ने उसका हाथ पकड़ लिया। उसने चैला छीनकर फेंक दिया और दोनों हाथों से खूब मजबूती के साथ गौरी के दोनों कन्धे पकड़ हिलाता हुआ बोला—"मेरा मुँह जलायेगी। कितना गुस्सा आता है तुझे। सच कहता हूँ गौरी कि तेरा गुस्सा मुझे बड़ा प्यारा लगता है। अब बोल क्या कहती है। बुला किसी अपने हमदर्द को तुझे आकर बचाये। पुकार किसको पुकारती है। गौरी आज मेरी जीत होगी और तेरी हार।"

गौरी जोर-जोर से पुकारने लगी—"रतन ! ओ रतन !! अरे क मर गया जाकर। जल्दी आ।"

इस पर महतो ठहाका मारकर हँसा और बल प्रयोग करने लगा गौरी पर। नन्हीं रूपा रोने लगी और गौरी काटने लगी उसके हाथों को दाँतों से। इस समय उसका रूप विकराल बन गया था। उसके बालों

की लटें सामने आकर झूल रही थीं। माथा, आँखें, बल्कि यों गले तक वे चेहरे को काली नकाब पहना रही थी। वह नाखूनों से महतो की देह चकोटती। महतो जब खिसिया गया तो उसने ढकेलना चाहा गौरी को। लेकिन वह बाज बन गई थी और कबूतर की तरह दबोच रखा था महतो को।

महतो विचलित हो उठा। जब कोई चारा न चला तो उससे भागते ही बना। और गौरी, जिसकी आँखों में खून उतर आया था साक्षात् चण्डी बन रही थी। वह हाथ में एक टटोंगा (डंडा) ले उस पर झपट रहीथी। वह भाग रहा था चिल्लाता हुआ। और अब बाहर मुखिया की चौपार के पास आ कह रहा था—"देखो मुखिया, इस बदजात औरत को देखो। रुपये माँगने गया तो डंडा लेकर दौड़ती है। मंगरू की टाँग अच्छी कर दी इसने एक पैसा नहीं दिया। उल्टे सोलह दूनी आठ पढ़ाकर मुझसे पच्चीस रुपये और ठग लिये। आज माँगने गया तो देखो मेरी यह गति की? मैं कहता हूँ मुखिया कि यह औरत है या नाहर। राम, राम। कान पकड़ता हूँ अब इस गाँव में कभी नहीं आऊँगा। मैं ऐसा नीच नहीं हूँ मुखिया कि अपनी औरत रहते दूसरी की ओर आँख उठा कर भी देखूँ। यह मुझसे नाजायज ताल्लुक रखना चाहती है; लेकिन मेरे वश का यह रोग नहीं है।"

अब मामला तूल-अर्ज पकड़ गया। गौरी डंडा लेकर जुट गई महतो पर। वह दइया तोबा मचाने लगा। चौपार में बैठे हुए लोग बाहर आ गये। सबने गौरी को पकड़कर हटाया और कुछ लोग महतो को वहाँ से लिवाकर अलग चले गये।

गौरी घर की ओर लौट रही थी इस गति में जैसे समर भूमि से कोई वीरांगना लौट रही हो विजय प्राप्त करके।

: १५ :

बिन्दो ने मंगरू पर दावा किया नहीं था। वह गौरी से झूठ बोली

थी केवल धमकी देने के लिए। उसकी नियत खराब हो रही थी। वह गौरी का मकान हड़पना चाहती थी और उसे बेचकर कुछ सौ, दो सौ रुपये खड़े करने की कोशिश में थी। अब उसे मौका मिल गया। गाँव भर में चख-चख का बाजार गरम था। मुखिया, रामदयाल दादा, सोबरन और सभी बड़े-बूढ़े खिलाफ थे गौरी के। पंचायत बैठी थी और यह तय हो रहा था कि अब गोरी को गाँव में नहीं रहने दिया जायेगा। वह बद-चलन है और साथ ही बेहया भी।

सभी पंच अपनी-अपनी बात कह रहे थे। सरपंच सिर हिला रहा था स्वीकारात्मक। बिन्दो अपना आधा चावल पकाती हुई सभा में खड़ी हो एक नई बात कहने लगी। भीड़ में सन्नाटा छा गया और लोग उस का मुँह देखने लगे। वह कह रही थी—"तुम सब लोग मुझे ही बुरा कहते थे कि मैं ज्यादती करती हूँ मँगरू और गौरी पर। अब देख लिये करिश्मे गौरी के। मैं कहती हूँ कि इसे जल्दी-से-जल्दी गांव से निकालो; लेकिन किस तरह खूबसूरती के साथ एक पंचायत नामा लिखा जाये उसमें सबके दस्तखत हों और इस तरह मैं कब्जा कर लूँ गौरी के घर पर। जब घर छिन जायेगा तो वह रोती बिलखती यहाँ से चली जायेगी। कौन देगा पनाह उसे। और कहती है कि मकान चला जाये तो चला जाये मैं उसके सामने मड़ैया डालकर रहूँगी। सो इसके लिये यही समझ लो कि न नौ मन तेल होगा और न राधा नाचेगी। झोंपड़ी बनाने में भी रुपये लगते हैं और उसके पास तो फूटी कौड़ी नहीं है।"

सरपंच अब दोनों हाथ उठा धीरे-धीरे हिलाता हुआ सभा के मध्य खड़ा होकर कहने लगा—"हाँ बिन्दो ने नेक सलाह दी है हम लोगों को। हमें यही करना चाहिए। अब सब लोग सुन लो गौरी का रामचरण महतो के साथ कुछ नाजायज ताल्लुक था। उसी को लेकर कई बार झगड़ा-फसाद हो चुका है। गौरी किसी तरह भी गाँव में नहीं रह सकती। कल सवेरे ही बिन्दो उसके घर पर दखल करेगी और अगर गौरी अपने मन से न गई तो उसे जबरदस्ती गाँव से बाहर निकाल दिया जायेगा।"

"सरपंच ठीक कहते हैं। यह बिल्कुल सही है। हाँ यही होना चाहिए।" आदि-आदि आवाजें चारों तरफ से आने लगी। बिन्दो मन ही मन कुलक रही थी और गौरी को कुछ भी पता नही। वह अपने घर में पड़ी सिसक रही थी।

गौरी को न भूख लगी और न प्यास। क्रोध अब तक उसका शान्त नही हुआ था। वह कुछ भी सोच नही पायी थी। उसे लगता था कि किसी ने उसकी इज्जत के फूल को पत्थर से कुचल दिया है। वह बिल-बिला रही है और परेशान हो रही है। वह मन ही मन तिलमिला-तिल-मिला कर रह जाती। आवेश मे आ मुट्ठियाँ भीच लेती और दाँत पीसती हुई अपने आप ही बड़बड़ाने लगती—"महतो मेरी हाय तुम पर ऐसी पड़ेगी कि तुम्हें अपने किये पर इतना पछताना पड़ेगा कि जिन्दगी भर रोओगे, रोते ही रहोगे। कोई भी नहीं होगा तुम्हारे पास आँसू पोंछनेवाला।"

यह हालत थी गौरी की। वह स्वय ही परेशान थी। उसे क्या पता कि अभी उस पर एक और बहुत बड़ी गाज गिरने वाली है।

सवेरा हुआ। गौरी कही सोयी थी रात के अन्तिम पहर मे। दिन चढ़ आया था; लेकिन उसकी आँखें नही खुली। बाहर से किवाड़े खटके, आवाजें आयी कुंडी बजने लगी अनवरत रूप मे। वह हड़बड़ा कर उठ बैठी और चौकन्नी हो देखने लगी सामने की ओर। रतन और रूपा, वे दोनों भी जाग गये। गौरी के मुँह से निकला—"कौन है ? कौन बुला रहा है ?"

इस पर बिन्दो ने जवाब दिया—"मैं हूँ बिन्दो। जल्दी खोलो गौरी तुमसे एक बहुत जरूरी काम है।"

गौरी ने किवाड़े खोले और भौचक्की-सी हो सबकी ओर देखने लगी। उसका मन किसी गुप्त भय की आशका से काँप उठा कि ये सब लोग क्यों आये है ? क्या काम है मुझसे ? बिन्दो अभी कह रही थी कि एक बहुत जरूरी काम है। क्या काम है, यह कुछ समझ मे नही आता।

गौरी स्तम्भित मुद्रा मे खड़ी थी। इतने मे बिन्दो ने उसकी बाँह

पकड़ी और झटककर अपनी ओर खींचती हुई बोली—"चल निकल बाहर। मैंने पंचनामा लिखवाकर तुम्हारे मकान पर दखल कर लिया है। अब यह मेरा है, तुम अपनी राह नापो।"

गौरी सकते की हालत में आ गई। वह आँखें फाड़-फाड़कर बिन्दो की ओर देखने लगी। तब तक मुखिया आगे बढ़ आये और कहने लगे गौरी से—"गौरी अन्दर जाओ! अपना सामान और बच्चों को ले आओ! इस घर में बिन्दो का ताला बन्द होगा अभी और इसी समय। पंचों ने फैसला कर दिया है कि कर्ज के बदले बिन्दो को मँगरू का मकान मिलना चाहिए।"

गौरी अब बड़ी जोर से गला फाड़कर चिल्ला पड़ी—'तुम सब आदमी नहीं जल्लाद हो। मुझे बरबाद करने पर तुले हो। मैं कहती हूँ कि तुम लोगों की आँखों में मैं शूल-सी क्यों खटकती हूँ। मैं नहीं जाऊँगी घर से कहीं। तुम लोग मुझे नहीं निकाल सकते। मेरा आदमी जेल में है और तुम लोग मेरे साथ यह सलूक कर रहे हो। चले जाओ सब। सताये को और क्या सताने आये हो भगवान भी बुरा मानेगा। मुझसे कहते हो घर छोड़ दो।"

अब एक साथ ही न जाने कितनी आवाजें आने लगीं कि नहीं इसमें तनिक भी रियायत नहीं होगी। मकान पर इसी वक्त बिन्दो का कब्जा होगा।

गौरी रोती रही, कलपती रही। वह बिन्दो और अन्य लोगों को बुरा-भला भी कहती रही; लेकिन एक अकेला क्या कर सकता है जब उसके विपक्षियों की संख्या गिनने से बाहर हो। एक आदमी रूपा को ले आया। रतन जागकर पहले ही से वहाँ खड़ा था। सामान घर में था ही क्या एक लोटे को छोड़कर कोई बरतन तक न था। मिट्टी के बरतन लोगों ने बाहर फेंके। वे फूट गये। कपड़े एक ओर फेंक दिये गये। चारपाई बहुत पुरानी थी, वह फेंकते ही टूट गई। बस देखते-देखते घर में बिन्दो का ताला बन्द हो गया।

रतन अपना सामान धीरे-धीरे उठाकर एक जगह इकट्ठा कर रहा था। गौरी रो रही थी और सब लोग वहाँ से चले गये थे।

: १६ :

गौरी दोपहर तक अपने घर के दरवाजे पर पड़ी रही। रूपा को रतन ने एक कथरी पर लेटा दिया था और वह स्वयं दुबका हुआ बैठा था माँ के पास। सूरज आ गया था आसमान के बीचों बीच। उसकी सीधी किरणें चिनगारी सदृश प्रतीत हो रही थी। यद्यपि बरसात बीतने पर थी, शरद ऋतु का आगमन हो रहा था; लेकिन फिर भी इस समय गर्मी इतनी थी कि प्राणी मात्र के लिए असह्य हो रही थी।

रतन ने कहा माँ का आँचल पकड़ हठपूर्वक—"चलो माँ कहीं छाया में चलो। यहाँ बड़ी धूप है।"

उस पर गौरी ने ऊपर सिर उठाया और पुत्र की ओर देखा। उसके बाद उसने आँखें मूंद ली और न जाने क्या सोचने लगी।

रतन बार-बार जिद् कर रहा था वहाँ से चलने के लिये और गौरी धरना दिये बैठी थी न जाने क्यो ? इतने में जगी आया और आते ही उसको डाँट कर बोला—"अरे तू अब तक यहीं मौजूद है। मुझे हुक्म मिला है गाँव वालों के मुखिया की ओर से कि तुम्हे अभी और इसी वक्त गाँव से बाहर निकाल आऊँ।"

गौरी एक दम उठ खड़ी हुई और तड़पकर बोली—"किसकी हिम्मत है जो कि मुझे गाँव से बाहर निकालेगा ? शरम नहीं आती तुम लोगों को। मकान पर कब्जा कर लिया और अब चाहते हो कि मैं दर-दर ठोकरें खाती फिरूँ। जाओ कह दो मुखिया से कि मैं कहीं नहीं जाऊँगी यहीं रहूँगी। अपने मकान के सामने झोपड़ी बनाऊँगी।"

"हा - हा - हा - झोपड़ी बनायेगी। कौन रहने देगा तुझे यहाँ। आखिर किस दम पर फूलती है। अरे तू बदचलन है, आवारा है, हरजाई है। ऐसी कुल्टा औरत को गाँव में नहीं रहने दिया जायेगा।' यह कह

कर जंगी क्रूर अट्टहास करने लगा।

उस कड़ी धूप में भी लोगों की भीड़ इकट्ठा होने लगी। जिसके मुंह से सुनो वह यही कह रहा था कि बकने दो इसको। यह अगर गांव में रहेगी तो सारा गांव खराब हो जायेगा। इसी के पीछे महतो की खोपड़ी फटी, मंगरू बेचारा जेल में सड़ रहा है और फिर अभी ताजा-ताजा नाटक इसने खेला महतो के साथ दुबारा। इस बला को जितनी जल्दी हो सके गांव से बाहर कर दिया जाये।

लोग अपनी-अपनी कह रहे थे। गौरी बड़बड़ा रही थी। रतन रो रहा था और जंगी हाथ पकड़ कर खींच रहा था गौरी को। वह कह रहा था—"चल ! चलती है कि नहीं ! क्या अपनी दुर्गति करायेगी ?"

गौरी अबला थी और जंगी पुरुष। वह खिचती जा रही थी, घिसटती जा रही थी। उसका रोना और बड़बड़ाना बराबर जारी था। रतन रो रहा था। उसे कुछ लोगों ने सलाह दी। उसने कपड़े एक गठरी में बांधे, उसी में लोटा रख लिया। टूटी चारपाई और फूटे मिट्टी के बरतन आदि सब वहीं छोड़ दिये। गठरी सिर पर रख वह रोता हुआ चल दिया मां के पीछे-पीछे। रूपा को एक दूसरे व्यक्ति ने गोद में उठा लिया था। एक बड़ी-सी भीड़ इन सब के पीछे चल रही थी। क्वार की दोपहर तप रही थी जेठ की तरह और गौरी तड़फ रही थी। उसके दुःख का इस समय और छोर नहीं था।

× × ×

तीसरे पहर तक गौरी गांव के धूरे पर बैठी रही। फिर वह उठी रूपा को गोद में लिया। सिर पर गठरी रखी और रतन की उंगली पकड़ चल पड़ी अज्ञात दिशा की ओर। न कोई उसकी मंजिल थी और न कोई लक्ष्य। वह रास्ते में चल रही थी और सोच रही थी कि कहां जाऊं ? किसके घर जाकर ठहरूं ? सांझ होने वाली है, तनिक देर में दिन छिप जायेगा, रात आ जायेगी। मैं नन्हें-मुन्ने बच्चों को लेकर कहाँ रात काटूंगी। एक तो औरत जाति हूं दूसरे साथ में बच्चे। भगवान ने

दुखियों के लिए ऐसी कोई जगह नहीं बनाई जहाँ जाकर वे सिर छिपायें। ओह ! नहीं जानती थी मैं कि भाग्य ऐसा दिन भी दिखलायेगा, जब मैं सभी तरह लुट जाऊंगी और ठग ली जाऊंगी इस दुनिया के बाजार में। जहाँ मेरे गिरे हाल पर हंसने वाले ही मिलेंगे।

अनजान रास्ता धीरे-धीरे तय हो रहा था। धूप धीमी हो रही थी। आस-पास पगडंडी के किनारे ज्वार, मक्का आदि के खेत थे। रतन भुट्टे तोड़ता, उन्हें कच्चे ही चबाता और माँ की ओर बढ़ाकर कहता कि लो माँ तुम भी खाओ। सवेरे से भूखी हो। लेकिन गौरी के मुंह में एक दाना नहीं जा रहा था। वह चलती जा रही थी और सोचती जा रही थी। उसकी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था। वह कुछ भी नहीं तय कर पा रही थी।

रतन ने गठरी में अपनी रस्सी और डोर भी बाँध ली थी। एक जगह पक्का कुआँ मिला। उसने पानी भरा, खुद पिया माँ को पिलाया। खाली पेट पानी जाकर गौरी के पेट में लगा। वह पेट पकड़कर वहीं बैठ गई और रतन पूछने लगा—"कहाँ चल रही हो माँ ? मैं बहुत थक गया हूँ मुझसे अब चला नहीं जाता।"

इस पर गौरी ने पुत्र को वक्ष से लगा लिया और रोकर बोली—"कहाँ बताऊँ लाल।"

साँझ धीरे-धीरे उतरती आ रही थी धरती पर। वातावरण सुनसान होता जा रहा था। गौरी डर रही थी कि रात कहाँ बीतेगी। यह समस्या उसके सामने थी। उसके सिर में तेजी के साथ धमकन हो रही थी। दिमाग की एक-एक नस फटी जा रही थी। वह चारों ओर निगाहें दौड़ाती। सभी ओर सन्नाटा ही सन्नाटा नजर आता। सहसा हवा चलने लगी कुछ तेज होकर। फिर गर्द उड़ी और चलने लगी आँधी हहर-हहर करके। गौरी बहुत सहम गई। उसका कलेजा धक्-धक् करने लगा। उसने दोनों बच्चों को अंक में छिपा लिया और कुएं की चौड़ी जगत से उतर कर नीचे बैठ गई। अंधेरा खूब घना हो गया था। जितनी देर आँधी

चलती रही गौरी वहीं बैठी रही जब वह थमी तो पानी बरसने लगा।

बादल परस्पर टकरा कर बजते कड़कीले स्वर में, बिजली कौंधती, वह भी कड़कती बीच-बीच कर्कश स्वर में। आँवाझोर पानी बरस रहा था। गौरी घबड़ा गई थी। वह सोचने लगी कि अगर पानी बन्द न हुआ तो क्या मैं यहीं बैठी रहूँगी। बच्चे ठिठुर कर रह जायेंगे। उन्हें कुछ हो गया तो मैं क्या करूँगी। मेरे पास तो एक पैसा भी नहीं है।

और दूसरे क्षण फिर वही गौरी दूसरी बात सोचने लगी कि अच्छा मान लो पानी अभी थोड़ी देर में बन्द हो जाये तो क्या मैं इतनी रात में इस सुनसान में भटकूँगी छोटे-छोटे बच्चों को लेकर। मुझे लगता है कि रात यहीं गुजारनी पड़ेगी और कहाँ जाऊँगी मैं। रात को वे ही लोग सफर करते हैं जिनपर बाधा और विपत्ति पड़ती है या फिर जिनका काम ही सेवा करना होता है जैसे चन्द्रमा और नखत (सितारे) रात भर जागते हैं। धरती वालों को रोशनी देने के लिए।

पानी कुछ धीमा पड़ा फिर उसका वेग शनैः-शनैः कम होता चला गया। गौरी पगली-सी बैठी न जाने क्या-क्या सोच रही थी। अभी वह किसी निश्चय पर नहीं पहुँची थी कि सहसा कौंधा हुआ और दूर उसे एक जगह आग जलती देख पड़ी। आग की चमक देखते ही उसमें साहस का संचार हो उठा। पीछे दूरी पर सियार हुवा रहे थे। गौरी को वह वीरान जगह भयानक लगने लगी। उसने भीगी हुई गठरी जो बोझ में भारी हो गई थी। सिर पर रखी, रूपा को गोद में ले रतन की उँगली पकड़ी और चल दी उस ओर जहाँ सामने आग जलती हुई देख पड़ रही थी।

पानी भुसभुसी बूँदों में जो सुई से भी महीन थीं, बरस रहा था। गौरी चली जा रही थी आगे बढ़ती हुई। उसका कलेजा धक्-धक् कर रहा था, लेकिन साहस साथ दे रहा था और वह चली जा रही थी। तनिक आगे बढ़ने पर ही उसे मेढ़कों की टर्रटें-टर्र-टें सुनाई दी। वह खुशी से खिल उठी कि लगता है आगे ताल है, नहीं तो इन खेतों की पाँति

में मेढ़क कहाँ से आये। हो सकता है कि वहाँ कोई रहता हो। अरे! यह तो सामने मंदिर देख पड़ रहा है। वहीं एक बैलगाड़ी खड़ी है और एक आदमी उस पर पामरी ओढ़े बैठा चिलम पी रहा है, दूसरा मंदिर के चबूतरे पर लकड़ियाँ जला रहा है। वह चबूतरे पर जाकर बैठ गई। दोनों बटोहियों से उसकी इस तरह बातें हुई कि वे लोग आगे के गाँव में जा रहे हैं। यहाँ रास्ते में आँधी और पानी आ गया। रुक गये। अँधेरा ज्यादा था। इसलिए गाड़ी में रखी अरहर की लमे तोड़कर जलायीं।

तुम कौन हो? और कहाँ जा रही हो? दोनों आदमियों के इन प्रश्नों का उत्तर गौरी केवल इतना ही दे पायी कि यहीं पास ही उसका गाँव है। उसका आदमी पीछे आ रहा है। उसके साथ उसके दोनों जवान भाई हैं। वे लोग पीछे खेत में ज्वार के भुट्टे तोड़ रहे हैं। घर ले जाकर उन्हें भूनेंगे, अच्छा है तुम लोगों ने आग जला रखी है। भुट्टे यहीं भुन जायेंगे।

दोनों आदमी गाड़ी पर बैठकर चले गए। अब गौरी ने एक ठंडी साँस ली और सोचने लगी कि बाल-बाल बची, नहीं तो अकेली जानकर ये दोनों गाड़ीवान मेरे साथ न जाने कैसा व्यवहार करते।

गौरी ने आग में अपने गीले कपड़े सुखाये, बिछौने आदि भी। माँ बेटे ने आग पर तम्बू की तरह हाथों से तान सुखा लिये। फिर एक जलती हुई आग की टुकड़ी लेकर गौरी मंदिर के अन्दर गई। उसमें मूर्ति ही नदारत (गायब) थी। कबूतरों की बीट इस कदर बदबू दे रही थी कि नथुने फटे जा रहे थे। ऊपर निगाह उठाकर उसने देखा कार्निस पर पाँति की पाँति गोलाकार कबूतर बैठे ऊँघ रहे थे। वे बीच-बीच पर फड़-फड़ाते जिससे रोयें खड़े हो जाते। मंदिर बहुत पुराना था। था वह छोटा-सा ही; लेकिन रात में गौरी को भयानक लग रहा था। वह बाहर आयी और चबूतरे पर खड़ी हो इधर-उधर देखने लगी। चबूतरे के दूसरी ओर मंदिर से लगा हुआ एक कच्चा छोटा-सा तालाब था। अब गौरी ने एक क्षण में ही तय कर डाला कि वह अभी मंदिर की सफाई करेगी। हाथ धोने के लिए तालाब मौजूद ही है। आग [illegible]

अपने आप ही बुझ जायेगी। मैं बच्चों को लेकर मंदिर में लेटूं बाहर लेटना ठीक नहीं।

यह सोच गौरी मंदिर में पड़ी बीट साफ करने लगी। रतन जलती हुई लग पकड़े खड़ा रहा। थोड़ी देर में सफाई हो गई। कथरी ऊपर-नीचे दोनों बिछा ली गईं। सब लोग लेट रहे। आग पर अब राख की परतें जम रही थीं। उसकी चमक बहुत कम हो गयी थी। वह धीरे-धीरे बुझ रही थी।

लेटते ही थोड़ी देर बाद गौरी झपक गई। बच्चे पहले ही सो गये थे। वह स्वप्न लोक में विचरने लगी। उसने देखा कि वह अपने घर के आँगन में बैठी है। होली का दिन है। बाहर फाग हो रहा है। ढोलक और मंजीरे बज रहे हैं और अंदर मुस्कराता हुआ मँगरू उसकी माँग में अबीर भर रहा है। वह शरमाती है, सकुचाती है और फिर खिलखिला कर हँस पड़ती है। उसने पति की ओर कृत्रिम भृकुटी चढ़ाकर शिकायत भरे स्वर में कहा—"जाओ ? मुझे शरम लगती है। अरे ! औरत और मर्द कहीं होली खेलते हैं।"

तब मँगरू ने पत्नी का हाथ अपने हाथ में ले लिया और दूसरा हाथ उसकी ग्रीवा पर रख हँसकर कहने लगा—"गौरी मैंने तुम्हारी माँग भरी है। यह शुभ है खिलवाड़ नहीं और मैं कहता हूँ कि तुम्हारी यह शरम भला किस दिन छूटेगी।"

इस पर हँसती हुई गौरी बोल पड़ी उठकर खड़ी हो पति के वक्ष से लग—"औरत की शरम उसकी धरोहर होती है। वह जीते जी नहीं छूटती। मैं शरमाती रहूँ, तुम हँसते रहो, यही मेरा सुख है यही मेरा सर्वस्व।"

इतने में बाहर से लड़कों की एक टोली आँगन में घुस आई पिचकारियों में रंग भरे। वे छूटने लगी दम्पति पर और लड़के कहने लगे मगन होकर बहुत पुराने लहजे में—"बुरा न मानो होली है।"

सहसा गौरी की आंखें खुल गईं। वह चारों तरफ देखने लगी। अँधेरा

ही अँधेरा था। रतन और रूपा सो रहे थे। उनकी साँसों का आभास हो रहा था। वह सोचने लगी कि अरे मैंने सपने में क्या-क्या देख डाला। वे बीते दिन अब इस जिन्दगी में क्या फिर आयेंगे। घर लुटा ही नहीं; बरबाद हो गया, तबाह हो गया। वे जेल में हैं और मैं यहाँ। पता नहीं यह कौन-सी जगह है। इधर के गाँवों के तो मैं नाम भी नहीं जानती। सभी कुछ मेरे लिए नया है। ओह ! यही कहा जाता है कि सपने की सम्पत्ति सच्ची नहीं झूठी होती है। मैं हँसी हूँ। खूब खुशी मनाई है सपने में। इसका उलटा फल मिलेगा, अभी रोना बाकी है। मैं रोती रहूँगी जब तक नाव किनारे पर नहीं लग जाती।

चिन्तित गौरी देर तक बैठी रही, फिर लेट रही थक कर। वह अपने दोनों हाथ रूपा और रतन के सिर पर रखे थी। बीट की दुर्गन्ध वातावरण में बुरी तरह समा रही थी। बीच-बीच में कोई कबूतर करने लगता गुटुर-गूँ, गुटुर-गूँ और कोई ओर से पर फड़फड़ा कर रह जाता। गौरी आँखें मूदती फिर खोल लेती। उसे लगता था कि अब नींद नहीं आयेगी। एक बार उचटकर फिर वह नहीं आती यह उसका दस्तूर है। जैसे एक बार उजड़कर फिर घर नहीं बस पाता। न जाने हम लोगों की क्या गति होगी। भगवान ही मालिक है।

: १७ :

फिर गौरी को नींद नहीं आयी। पौ फटी। सवेरा हुआ। वह उठी बच्चों को जगाया मंदिर से बाहर आई। तालाब पर जा कर मुँह-हाथ धोया। सामने थोड़ी दूर पर एक गाँव दिखलाई दे रहा था। वह गठरी उठा चल पड़ी उसी ओर। गाँव सड़क के उस पार था। लगभग मील भर चलने के बाद गौरी ने देखा काँचदार धोती पहने कुछ औरतें और आदमी सड़क पर दुरमुट चला रहे हैं, कुछ कंकड ढो रहे हैं बिछा रहे हैं और उनको चौरस कर रहे हैं। कुछ लोग सड़क के इर्द-गिर्द गड्ढों में भरा पानी मिट्टी के घड़ों में भर-भर कर ला रहे हैं और कुछ कंकड़ों पर छिड़-

काम कर रहे हैं। वह गई एक स्त्री के पास और उससे बोली—"क्या मुझे भी काम मिल सकता है।"

वह स्त्री सहृदय थी। वह दुरमुट छोड़ सड़क के किनारे आकर बैठ गई और अपनी धोती के खूँट में बँधी तमाखू खोल मुँह में रख उसकी एक पीक थूककर बोली—"हाँ-हाँ चार आदमियों की जरूरत है। कल सवेरे ही चार आदमी और नये रखे जायेंगे। ठेकेदार साहब आते होंगे। तुम उनसे मिल लो। कहाँ रहती हो, इसी गाँव में ?"

पहले तो गौरी ने अपनी परिस्थिति को छिपाना चाहा; लेकिन फिर यह सोचकर कि रोजी पाने के लिए झूठ नहीं बोलना चाहिए। झूठ से बढ़कर और कोई दूसरा पाप नहीं होता। उसने उस स्त्री को यह बताया कि गाँव में झगड़ा हो गया था आपस में। फौजदारी के मामले में उसका आदमी जेल गया है। वह दूर की रहने वाली है। महाजन ने घर कुर्की में ले लिया है। अब वह बेघरबार है। अगर काम मिल गया तो यहीं कहीं झोंपड़ी बना लेगी। कैसे भी हो बच्चों को तो पालना ही पड़ेगा।

उस स्त्री का नाम गंगादेई था। वह बहुत दयालु हो गई गौरी पर। उसने उसे दिलासा दी और कहा कि अभी ठेकेदार से तुम्हारी बात करवाती हूँ। काम तो मिल ही जायेगा और चलेगा भी कम से कम तीन महीने तक। सड़क के किनारे गाँव के करीब हम सब लोग अपनी छोटी छोटी तम्बुई लगा लेते हैं। ऐसे ही तुम भी रहो। तुम्हारा आदमी जेल से छूटकर आ जाये, फिर वह जो समझेगा, करेगा। मैं तुम्हारा साथ दूँगी पूरा-पूरा। मुझे हर गरीब और दुखिया पर तरस आता है।

गंगादेई की बातों से गौरी को जान-सी मिल गई। उसको सड़क पर काम मिल गया। वह गंगादेई तथा उसके पति के साथ बराबर में एक पाल डालकर रहने लगी।

अब गौरी कुछ साँस ले पाई थी। डेढ़ रुपया रोज उसे मजदूरी में मिलता। धीरे-धीरे उसने काम चलाऊ गृहस्थी के बरतन खरीदे, बच्चों को कपड़े बनवाये; अपने लिए धोती खरीदी। रतन की पढ़ाई के लिए उसे

दुःख था कि उसका यह साल बेकार गया। खैर कोई बात नहीं। जब वे जेल से आ जायेंगे तो कहीं न कहीं घर बनायेंगे ही। वहीं के स्कूल में रतन पढ़ेगा।

सारी बातों को भूलकर अब गौरी का ध्यान अक्सर जाकर केन्द्रित हो जाता पति की ओर। और वह सोचने लगती कि बस डेढ़ महीना और है उनकी सजा पूरी हो जायेगी। वे छोड़ दिये जायेंगे। कुछ रुपये मैंने इकट्ठा कर लिए हैं। शहर जाऊँगी, उन्हें जेल से लिवाकर लाऊँगी। एक धोती और कुरता खरीदूँगी उनके लिये। बस। फिर हम लोग पार्वतीपुर कभी नहीं जायेंगे। जहाँ अपनी इज्जत न हो वहाँ जाने से कोई फायदा नहीं।

गौरी इसी तरह आशा और विश्वास के सहारे गिन-गिनकर दिन काट रही थी। गंगादेई उस पर मेहरबान थी। शायद उसके लिये यह ईश्वरीय वरदान था।

: १८ :

दुःख के बाद जब सुख के दिन आते हैं तो आदमी भूल जाता है कि उसका अतीत कैसा था; लेकिन गौरी नहीं भूली थी अपने बीते दिन। उसे अच्छी तरह याद था कि वह किस कदर कुचली और पीसी गई है। दुनिया ने उसके साथ कैसा व्यवहार किया है। वह जब कभी ईश्वर का ध्यान करती तो दोनों हाथ बाँध नतमस्तक हो उससे यही भिक्षा माँगती कि भगवान सबका भला करो। दुनिया में कोई दुखी न रहे।

दिनों की गाड़ी बढ़ रही थी। रातें बीतती, दिन आते। सूरज निकलता और छिप जाता। ज्यों-ज्यों समय गुजरता जाता गौरी की प्रफुल्लता बढ़ती जाती। वह देखने लगती सुन्दर सपने कि वे (मँगरू) जेल से छूटेंगे तो उनके पास एक पैसा भी नहीं होगा। आखिर घर किस तरह आयेंगे और घर है कहाँ वह तो पराया हो चुका। वे भटकेंगे मुझको और बच्चों को ढूढ़ेंगे। सोचती हैं कि मुझे एक दिन शहर जाना चाहिए। क्योंकि

उनके छूटने में अब बहुत थोड़े ही दिन रह गये हैं। किस दिन रिहाई होगी यह पता लगाना जरूरी हैं। मैं जाऊँगी उनको अपने साथ लाऊँगी। भगवान हमारी मदद करेगा। हम लोग आराम से जिन्दगी बितायेंगे। न कोई झगड़ा होगा और न कोई झंझट, न कोई बाधा होगी और न कोई विपत्ति। मतलब यह कि उलझन नहीं रहेगी मुझे शान्ति मिल जायेगी।

इस तरह सोचते-सोचते गौरी ने कई दिन बिता दिये; लेकिन वह शहर नहीं जा पाई। बात यह थी कि समय कम रह गया था और सड़क का काम अभी बहुत बाकी था। इसीलिये ठेकेदार सवार था मजदूरों की छाती पर। वह उनसे जी-तोड़ मेहनत करवा रहा था। गौरी को छुट्टी नहीं मिली। वह मन ही मन दुखी होकर रह गई। अगर वह अपने मन से चली भी जाती तो काम उसके हाथ से निकल जाता। उसकी जगह दूसरा मजदूर रख लिया जाता। फिर उसके बाकी के पैसे मिलने में भी दिक्कत होती। वे मिलते तो जरूर लेकिन देर से। यही सब सोच गौरी मन मारकर रह गई। उसने किसी से कुछ नहीं कहा। यहाँ तक कि गंगादेई को भी नहीं बतलाया कि वह एक दिन के लिए शहर जाना चाहती है।

लगभग दो सप्ताह बाद काम कुछ ढीला पड़ा। तब गौरी एक दिन दोनों बच्चों को ले शहर की ओर चल पड़ी। वह कभी शहर नहीं गई थी। सड़क पर से लारियाँ निकलती थीं जिनके लिये वह जानती थी कि ये हरदोई से आती हैं। बीच-बीच के कस्बोंमें रुकती हैं और फिर वापस लौट जाती हैं। वह लारी पर बैठी। उसका पूरा और रतन का आधा टिकट पड़ा। सवेरे वह बैठी थी और दोपहर होने के पहले ही हरदोई पहुँच गई। वहाँ मोटर स्टैन्ड पर उतर पूछती-पूछती जेल की ओर चल दी। उसके पास पैसे थे। उसने पति के लिए कुछ मिठाई खरीदी और सोचा कि अगर किसी तरह मिलाई हो सकी तो यह मिठाई उन्हें खिलाऊँगी अपने हाथों। और न भी मिल पाई तो जेलर बाबू से कहूँगी कि मिठाई

उन तक जरूर पहुँचवा दें।

रतन भी खुशी से फूला नहीं समा रहा था कि वह शहर आया है। उसने केले की एक फली ली, आधी स्वयं खाई और आधी माँ को दी। फिर आगे बढ़ने पर खिलौनों की एक दुकान पड़ी। उसने एक रंग-बिरंगा झुनझुना लिया रूपा के लिए। रूपा किलकने लगी माँ की गोद में झुनझुना पाकर। तीनों प्रसन्न थे। जेल का फाटक सामने आ गया था। उस के सामने खाकी वर्दी पहने कंधे पर बन्दूक रखे एक संतरी टहल रहा था। गौरी उसके पास जा विनय भरे स्वर में बोली—"सिपाही भइया मैं पार्वतीपुर गाँव से आई हूँ। मेरा आदमी यहाँ जेल में बन्द है। तनिक पता कर दो कि वे किस दिन छूटेंगे। मैं उन्हें लेने आऊँगी।"

यह कहकर गौरी संतरी का मुँह देखने लगी और वह पूछने लगा —"क्या नाम है तुम्हारे आदमी का? कौन-सी बैरक में है? कितने दिन की सजा हुई थी उसे?"

इस पर गौरी रतन की ओर उन्मुख हुई और उससे कहने लगी—"अरे रतन अपने बापू का नाम बता सिपाही भइया को। वे हम लोगों को उनसे अभी मिला देंगे।"

"मंगरू नाम है हमारे बापू का। उनकी रामचरण महतो से लड़ाई हुई थी।"

रतन का यह जवाब सुनकर उसका समर्थन करती हुई गौरी संतरी से कहने लगी—"हाँ भइया फौजदारी के मामले में उन्हें छः महीने की सजा हुई थी। चलो! मिला दो उनसे? मैं तुम्हें एक रुपया दूँगी मुँह मीठा करने के लिए। बच्चों को उनके बाप से मिला दो? भगवान तुम्हारा भला करेंगे तुम दूध से नहाओगे और पूतों से फलोगे भइया। तुम कभी दुखी नहीं रहोगे। तुम्हारा घर भरा रहेगा। चलो भइया? मेरा…।"

"लेकिन…।" संतरी इसके बाद कुछ अस्फुट स्वर में बुदबुदाया। पहले तो उसका मन हुआ कि वह गौरी से कह दे कि मैं नहीं जानता, अन्दर

जाकर दफ्तर में पूछो; लेकिन फिर उसे रहम आ गया गौरी की दीनता पर। वह उसको अपने साथ ले दफ्तर की ओर चल दिया।

× × ×

प्रसन्नता के अतीव आवेग के कारण गौरी के पैर सीधे नहीं पड़ रहे थे। वह कुलक रही थी, उछाह से भर रही थी और जल्दी-जल्दी चली जा रही थी संतरी के पीछे-पीछे। दफ्तर आया। वह दरवाजे पर रोक दी गई और संतरी कुछ गुफ्तगू करने लगा हेड क्लर्क से! तब तक बत्तीस नम्बर बैरक का जमादार आ गया। उसने बतलाया कि मँगरू आज के तीन दिन पहले छूट चुका है। यह सुनते ही गौरी के पैरों के नीचे से जमीन निकल गई। मिठाई की पोटली फर्श पर गिर पड़ी और वह हक्का-बक्का-सी खड़ी जमादार की ओर देखती रह गई।

अब गौरी बाहर आकर एक पेड़ के नीचे बैठ गई। रतन पूछने लगा कि माँ बापू नहीं मिले। तब गौरी की हिचकी भर आयी और वह रोने लगी बड़े-बड़े आँसुओं। रोते-रोते पुत्र से बोली—"तुम्हारे बापू पार्वतीपुर गये होंगे। वे यहाँ से जा चुके हैं। चलो! हम लोग भी वहीं चलें।"

रास्ते में लौटती हुई गौरी सोच रही थी कि मुकद्दर की मार और समय की गति को कोई नहीं जानता। मैं किस भरोसे पर शहर आयी। और किस हालत में लौट रही हूँ। अब अगर काम के लालच में पड़ती हूँ तो उनसे मिलना कैसे होगा। वे जरूर पार्वतीपुर गये होंगे। वहाँ लोगों ने उनसे न जाने क्या कहा हो मेरे लिए। क्या पता वे हम लोगों को ढूँढ़ रहे हों। चलूँ काम छूटता है तो छूट जाये, वे न छूटें। चोली दामन से अलग नहीं रह सकती। बिना मर्द के औरत की ताकत कुछ भी नहीं रह जाती।

गौरी पार्वतीपुर जा रही थी। उसका मन शंकाओं से भर रहा था कि बड़े जालिम हैं हमारे गाँव वाले उनमें इन्सानियत की बू-बास तक नहीं है। ये पराया घर बिगाड़ना जानते हैं बनाना नहीं। लोग कहते हैं कि शहरों की जिन्दगी अच्छी नहीं होती। वहाँ एक पड़ोसी दूसरे पड़ोसी

को पहचानना तक नहीं; लेकिन मैं कहती हूँ कि गाँवों में इतनी जबरदस्त फूट होती है कि बात-बात पर लाठियाँ तन जाती हैं, सिर फट जाते हैं और फौजदारी के मुकदमें सालों चलते हैं। इसी में तबाह हो जाते हैं गाँवों के बड़े-बड़े घर। फिर भला मेरी क्या बिसात? हम लोग तो मजदूर पेशा लोग हैं। वे मिल जायें मैं उनको लेकर वहीं जाऊँगी जहाँ काम करती थी। पार्वतीपुर में कोई भी अपना नहीं, सभी गैर हैं और गैरों की बस्ती में जाना अपने को मुसीबत में फँसाना है।

सोचती-विचारती गौरी लारी पर बैठी। लारी दौड़ रही थी कंकड़ों की सड़क पर पीछे धूल के बादल छोड़ती हुई। उसमें बैठे मुसाफिर बातें कर रहे थे। कोई हँस रहा था। कोई फुसफुसा रहा था और किसी की बीड़ी जल रही थी तम्बाकू का कड़ुवा, मोटा धुआँ छोड़ती हुई। कोई खिड़की से बाहर सिर निकाले झाँक रहा था। रतन उदास बैठा था और गौरी की आँखों से टप-टप आँसू चू रहे थे। उसने घोती का छोर लगा रखा था। कपोलों पर जो तर हो रहा था। बीच-बीच में भोंपू बज उठता तब गौरी चौंक जाती और एक लम्बी साँस लेती। फिर सामने खुले आकाश की ओर देखने लगती।

: १६ :

मँगरू जब जेल से छूटा तो उसके पास एक धेला भी नहीं था। वह साहसी था हिम्मत करके पैदल ही चल दिया अपने गाँव की ओर। किसी तरह रात होते-होते वह जा लगा गाँव के घूरे पर। आगे बढ़ते ही एक काली बिल्ली राह काट कर निकल गई। उसका मन छनका, माथा ठनका और मन ही मन वह अपने से प्रश्न करने लगा कि खैर तो है। गौरी और बच्चे अच्छी तरह तो हैं। विपत्ति तो बहुत झेली, जेल तक काटी, अब भी बिल्ली राह काट गई। कहीं कोई नया गुल तो नहीं खिलेगा। भगवान मालिक है वही दुःख देता है और वही सुख।

रात चाँदनी थी। गाँव के कच्चे मिट्टी के घर पिडोर से पुते हुए चाँदी से चमक रहे थे। भैंसें रेंहक रही थी; गायें रंभा रही थी शायद वे दुही जा रही थीं और उनके लीचर उनके सामने खड़े थे। मँगरू और आगे बढ़ा। उसने देखा कि मुखिया के दरवाजे पर बँधी मन्दराजी भैंस नांद में मुंह डाले हबर-हबर सानी खा रही है। गोड़ैत उसे दुह रहा है और खूंटे में बँधा उसका पड़वा तोड़ा रहा है दूध पीने के लिये। मँगरू को ख्याल आया कि रूपा खेल रही होगी और रतन तो कहीं बाहर चबूतरे पर ही मिल जाये। वह बड़ा खिलाड़ी है पहर रात गये तक आँख मिचौनी खेलता रहा है।

लेकिन जब मँगरू अपने घर के दरवाजे पर पहुँचा तो देखा किवाड़े बन्द हैं और कुंडी में ताला लटक रहा है। वह सोचने लगा कि शायद गौरी कहीं गई हो। किन्तु उसका यह अनुमान उस समय झूठा निकल गया जब उधर से जंगी निकला और उसने मँगरू को पहचानकर उसे बतलाया कि तुम्हारी घरवाली न जाने किसके साथ चली गई है। आज कई महीने हो गये उसका कुछ पता नहीं। भइया अब अगर साफ-साफ कहूँ तो तुम भी बुरा मानोगे। गौरी रामचरण महतो के साथ फंसी थी न जाने कितनी रक़म खा गई वह उसकी। एक दिन दोनों में जूती-लात चली तब सारे गाँव ने जाना। बस ! दूसरे दिन गौरी दिखाई नहीं दी। घर लावारिस पड़ा था इसलिए बिन्दो दीदी ने अपना ताला डाल दिया।

मँगरू ने दोनों कानों पर हाथ रख लिये। उसे जंगी की बातों पर विश्वास नहीं हुआ। वह समझ गया कि जरूर इसमें कोई गहरा राज है। गौरी ऐसा नहीं कर सकती। वह किसी के साथ चली जाये यह सपने में भी नहीं हो सकता। जरूर उसे सताया गया होगा। तभी उसने गाँव के बाहर कदम निकाला।

मँगरू का सिर भनभना रहा था, कलेजा धक्-धक् कर रहा था। उसे जमीन और आसमान दोनों घूमते नजर आ रहे थे। वह थोड़ी देर तक खड़ा रहा। फिर तेजी के साथ लपकता हुआ वहाँ से चल दिया। वह

किसी के घर नहीं गया, किसी से नहीं मिला और न किसी से बोला। वह जा रहा था जहां उसका परिवार था। गाँव वालों ने उसकी धरोहर को सहेज कर नहीं रखा। उसकी पूँजी लुट गई थी। वह अपने रतन को ढूंढने जा रहा था। रात बढ़ रही थी। वह चला जा रहा था मंजिल दर मंजिल ऊबड़-खाबड़ और दुर्गम रास्तों को पार करता हुआ। उसका अन्तर पुकार रहा था जोर से कि गौरी तुम कहाँ हो? रतन कहाँ हो मेरे बेटे? मैं आ गया हूँ। सजा पूरी हो गई। तुम लोग भटक क्यों गये, मेरी राह क्यों नहीं देखी? क्या मेरी गोद सचमुच रुठी है तुझे लेने के लिये और गौरी तुम किस पर्दे में जा छिपी? मैं तो सोच रहा था कि जिस समय मैं घर पहुंचूगा मेरी गौरी दरवाजे पर खड़ी मिलेगी राह पर आँखें बिछाये।

इस तरह पूरा तो नहीं लेकिन मंगरू आधा पागल जरूर हो गया था। वह चलते-चलते थक कर एक जगह बैठा, अलसाया और आँखें लग गई। उसने देखा सपने में कि गौरी कड़ाई में पूड़ियाँ तल रही है। वह खा रहा है, रूपा उसकी गोद में है और रतन भी उसके पास बैठा छोटे-छोटे कौर तोड़ रहा है। दम्पति में हँस-हँस कर बातें हो रही हैं। इतने में एक साँप आता है काला भुजंग। वह डस लेता है गौरी को। गौरी मूर्छित हो जाती है, रतन रोने लगता है और मंगरू सहम कर रह जाता है। ठीक उसी समय उसकी आँखें खुल गई।

अब सबेरा हो गया था। मंगरू स्वप्न की याद करने लगा। वह उठा और फिर आगे गया एक गाँव में। वहाँ पागलों की भांति लोगों से पूछने लगा कि यहाँ मेरी गौरी और रतन तो नहीं आया था। लोग हँसते उसका उपहास करते; लेकिन उसके दर्द को कोई नहीं समझ पाता, किसी के बोल उसके दवा नहीं बन पाते। वह जहाँ जाता वहाँ से निराश लौट पड़ता।

एक दिन बीता, दूसरा भी टलने पर आ गया; लेकिन मंगरू को अपनी मंजिल नहीं मिली, वह भटकता ही रहा। न उसे भूख थी और

न प्यास। नींद भी उससे रूठ गई थी। वह अब सोचने लगा कि कहाँ जाऊँ ? किससे पूछूँ ? कोई पता नहीं जानता है गौरी का। सभी मुझे पागल समझते हैं। चलूँ फिर पार्वतीपुर ही चलूँ। शायद वहाँ से कुछ पता लगे कि गौरी फलाँ जगह है।

यह सोच मँगरू अपने गाँव की ओर चल दिया। रास्ते में रात हो गई एक जगह ठहर गया; क्योंकि चलते-चलते उसके पैर थक गये थे, उन में कांटे चुभ-चुभ कर टूट गये थे। उसकी एड़ियां फट गई थीं और तलुओं की खाल तो जैसे घिस गई थी। उस मजबूर इन्सान को जब थोड़ी रात रही नींद ने अपनी गोद में सुला लिया। तब उसके नथूनों से निकला हुआ स्वर बजने लगा। वह बेसुध सो रहा था और अब रात बीतकर प्रभात आ रहा था।

: २० :

जब काफ़ी दिन चढ़ आया तो मँगरू की नींद टूटी। वह उठा और धीरे-धीरे कदम उठा चलने लगा अपने गाँव की ओर। उसका शरीर इस भांति क्लान्त हो गया था कि पैर एक-एक मन का लगता। उठाये नहीं उठता। अंतड़ियां कल्लाँ रही थीं उसने आगे एक तालाब पर मुँह हाथ धोया। वहीं किनारे शौच किया, फिर दो चुल्लू पानी पी लिया मन की तसल्ली के लिये। पानी जाकर पेट में ऐसा लगा जैसे किसी ने छुरी भोंक दी हो। उसके मुँह से दुखिया स्वर में निकला—"भगवान मुझे दुनिया से उठा ले तो मैं उसका बहुत बड़ा एहसान मानूँ।"

तभी मँगरू के मन ने धिक्कारा कि मौत मांगते हो और यह क्यों भूल जाते हो कि तुम पर जुम्मेदारियां भी हैं। गौरी रतन और रूपा इन सब का क्या होगा ? कहीं तो होंगे ही ये लोग। उठो सबसे पहले उनका पता करो ? जंगी झूठ कहता है, गौरी निर्दोष है। जीने की दुआ मांगो भगवान से, वही पालक है वही संहारक।

मँगरू ने दर्द को पी लिया। वह चुपचाप चल दिया अपनी दिशा

की ओर। वह चला जा रहा था और उसके कानों में गोरी तथा रतन के स्वर गूंज रहे थे। रूपा के रोने से घर भरा जा रहा था। वह मन ही मन तिलमिला उठा और उस वीराने में एकदम फूटकर रो पड़ा। रुदन की धारा में उसके मुंह से निकला—"क्यों ? गोरी तुम्हारा मंगरू रो रहा है। तुम कहां हो ? कुछ पता नहीं चलता और रतन बेटा तुम सपने में ही एक झलक दिखला जाते। तुम्हारा बाप रो रहा है उमर्दी। ममाई का बांध टूट गया है। तुम लोग न मिले तो मैं अपने आप न भी मरूं तो मरने से भी गया-गुजरा हो जाऊंगा। मैं पागल हो जाऊंगा। मेरा कलेजा चाक हो गया है मुसीबत की बदलियों में कुछ नहीं दिखाई देता। कहां जाऊं, समझ में नहीं आता क्या करूं। मैं...।"

सहसा मंगरू के पैर में बबूल का एक बड़ा-सा कांटा चुभ गया। हल्की-सी टीस निकली उसके मुंह से। वह सह गया इस पीड़ा को। सहज ही कांटा खींचा, खून बह चला, वह वहीं बैठ गया और उस निकल रहे खून की जगह मिट्टी डालने लगा चुटकी से। अब ठीक दोपहर हो आई थी।

तीसरे पहर मंगरू पार्वतीपुर पहुंचा। वह पहले अपने घर गया कि शायद गोरी आ गई हो और घर के किवाड़े खुले हों; लेकिन अफसोस वहाँ जाकर उसे निराश ही लौटना पड़ा। घर में ताला बन्द था। वह लौटा तो सीधा बिन्दो के घर आया। तब जगो बाहर बैठा आग ताप रहा था और बिन्दो आंगन में कुशासन पर बैठी सुखसागर का पाठ कर रही थी। पागलों जैसा मंगरू उसके सामने जाकर खड़ा हो गया। बिन्दो ने उसकी ओर देखा और उपेक्षा पूर्वक कहा—"कैसे ! क्या करने आये हो मंगरू ? तुम्हारी गवन कैसी हो रही है। लगता है कि आदमी नहीं कोई शैतान सामने खड़ा है।"

"कुछ भी कह लो दीदी। आदमी ही शैतान होता है और आदमी ही देवता। मेरे हाल पर तरस खाओ और घर की चाबी मुझे दे दो। वही मांगने आया हूं। माफ करना दीदी तुम्हें इस पूजा-पाठ के वक्त

तकलीफ दी।'

मगरू की विनयशीलता बिन्दो को तनिक भी नहीं रुची। वह उग्र होकर बोली—"कैसी चाबी ? किसका मकान ? तुम क्या कहते हो ? मैं कुछ भी नहीं समझी।"

अब मँगरू दांतों तले उँगली दाबकर रह गया। वह आंखें फाड़-फाड़ कर भौंचक्का हो देखने लगा बिन्दो की ओर।

और बिन्दो, उसने सुखसागर की मोटी जिल्द बन्द कर और उसकी ओर आंखें तरेर कर बोली—"ऐसे देखते हो जैसे मुझे अभी खा जाओगे। अरे ! आंखें फाड़-फाड़कर घूरते क्या हो ? मुँह से बोलो और जल्दी अपना रास्ता नापो।"

अब मँगरू की रगों में खून दौड़ने लगा तेजी से। वह तेज गले से बोला—"मैं कोई चोर उचक्का और बदमाश नहीं हूँ। मुझे मेरे घर की चाबी दे दो। शायद अब समझ गई होंगी।"

"अरे-रे तो अकड़ता क्यों है ? सीधे मुँह सम्हाल कर बात कर। घर अब तेरा नहीं मेरा है। मैंने अपने रुपयों के बदले में उस पर कब्जा कर लिया है। वह अब तेरी रियासत नहीं, मेरी जागीर है। चाबी नहीं मिलेगी अगर खरीदना है तो उसका मोल दो सौ रुपये है। रुपये गिन दे और चाबी ले जा।"

बिन्दो ने यह सब कहा था त्योरियां बदलकर। सुनते ही मँगरू सनाका खा गया। उसका क्रोध पता नहीं कहां चला गया। वह कुछ भी नहीं बोल सका। मन ही मन अपने को धिक्कारने लगा। आज को अगर वह कर्जदार न होता तो उसका घर उससे कोई नहीं छीन सकता था। क्या-क्या देखना पड़ता है जिन्दगी में, कैसे-कैसे मौके आते हैं। जब आदमी अपनी मजबूरी पर रो भी नहीं पाता। इन्सान लाख समर्थ बनने की कोशिश करता है; लेकिन एक न एक मजबूरी उसके सामने हमेशा बनी रहती है। पहले मँगरू का मन हुआ कि वह बिन्दो को खूब जली-कटी सुनाये कि मैं नहीं जानता था कि तुम इतनी नीच निकलोगी। मैं जेल

में बन्द था और तुमने हमारा घर छीन लिया। हमारे बच्चों और औरत को पता नहीं कहां भटकने के लिये भेज दिया। तुम भी इस जिन्दगी में कभी सुखी नहीं रहोगी। लेकिन मंगरू कुछ नहीं बोला। वह खड़ा रहा चुपचाप और जब बिन्दो ने उसे डाँटा कि खड़ा क्यों है? जाता क्यों नहीं? तो उसके पाँव अपने आप ही धीरे-धीरे उठने लगे। वह हतबुद्धि-सा बाहर आया। घर और परिवार का मोह उसे फिर खींच ले गया अपने घर की ओर। कुंडी में ताला ज्यों का त्यों बन्द था। मंगरू रुका नहीं लौट पड़ा और गाँव के बाहर झावर के किनारे हरी घास पर साँस ली। इस समय उसका मस्तिष्क तेजी के साथ घूम रहा था। वह विचारों को बाँध नहीं पाता, वे भाग रहे थे। सिर में पीड़ा हो रही थी। दिन डूब रहा था और चकोर-चकोरी रात्री के वियोग को स्मरण कर दुःखी हो रहे थे; मन पर उदासी के बादल छा रहे थे।

: २१

मंगरू पड़ा रहा। दिन छिप गया और रात हो आई। आज सर्दी अधिक थी। उसे ठिठुरन मालूम हुई। वह उठा और सोचा कि चलूं किसी पेड़ के नीचे पड़ रहूँ। वहाँ जाड़ा कुछ कम लगेगा। मैं सवेरे निकलूंगा यह तय करके कि गौरी को तलाश करके ही रहूँगा तभी चैन से बैठूंगा। मेरा मन कहता है कि वह मिलेगी जरूर। मेरी आत्मा कहती है कि गौरी मरी नहीं जिन्दा है।

यद्यपि रात उजेली थी, लेकिन सर्दी के आधिक्य के कारण ओस गिर रही थी जिससे चारों तरफ कोहरा छा रहा था। अधिक दूर तक दृष्टि नहीं जाती, थोड़े ही में सीमित रहती। उधर आस-पास कोई पेड़ नजर नहीं आ रहा था। मंगरू चला जा रहा था। इस समय वह मन ही मन रो रहा था अपनी मुसीबतों पर जो पहाड़ बनकर उस पर फटी और उसके सिर पर वज्र-सी गिरी इस पर भी अंधेर यह कि अब तक वे उसका पीछा नहीं छोड़ रही थी।

देर बाद दूरी पर एक पेड़ नजर आया। मँगरू उसी के नीचे जा गुड़मुड़ाकर पड़ रहा। उसने आधी धोती ओढ़ ली। वह सो जाना चाहता था सब कुछ भूल कर। लेकिन चिन्तायें उसे चौंका रही थीं, चैन नहीं लेने दे रही थी उसे लगता कि अब वह पागल हो जायेगा, उसका सब कुछ लुट गया। वह बुरी तरह तबाह और बरबाद हो गया है। वह अपनी जिन्दगी को बिलकुल बेकार समझ रहा था। उसकी आँखें मुँदी रहतीं किन्तु कोरी-कोरी उनमें नींद समाती ही नहीं। वह असीम दुःख से भरा था।

रात का सन्नाटा पहले पहर में ही साँय-साँय करने लगा था। इस सुनसान खेतों की बस्ती में झिल्ली और झींगुर झनकार रहे थे। कहीं किसः ओर सियार हुवाते तो कभी-कभी लोमड़ी की आवाज भी कानों में पड़ जाती। सब कुछ मिलाकर वह सुनसान जगह भयानक-सी लग रही थी। जाड़े और कोहरे का आतंक उसकी भयानकता का प्रतीक था। पगडंडी और बटहे सूने पड़े थे। उन पर चलने वाले राही विश्राम ले चुके थे। हर आदमी अपने-अपने घर में ओढ़े लपेटे पड़ा था। भला ऐसी कड़ाके की सर्दी में बाहर निकलने की हिम्मत कौन करता। मँगरू अकेला लेटा था। उसके घुटने पेट में लग रहे थे और वह सिर से पाँव तक धोती ताने सोने का उपक्रम कर रहा था। सहसा तभी उसके कानों में एक कर्कश आवाज पड़ी—"ठहर जाओ ? कौन हो ? कहाँ जा रही हो ? लाओ तुम्हारे पास जो कुछ हो निकालकर रख दो वरना···।"

मँगरू ने मुँह पर से धोती हटाई। वह देखने लगा कि दूरी पर टार्च की रोशनी हो रही है। दो आदमी खड़े हैं। आगे वह कुछ नहीं देख पाया, रोशनी बन्द हो गई। वह उठकर बैठ गया। इतने में उसे दूसरी आवाज फ़िर सुनाई पड़ी—"हाँ देर क्यों करती हो ? तुम औरत जाति हो। हम लोग तुम्हारा लिहाज कर रहे हैं। तुम्हारे पास जो भी गहने हों, उतार दो ? भलमनसी इसी में है और चुपचाप चली जाओ ?"

अब मँगरू उठकर खड़ा हो गया। वह पेड़ की छाया में ही खड़ा

रहा। उसने साफ-साफ देखा कि एक औरत है उसकी गोद में एक बच्चा है और दूसरा बच्चा पास खड़ा है। दो बदमाश उसे धमका रहे हैं। उनके पास लाठियाँ हैं। औरत रो रही है और रोते-रोते कह रही है कि गहना मेरे पास एक भी नहीं है और न फूटी कौड़ी। जो कुछ पैसे थे सब खर्च हो गये। इस समय मेरे पास नहीं है। मुझे जाने दो। मेरा रास्ता न रोको।

मगर वे दोनों चढ़ैत नहीं माने। एक बोला—"हम तुम्हारी तलाशी लेंगे।"

बस फिर क्या था। टार्च चमकने लगी, औरत रोने लगी जारबेजार होकर। वह कह रही थी—"मुझे न छुओ। मेरी देह में हाथ न लगाओ। मैं बच्चों की कसम खाकर कहती हूँ कि मेरे पास कुछ भी नहीं है।"

टार्च वाला आदमी इस पर हँस पड़ा और बोला—"औरत जब सच बोलने का सबूत कसम खाकर देती है तो वह सरासर झूठ होता है। तुम सफेद झूठ बोल रही हो। गोद के बच्चे को बैठा दो और अपने आप ही तलाशी दे दो यह बहुत अच्छा रहेगा।"

इस पर औरत तो रोती ही रही और दूसरा आदमी आगे बढ़ा। उसने झटपट औरत की गोद से बच्चा छीन लिया। बच्चा रोने लगा और वह अपने साथी से कहने लगा—"अरे जा यार औरत से डरता है। ये तो लातों की देवी होती हैं, इन्हें बातों से समझाना बेवकूफी है। ले तलाशी ले, देर हो रही है।"

अब मँगरू से नहीं रहा गया। वह तीर-सा भागा उस ओर, और जाते ही झपट कर पीछे से एक आदमी की लाठी छीन ली। फिर उसने जैसे ही उस पर एक भरपूर वार करना चाहा वैसे ही वह आदमी उछल गया और लाठी जाकर जमीन पर लगी। अब दूसरा टूट पड़ा उस पर बाज-सा। उसने दो लाठियों में उसे जमीन पर गिरा दिया। जब वह गिर पड़ा बेदम होकर तो पहले वाला उसकी छाती पर चढ़ बैठा और लगा दोनों हाथों उसके गालों तथा कनपटियों पर मुक्के मारने।

इस तरह मँगरू में शक्ति नहीं रही कि वह उठता, आततायियों से

देर बाद दूरी पर एक पेड़ नजर आया। मँगरू उसी के नीचे जा गुड़मुड़ाकर पड़ रहा। उसने आधी धोती ओढ़ ली। वह सो जाना चाहता था सब कुछ भूल कर। लेकिन चिन्तायें उसे चौंका रही थीं, चैन नहीं लेने दे रही थी उसे लगता कि अब वह पागल हो जायेगा, उसका सब कुछ लुट गया। वह बुरी तरह तबाह और बरबाद हो गया है। वह अपनी जिन्दगी को बिलकुल बेकार समझ रहा था। उसकी आँखें मुँदी रहतीं किन्तु कोरी-कोरी उनमें नींद समाती ही नहीं। वह असीम दुःख से भरा था।

रात का सन्नाटा पहले पहर में ही साँय-साँय करने लगा था। इस सुनसान खेतों की बस्ती में झिल्ली और झींगुर झनकार रहे थे। कहीं किस ओर सियार हुवाते तो कभी-कभी लोमड़ी की आवाज भी कानों में पड़ जाती। सब कुछ मिलाकर वह सुनसान जगह भयानक-सी लग रही थी। जाड़े और कोहरे का आतंक उसकी भयानकता का प्रतीक था। पगडंडी और बटहे सूने पड़े थे। उन पर चलने वाले राही विश्राम ले चुके थे। हर आदमी अपने-अपने घर में ओढ़े लपेटे पड़ा था। भला ऐसी कड़ाके की सर्दी में बाहर निकलने की हिम्मत कौन करता। मँगरू अकेला लेटा था। उसके घुटने पेट में लग रहे थे और वह सिर से पाँव तक धोती ताने सोने का उपक्रम कर रहा था। सहसा तभी उसके कानों में एक कर्कश आवाज पड़ी—"ठहर जाओ ? कौन हो ? कहाँ जा रही हो ? लाओ तुम्हारे पास जो कुछ हो निकालकर रख दो वरना•••।"

मँगरू ने मुँह पर से धोती हटाई। वह देखने लगा कि दूरी पर टार्च की रोशनी हो रही है। दो आदमी खड़े हैं। आगे वह कुछ नहीं देख पाया, रोशनी बन्द हो गई। वह उठकर बैठ गया। इतने में उसे दूसरी आवाज फिर सुनाई पड़ी—"हाँ देर क्यों करती हो ? तुम औरत जाति हो। हम लोग तुम्हारा लिहाज कर रहे हैं। तुम्हारे पास जो भी गहने हों, उतार दो ? भलमनसी इसी में है और चुपचाप चली जाओ ?"

अब मँगरू उठकर खड़ा हो गया। वह पेड़ की छाया में ही खड़ा

रहा। उसने साफ-साफ देखा कि एक औरत है उसकी गोद में एक बच्चा है और दूसरा बच्चा पास खड़ा है। दो बदमाश उसे धमका रहे हैं। उनके पास लाठियाँ हैं। औरत रो रही है और रोते-रोते कह रही है कि गहना मेरे पास एक भी नहीं है और न फूटी कौड़ी। जो कुछ पैसे थे सब खर्च हो गये। इस समय मेरे पास नहीं है। मुझे जाने दो। मेरा रास्ता न रोको।

मगर वे दोनों गठैत नहीं माने। एक बोला—"हम तुम्हारी तलाशी लेंगे।"

बस फिर क्या था। टार्च चमकने लगी, औरत रोने लगी जारवेजार होकर। वह कह रही थी—"मुझे न छुओ। मेरी देह में हाथ न लगाओ। मैं बच्चों की कसम खाकर कहती हूँ कि मेरे पास कुछ भी नहीं है।"

टार्च वाला आदमी इस पर हँस पड़ा और बोला—"औरत जब सच बोलने का सबूत कसम खाकर देती है तो वह सरासर झूठ होता है। तुम सफेद झूठ बोल रही हो। गोद के बच्चे को बैठा दो और अपने आप ही तलाशी दे दो यह बहुत अच्छा रहेगा।"

इस पर औरत तो रोती ही रही और दूसरा आदमी आगे बढ़ा। उसने झटपट औरत की गोद से बच्चा छीन लिया। बच्चा रोने लगा और वह अपने साथी से कहने लगा—"अरे जा यार औरत से डरता है। ये सो लातों की देवी होती हैं, इन्हें बातों से समझाना बेवकूफी है। ले तलाशी ले, देर हो रही है।"

अब मँगरू से नहीं रहा गया। वह तीर-सा भागा उस ओर, और जाते ही झपट कर पीछे से एक आदमी की लाठी छीन ली। फिर उसने जैसे ही उस पर एक भरपूर वार करना चाहा वैसे ही वह आदमी उछल गया और लाठी जाकर जमीन पर लगी। अब दूसरा टूट पड़ा उस पर बाज-सा। उसने दो लाठियों में उसे जमीन पर गिरा दिया। जब वह गिर पड़ा बेदम होकर तो पहले वाला उसकी छाती पर चढ़ बैठा और लगा दोनों हाथों उसके गालों तथा कनपटियों पर मुक्के मारने।

इस तरह मँगरू में शक्ति नहीं रही कि वह उठता, आततायियों से

लड़ता। वह निश्चेष्ट-सा पड़ा रहा। औरत के साथ वाला बड़ा बच्चा सहमा-सा खड़ा था। वह धीरे-धीरे हुसक रहा था और दूसरी बच्ची जोर-जोर से रो रही थी। एक आदमी टार्च की रोशनी फेंक रहा था औरत पर और दूसरा उसके कपड़े टटोल तलाशी ले रहा था। वह स्त्री रो रही थी—"तुम लोगों को शक है तो देख लो, मुझे बाँधकर मारो। मेरे पास एक पैसा नहीं निकलेगा।"

मँगरू ने आँखें खोलीं और देखने लगा उस दुखियारी की ओर। सहसा एकदम चौंक उठा। उसे अपने पर विश्वास नहीं हुआ। उसने बैटरी की रोशनी में देखा कि वह स्त्री कोई और नहीं, गौरी है। जब उसे पक्का निश्चय हो गया यह गौरी ही है, तो उसने पुनः आँखें मूंद लीं और सोचने लगा कि आखिर इतनी रात गौरी इधर कहाँ आ निकली।

मँगरू सोचता रहा। गौरी रोती रही। दोनों लुटेरे तलाशी लेकर चले गये। अब गौरी ने रूपा को गोद में उठा लिया और फिर रतन को पुचकारती हुई उस घायल व्यक्ति की ओर बढ़ी। जिसने उसकी रक्षा करने में अपने को मुसीबत में डाला था। वह समझ रही थी कि यह कोई राही है। उसे क्या पता कि वह जिसे ढूंढ़ने जा रही रही है, वह उसके सामने हाथ-पैर फैलाये पड़ा है।

: २२ :

गौरी मँगरू के निकट जाकर बैठ गई और अनजान की नाई समवेदना भरी वाणी में सहानुभूति प्रगट करती हुई बोली—"राही तुम्हें बहुत चोट आयी है। कौन-सा गांव है तुम्हारा ? चलो तुम्हें घर पहुँचा दूं। तुम अकेले नहीं जा सकते। यहाँ रात को इस तरह पड़े रहना ठीक नहीं। गाँव में आजकल बघरों (गुलबघा) का जोर है।"

लेकिन मँगरू बोला नहीं। वह पलकें बन्द किये लेटा रहा। तब गौरी ने उसका हाथ पकड़कर हिलाया और घबड़ाकर पूछने लगी—

"अरे ! तुम बोलते नहीं, क्या बात है ?"

मँगरू मौन साधे रहा। वह टस से मस नहीं हुआ। गौरी एक क्षण में ही न जाने कितनी बातें सोच गई कि शायद यह आदमी बेहोश हो गया है। अब क्या होगा ? यह अपने घर कैसे पहुँचेगा ? इसे कौन ले जायेगा उठाकर यहाँ से ? बेचारा मेरे पीछे इस हालत को पहुँच गया। भगवान यह जल्दी ही आँखें खोल दे। मैं अकेला छोड़कर कैसे जाऊँ। यह अपनी जान हथेली पर रखकर बदमाशों के बीच में कूदा था और मैं मुँह चुराकर चली जाऊँ, कायदा यह नहीं कहता है।

अब गौरी मँगरू के कन्धे हिलाने लगी। तब मँगरू चुप नहीं रह सका। उसने आँखें खोलीं और गौरी के दोनों हाथ अपने बदन से अलग करता हुआ क्रोध भरे स्वर में बोला—"मुझे न छुओ, चली जाओ गौरी। तुम ने भी मेरा साथ नहीं दिया। दूसरे मर्द की चूड़ियाँ पहन लीं, गाँव छोड़ कर चली आईं। कम-से-कम मेरी राह तो देखी होती।"

"कौन ? तुम ! अरे, तुम यहाँ और तुम्हारी यह हालत ! भगवान ने मिलाया भी तो ऐसी जगह जो न जंगल है और न बस्ती। और तुम यह कह क्या रहे हो ? मैंने, और दूसरे मर्द की चूड़ियाँ पहन लीं। यह किसने कहा तुमसे ?" गौरी दोनों हाथ कनपटियों पर रखे भौचक्की-सी पति को देख रही थी। रतन 'बापू', 'बापू' कहकर लिपट गया बाप से। उसका सहारा पाकर धीरे से मँगरू उठा और काँपता हुआ बैठ गया।

गौरी की बातें सुन मँगरू कहने लगा—"मुझसे जंगी ने कहा था कि तुम्हारी घरवाली किसी के साथ चली गई है और घर खाली पड़ा था इसलिये बिन्दो ने उस पर अपना कब्जा कर लिया है। और यह भी सुना है मैंने कि तुम्हारा रामचरण महतो के साथ फिर झगड़ा हुआ था। गाँव भर में तुम्हारी बदनामी बहुत बुरी तरह फैल रही है। मैं जानता था कि जंगी झूठ कहता है, गौरी निर्दोष है; लेकिन इतनी रात को तुमको यहाँ पाकर मैं धोखे में नहीं रह सकता। सच-सच बताओ गौरी कि तुम कहाँ रही ? मेरा मन न जाने कैसा-कैसा हो रहा है।"

अब गौरी ने समझा कि उसके पति को बहकाया है गाँव-वालों ने। वह रोने लगी और आंचल से आँसू पोंछती हुई गीले स्वर में बोली—"न पूछो कि मुझ पर कैसी बीती। गाँव वाले बदनाम नहीं करेंगे तो क्या मेरी तारीफ करेंगे। खूब कहा उन लोगों ने कि घर खाली पड़ा था तो बिन्दो ने कब्जा कर लिया। वह दुश्मन जंगी भूल गया कि घर से बाँह पकड़कर बिन्दो ने जबरदस्ती मुझे बाहर निकाला और भगवान भला करे उस जल्लाद का वही जंगी मुझे घसीट कर गाँव के बाहर छोड़ गया। अच्छा होते ही महतो मुझसे बदला लेने आया था। मैंने उसको खदेड़ा। उसने पहले की ही तरह उस बार भी लाँछन लगाया। गाँव में हुआ क्या-क्या नहीं। मेरे पीछे पंचायत बैठी। मुखिया बेपीर हो गये और···।"

यह कहकर गौरी तनिक रुकी और अपनी चादर मँगरू को ओढ़ाती हुई फिर कहने लगी—"देह पर लाठियाँ पड़ी हैं। चादर ओढ़ लो हवा लगेगी तो हड्डियों में कसकन होगी।"

अब मँगरू मुस्करा उठा। वह मना नहीं कर सका गौरी को और न उसके हाथ ही हटा सका। गौरी आप बीती सुना रही थी रो-रोकर। मँगरू को क्रोध आ रहा था गाँव वालों पर और रतन माँ-बाप दोनों से कह रहा था—"माँ चलो। अपनी झोंपड़ी मैं चलो। अभी कितनी दूर है। तुम बापू को लेने पार्वतीपुर जा रही थीं अब वे मिल गये। गाँव नहीं, अपनी सड़क के किनारे वाली झोंपड़ी में चलो। हम लोग गाँव में नहीं रहेंगे। गाँव के आदमी बहुत खराब हैं। क्यों बापू है न ठीक ? हाँ तुम्हारी भी तो लड़ाई हुई थी महतो से। माँ ने उसे एक दिन डंडों से खूब पीटा।"

रतन की बातें सुनकर दम्पति मुस्करा पड़े। मँगरू ने उसे अपनी बाहों में भर लिया। तब चाँद मुस्करा रहा था। बाप-बेटे का मुँह चुम रहा था और गौरी माँ तथा पत्नी का अधिकार लिये मंद स्मित बिखेर रही थी। चाँदनी छिटकी थी चाँदी सी। और रूपा, वह भी मगन हो रही थी माँ की गोद में। दूसरे ही क्षण वह बाप के हाथों पर पहुँच गई

और रतन माँ के पास लगकर बैठ गया।

: २३ :

पूरा परिवार उसी पेड़ के नीचे रात भर पड़ा रहा जहाँ मँगरू ने पहले सोने की सोची थी और जाकर लेटा था। सारी रात दम्पति सोये नहीं। उनमें बातें होती रहीं। सवेरे गौरी ने कहा—"चलो अब कहाँ चलते हो? बिन्दो ने तो तुमको टका-सा जवाब दिया है। वह घर नहीं देगी। उल्टे वहाँ जाकर अपनी बेइज्जती और छीछालेदार करवाना है। बोलो क्या कहते हो?"

"कहना क्या गौरी, फैसला तो हमारा रतन रात को ही कर चुका था। हम सब लोग वहीं चलेंगे जहाँ तुमने झोंपड़ी बनाई है।" यह कहकर मँगरू हँस पड़ा और रूपा को गोद में ले, आगे-आगे रतन को कर चलने लगा उसी दिशा की ओर जिधर गौरी की मंजिल थी। सामने पूरब के आकाश में लालिमा फैल रही थी। नींद टूटी थी सूरज की, उसने आँखें खोली थीं। गौरी सोच रही थी कि उसका भाग्य अब उदय होने जा रहा है। सूरज ने आँखें खोल दी हैं। दिन निकल रहा है। अब अँधेरा न जाने कहाँ चला गया। गौरी ऐसी बेसुध थी, इतनी मगन थी कि अपना पिछला इतिहास बिल्कुल भूल ही गई कि उसने कितने दुःख झेले हैं।

और जब धूप लगी मँगरू की देह में उसे राहत मिली। अपनी देह की पीड़ा को भूल वह सोच रहा था कि कुछ लोग ऐसा कहते हैं, अपनी जन्म भूमि में जब आदमी की परेशानियाँ बढ़ती ही जाती हैं और उनका अंत नहीं होता तो वह परदेश में जाकर उनसे छूट जाता है, परदेश उसे फलीभूत होता है। इतने दिन पार्वतीपुर में रहा, हमेशा पिसता रहा, कभी जी खोलकर हँस नहीं सका। मुझे लगता है कि मेरा नसीब बदल जायेगा। गाँव छोड़ना मेरे लिये जरूरी था।

जब गौरी अपने परिवार सहित झोंपड़ी में पहुँची तो उस समय गंगा-

काम पर गई थी। वहाँ से फर्लांग भर की दूरी पर सड़क की मरम्मत
ा रही थी। दोपहर को गंगादेई आई। उसके पास गौरी के बीस
ये थे धरोहर के रूप में। उसने लिये और दूसरे दिन गाँव के बाजार
ई। उसमें मँगरू के लिए धोती, कुरता, जूता और अँगोछा खरीदा।
गरू गौरी के इस काम पर बहुत खुश हुआ और मन ही मन कहने
गा कि भगवान ऐसी औरत हर आदमी को दे। जिन्दगी सुधर जाती
है आदमी की अगर उसकी घरवाली अच्छी और सीधी मिल जाती है।
मेरी गौरी सौ में नहीं, हजार में नहीं, लाखों में एक है। मुझे उस पर
गरूर (गर्व) है।

मँगरू तीन-चार दिन तक पड़ा। आराम करता रहा। गौरी काम पर जाती रही। उसके बाद जब वह स्वस्थ हुआ, देह की पीड़ा चली गई तो गंगादेई ने ठेकेदार से कहकर उसे भी काम दिलवा दिया। अब मँगरू दुरमुट चलाता, गौरी कंकड़ ढोती और रतन कभी झोंपड़ी में और कभी माँ-बाप के सामने कहीं सड़क के एक किनारे रूपा को गोद में लेकर आ बैठता। तब मँगरू सोचने लगता कि रतन की पढ़ाई बन्द हो गई, यह अच्छा नहीं हुआ। यह साल उसका पूरा खराब हो गया। बस अबकी बार आषाढ़ में स्कूल खुलते ही उसे कहीं-न-कहीं जरूर भर्ती करवा दूँगा। तब तक भगवान चाहेगा रहने का ठिकाना भी हो जायेगा।

: २४ :

मँगरू और गौरी दोनों सड़क पर काम करते थे। मजदूरी अच्छी होती, खर्च निकालकर कुछ-न-कुछ जरूर बच रहता जो पूंजी के रू
में एकत्रित हो रहा था। मँगरू प्रसन्न था। गौरी की खुशियों का पारावा
न था। दोनों जब काम से फुरसत पा भोजनादि से निवृत हो अप
झोंपड़ी में बैठते तो प्रसंग छिड़ जाता घर बनाने का कि आखिर ए
छोटी-मोटी कोठरी तो कहीं बनानी ही पड़ेगी। इस तरह कब तक क
चलेगा।

दम्पति सोच-विचार ही करके रह जाते। उन्हें इतना अवकाश ही नहीं मिल पाता कि अपनी योजना को कार्य रूप में परिणित करते। गंगादेई वहाँ से तीन मील दूर एक गाँव में रहती थी। उसने सलाह दी कि मेरे गाँव में चलकर रहो। मकान बनाने की भी कोई जरूरत नहीं। मैं अपने घर में ही एक कोठरी दे दूँगी। लेकिन मँगरू और गौरी उसके इस एहसान को सिर पर लादना पसन्द नहीं करते। वे वैसे ही उसके एहसानों के सामने झुके हुए थे। वे इस तरह उसे टाल देते कि अब तुम्हें कहाँ तक तकलीफ दें हम लोग। तुम्हीं ने हम लोगों की रोजी लगवाई। तुम्हारे दयालु होने से ही हमारे बच्चे जिये। हम लोग कुछ नहीं कर सकते। अगर कभी किसी योग्य हुए तो तुम्हें सिर आँखों पर उठायेंगे। तुमने गैर होकर अपनों जैसा व्यवहार किया, यह क्या कम बड़ी बात है?

गंगादेई मुस्करा देती। मँगरू और गौरी भी प्रफुल्लित हो जाते। सबके बीच आमोद-प्रमोद की त्रिवेणी लहरा रही थी। सभी एक-दूसरे के हमदर्द थे, एक-दूसरे के साथी। इधर मँगरू का [illegible] सुख की अनुभूति कर अपने पिछले दिन भूल गया था। [illegible] की पोथी सहसा खुल गई, पन्ने उड़ने लगे हवा में और [illegible] ठेकेदार ने यह एलान कर दिया कि दो दिन बाद सड़क [illegible] हो जायेगा। ठेका पूरा हो गया। अब काम यहाँ नहीं [illegible] किसी दूसरी सड़क पर लगेगा। यह सुनते ही मजदूरों के [illegible]। मँगरू और गौरी भी उदास हो गये। इस तरह [illegible] पूरी हो गई और सब मजदूर वेकार हो [illegible]।

गंगादेई अपने गाँव चली [illegible] के साथ नहीं जा पायी। [illegible] मग्न थे और कुछ भी तय [illegible] जायेंगे या गंगादेई के [illegible] होली जल चुकी थी। [illegible] से झोंपड़ियों के [illegible]

नहीं था जहां जाकर वे बसेरा लेते ।

इस विषय में मंगरू और गौरी का आपस में खूब तर्क हुआ । बहुत विचार-विनिमय के बाद यह तथ्य निकला कि वे लोग अब पार्वतीपुर नहीं जायेंगे और न जायेंगे गंगादेई के गांव ही । वे शहर जायेंगे जहाँ रात में भी दिन जैसा उजाला रहता है, पैसा ही पैसा नजर आता है । वहां मजदूर और नौकरी पेशा लोग तो आराम से रहते ही हैं, इसके अलावा मंगते तक मजा करते हैं ।

इस तरह भोले-भाले ग्रामीण दम्पति और बच्चों का वह छोटा-सा काफिला चल पड़ा शहर की ओर । उन्हें क्या पता कि शहर में आदमी का कितना शोषण होता है । गांव का श्रमिक श्रम करके मुस्कराता है और नगर में श्रम का मूल्य मिलता है चिन्ता और बेबसी में । वहां श्रमिक पनपता नहीं; बल्कि धीरे-धीरे उसका खून सूखता रहता है ।

इस समय सब मिलाकर गौरी के पास पचपन रुपये थे । वह सोच रही थी कि जाते ही शहर में कोई कोठरी किराये पर ले ली जायेगी । मंगरू हवा में महल बना रहा था मन ही मन, कि बस अब मुझे तकलीफ नहीं रहेगी । शहर में मेरा रतन खूब पढ़गा और हम लोग अब गांव की गंदी जिन्दगी नहीं; शहर का सुथरा जीवन बितायेंगे । यह कहावत कितनी सच्ची है कि 'शहर बसन्ते देवानाम् और गांव बसन्ते भूतानाम् ।' इसी लिए गांव का आदमी तरक्की नहीं कर पाता ।

: २५ :

यद्यपि मंगरू को हरदोई करीब पड़ता था; लेकिन वह छोटा शहर था, वहां धन्धा नहीं था । इसलिए वह परिवार सहित कानपुर आया । उस दिन गौरी और बच्चे रेलवे के मुसाफिरखाने में पड़े रहे और मंगरू शहर में इधर-उधर भटकता रहा । वह नौकरी खोजता, मजदुरी की भी तलाश करता और साथ ही ढूंढ़ रहा था किराये पर कोठरी । वह शहर के लिए नया था, गांव से आया था । उसकी बात सुनकर कोई हंस देता,

कोई टाल देता और कोई दुत्कार कर भगा देता; लेकिन सच्चे इन्सान की मदद ईश्वर करता है। कुछ यात्री स्टेशन के निकट स्थित सेन्ट्रल धर्मशाला जा रहे थे। उन्हें जब मालूम हुआ कि मँगरू और उसके बच्चे दो दिन से यहाँ मुसाफिरखाने में ही पड़े हैं तो वे लोग उसको सलाह दे अपने साथ धर्मशाला लिवा ले गये। उस धर्मशाला में मँगरू पाँच दिन रहा। इस बीच उसे कहीं भी कोई काम नहीं मिला। गौरी के पास के रुपये धीरे-धीरे खर्च होते आ रहे थे। दोनों को चिन्ता थी। वे आने आने वाले दिनों से मन ही मन डर रहे थे कि इतना बड़ा शहर है, जिस में लाखों आदमी रहते हैं, तमाम काम धन्धा होता है। अफसोस! कि यहाँ मजदूरी तक नहीं मिल रही है। क्या होगा?-अगर ऐसा ही रहा तो एक दिन शायद मजबूरी वश हम लोग यहाँ से चले जायेंगे। गाँव के खर्चे से शहर का खर्चा दुगुना ही नहीं, बल्कि तिगुना और चौगुना है। हम लोग कैसे पार पायेंगे, परेशान हो जायेंगे।

छठे दिन प्रातः मँगरू वह धर्मशाला छोड़कर बेनीमाधव धर्मशाला में आया। यहाँ भी उसे तीन दिन बीत गये और बेकारी की समस्या हल नहीं हुई।

चौथे दिन उदास मँगरू जाकर खड़ा हो गया मूलगंज के चौराहे पर। मजदूरों की जमात में खड़ा वह लोगों का मुँह ताक रहा था कि तब तक एक महोदय आये उन्हें दस मजदूरों की जरूरत थी। घर पर काम लगवाना था। मँगरू भी उस चुनाव में आ गया। वह मजदूरी करने लगा और अब तीसरी धर्मशाला का वासी बना, क्योंकि कोठरी अभी तक कहीं मिल नहीं पायी थी।

जब भीड़ से भरी गाड़ी में कोई मुसाफिर डंडा पकड़कर लटक जाता है और गाड़ी चल पड़ती है तो अन्दर के लोग अपने आप ही कहने लगते हैं कि अन्दर आ जाओ भाई, बाहर लटक कर जान दोगे क्या? मुसाफिर अन्दर पहुँच जाता है उसे खड़े होने को जगह दे दी जाती है, इसके बाद बैठने की भी गुंजाइस निकल आती है और [illegible]

होने लगती है। ऐसे ही दिन फिरे मँगरू के। नयागंज दालमंडी में एक कोठरी मिल गई उसे। वह सपरिवार उसमें चला गया। अब उसको एक बहुत लम्बे समय के लिए काम मिल गया था। एक नई कालोनी में। वहाँ मकान बन रहे थे, खूब जोरों से काम चल रहा था। एक मजदूर जहाँ अटक जाता वहाँ महीनों तक के लिए वह लग जाता। ठीक इसी तरह सिलसिला बना गौरी का भी। पड़ोस की कुछ स्त्रियाँ दलिहाई में दराने का काम करती थीं। गौरी संकोच छोड़कर उनके साथ गई और उस बाजार में उसे भी काम मिलने लगा।

समय बदला। मँगरू और गौरी एक से निश्चिन्त होते चले गये। आषाढ़ में स्कूल खुले। मँगरू ने रतन को भर्ती करा दिया। वह पढ़ रहा था। रूपा पढ़ रही थी। अब वह उठकर खड़ी हो जाती और दीवाल तथा चारपाई आदि का सहारा लेकर दो-एक कदम चलती भी।

गौरी ने गृहस्थी सजाई। अब घर में जरूरत भर के फूल-पीतल के बरतन थे, चारपाइयाँ थीं। बिछौनों में कथरी के साथ-साथ दो दरी भी थीं। कपड़े सबके सुथरे थे. उनका एक-एक जोड़ा बराऊ रखा रहता। मेला-मदार और तिथि-त्योहारों पर पहनने के लिए। इसके अतिरिक्त घर में छोटी-मोटी एक पूंजी भी रहती वक्त जरूरत के लिए। गौरी जब पिछले दिनों की याद करती तो उसके रोयें खड़े हो जाते और वह सोचने लगती कि वाकई आदमी मुसीबत में फँसकर परेशान हो जाता है। मुझे खुद अपने ऊपर ही यकीन नहीं होता कि कैसे और किस तरह मैंने मुसीबतें झेलीं। भगवान बड़ा न्यायी है उसने मेरी सुन ली। इसीलिए बिगड़ी बन गई है। बस वह हम सब लोगों पर ऐसी ही मेहरबानी बनाये रखे कि ईमानदारी के साथ मेहनत करके कमायें और शाम तक दाल-रोटी मिलती रहे।

कभी-कभी मँगरू को भी अपनी जन्म-भूमि की याद आती तो वह गौरी से कहने लगता कि देखो गौरी जमाना कितनी जल्दी बदलता है। भला कौन जानता था कि एक दिन हम लोग पार्वतीपुर छोड़ देंगे और

शहर में आकर बस जायेंगे। यहाँ अच्छा है, न कोई अपना दोस्त और न कोई दुश्मन। सभी आदमी काम से लगे रहते हैं, कोई बेकार नहीं रहता। यहाँ के लोग मेहनत करके पैदा करते हैं, दिल खोलकर खर्च करते हैं और गाँव का आदमी खून पसीना बहाकर चन्द कौड़ियाँ पैदा करता है, वे सकुचाते-सकुचाते खर्च करता है; क्योंकि उसमें से आधे से भी अधिक तो महाजन ही ले लेता है। उधार का नंगा रूप मैंने देख लिया। न मैं कर्जदार होता और न मेरे मकान पर दूसरे का कब्जा होता। कान पकड़ता हूँ गौरी अब किसी से एक कौड़ी भी उधार नहीं लूँगा।

गौरी अपने पति और पुत्र पर बलि-बलि जाती। उसके घर में शान्ति समायी रहती। सुख का दौर चलता रहता। अब उसे दुःखी होने और सोचने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। वह निरन्तर यही प्रयत्न करती रहती कि जितना कमाऊँगी उतनी ही बे-फिकरी रहेगी। वाकई देह से जितना काम लो उतनी ही उसमें फुर्ती आती है। मैं मेहनत से नहीं डरती, डरती हूँ ईमान से कि वह साथ देता रहे और किसी को भी उँगली उठाने का मौका न मिले।

गौरी अपने गाँव में जितनी बदनाम थी उतनी ही नेकनामी उसका बढ़ रही थी दराना बाजार में। हर दूकानदार उसे अपने यहाँ काम देने को तैयार रहता, क्योंकि वह काम ढंग से करती, लगन से करती और कभी किसी को कोई शिकायत का मौका नहीं देती।

: २६ :

डाल में जब फल लगता है तो उसका रूप कुछ और होता है तथा आकार बहुत सीमित। फिर धीरे-धीरे फल बढ़ता है, उसमें बीज पड़ते हैं। वह परिपक्व होता है। तब कहीं जाकर वह स्वाद की वस्तु बनता है। ऐसे ही मँगरू की मेहनत और उसकी ईमानदारी का फल उसको यह मिला कि उसे एक काटन मिल में कुली का काम मिल गया। उसकी नौकरी पक्की हो गई। अब महीने में उसे बंधी तनख्वाह मिलती। वह

पूर्णतया निश्चित हो गया था। गौरी ने कुछ रुपये जोड़े थे। मँगरू ने गहने बनवाये उनके। चाँदी की हसली उसी की टंडिया, हाथों के कड़े और पैरों में लच्छे। गौरी नहीं-नहीं करती रही; मगर वह नहीं माना। उस ने चार-पांच छकलाईयाँ, एक बनारसी साड़ी और कुछ सस्ती साड़ियाँ लीं। वह जूता पहनता और गौरी के लिए जब चप्पल लाया तो वह हँसकर बोली कि अरे ! मैं चप्पलें पहनूँगी, मुझे शर्म लगेगी। गाँव की औरतें तो नंगे पैर रहती हैं। पत्नी के इस भोलेपन पर मँगरू खुशी से फूल उठता। उसका कलेजा हाथ भर का हो जाता।

अब वह किराये की कोठरी छोड़ मँगरू आकर रहने लगा था काहूँ-कोठी के एक मकान में। उस घर में ऊपर के हिस्से में मारवाड़ी परिवार रहते थे और नीचे भी थे मारवाड़ी ही; लेकिन तृतीय श्रेणी के। बीच के हिस्से में एक दलाल रहता था। उसका नाम था धूपचन्द। वह अकेला था। उसका परिवार राजस्थान में था। वह यहाँ अकेला ही रहता। होली-दीवाली पर महीने-पन्द्रह दिन के लिए घर चला जाता। वह दोहरी देह का सांवले रंग का युवक था। अवस्था तीस के निकट पहुँच रही थी। अक्सर गौरी देखती कि दो आँखें उसे घूर रही हैं और वे धूपचन्द की हैं।

दृष्टि, बूढ़ा और जवान तो दूर रहा छोटा-सा बच्चा भी पहचानता है कि कोई उसपर खुश है या नाराज। ऐसे ही जब एक गैर आदमी किसी स्त्री पर दृष्टिपात करे और निगाह गड़ाकर रह जाये तो उसका मतलब अच्छा नहीं बुरा होता है। गौरी धूपचन्द के प्रति अक्सर सोचा करती कि यह आदमी अच्छा नहीं है। इसकी आँखों से शरारत टपक रही है। यह कहीं कोई गुल न खिला बैठे; क्योंकि मुझे ऐसे देखता है जैसे मैं कोई बाजार में बैठने वाली औरत हूँ।

अक्सर ऐसे मौके आते जब गौरी की निगाह मिल जाती धूपचन्द से। वह सहम और सिमटकर रह जाती और इस कोशिश में रहने लगती कि जब तक धूपचन्द घर में रहे वह अपने कमरे से बाहर न

निकले। वह पति से भी इस सम्बन्ध मे कुछ नही कहती; क्योंकि रामचरण महतो के साथ झगड़ा करने का नतीजा उसने देख लिया था। उस मे वह बुरी तरह तबाह और बरबाद हो गई थी।

गौरी को जब धूपचन्द की दुष्टता का स्मरण हो आता तो वह सोचने लगती कि क्या शहर और क्या गाँव सभी जगह बुरे भी आदमी रहते हैं और भले भी। वहाँ महतो मेरा दुश्मन हो गया था और यहाँ इस धूपचन्द की निगाहे अच्छी नही समझ मे आ रही है। खैर ! मेरा वह कुछ नही कर पायेगा। मैं उससे बोलती भी तो नहीं हूँ। कभी ऊपर किराये दारो के पास बैठने भी नही जाती। सवेरे से शाम तक घर के काम में लगी रहती हूँ। पूरा दिन बाहर बीत जाता है। इसके अलावा एक बात और है कि जब मैं पाक-साफ हूँ तो मेरा कोई कुछ भी नहा बिगाड़ सकता।

: २७ .

दालमडी मे सर्वत्र गौरी की चर्चा थी। उसे जो दूकानदार अपने यहाँ लगा लेता, फिर हटाने का मन नही करता। इसके अलावा और औरतें रुपया बीस आने और डेढ़ रुपये से दिन भर मे ज्यादा नही पाती; लेकिन कोई-कोई दूकानदार गौरी को दो रुपये और ढाई रुपये तक देते, जिससे वह उनके यहाँ ही काम करती रहे।

इस तरह असंतोष की लहर दौडने लगी मजदूर स्त्रियो मे। वे आपस में काना-फूसी करने लगी कि आजकल मेहनत के नही खूबसूरती के पैसे मिलते हैं। गौरी सुन्दर है, इसीलिए हर दूकानदार उसे काम देने को तैयार रहता है। लगता है कि वह अच्छे चाल-चलन की औरत नहीं है और कोई-कोई स्त्री तो यहाँ तक कहने लगती कि वह बडी बेहया है। मर्दो से हँस-हँसकर बातें करती है।

गौरी इन सब बातो को सुनती तो उसे मन ही मन इतना दुःख होता कि वह उसमें डूब कर रह जाती और सोचने लगती कि [illegible]

मेरी दुश्मन है। मैं सुन्दर थी इसीलिए महतो ने मुझे छेड़ा और खूबसूरती ही कारण बनी धूपचंद के घूरने का। यहाँ भी हर दूकानदार मुझे ऊपर से नीचे तक देखता है। क्या करूँ धरती के किस कोने में जाकर छिप जाऊँ जहाँ मुझे कोई देख न पाये। पेट बड़ा जालिम होता है। उसके लिए मेहनत और मजदूरी करनी ही पड़ती है।

मजदूर स्त्रियां गौरी से खिलाफ रहने लगीं। यह उसे अच्छा नहीं लगता। वह उनके बीच में जाकर बैठती तो उसे लगता कि उसका सिर शर्म से झुका जा रहा है, वह कटी जा रही है मन ही मन ग्लानि और क्षोभ से। इतनी सब बातें वह अपने में ही सीमित रखती, पति से कुछ भी नहीं कह पाती। एक दिन एक दूकानदार ने उसे पाँच रुपये का नोट मजदूरी में दिया तो वह चौंक उठी और नोट वापस करती हुई बोली—"अरे ! सेठ जी यह तो बहुत है, फुटकर नहीं है क्या ? मेरी मजदूरी तो सिर्फ डेढ़ रुपया है।"

इस पर दूकानदार हँसकर बोला—"रखो भी गौरी। तुम भी क्या याद करोगी कि किसी रईस से पाला पड़ा था। पाँच रुपये तो कुछ नहीं मैं तुम्हारे एक इशारे पर पाँच सौ खर्च कर सकता हूँ। मुझे ताज्जुब है कि सोने की चिड़िया जैसी सुन्दर तुम मजदूरी करती हो। सचमुच तुम्हें तो रानी होना चाहिए था गौरी। जाओ रुपये ले जाओ ? तुम्हें भी जब कभी कोई जरूरत पड़े मुझसे कहो तुम्हारा सवाल उसी समय पूरा होगा।"

सेठ कहता रहा, गौरी सुनती रही। उसने उलझना ठीक नहीं समझा। चुपचाप नोट उसके सामने रख दिया और घूमकर चल दी।

"अरे ! यह क्या गौरी ? तुम तो चल दी। रुपये तो लेती जाओ। मेरी बातों का बुरा मान गई क्या ? अरे ! गुस्सा न करो। गुस्से में तुम्हारा ही नुकसान है, मेरा नहीं। मैं···।"

सेठ यह कहता हुआ गौरी के पीछे लपका। उस समय वहाँ सन्नाटा था। दोनों नौकर किसी काम से गये थे। गौरी अकेली थी। सेठ ने जैसे ही

उसके कंधे पर हाथ रखा, वह टूट पड़ी बिजली-सी उस पर और तड़ातड़ तीन-चार थप्पड़ मार क्रोध में हांफती हुई बोली—"मैं बोलती नहीं हूँ और तू बके जा रहा है। खबरदार मुझे जो छुआ, मेरी देह में हाथ लगाया। मैं आवारा नहीं हूँ और न मेरी नीयत ही खराब है।"

आदमी जब खिसिया जाता है तो आवेश में आ वह नीच से नीच काम कर बैठता है। सेठ गौरी पर बल प्रयोग करने लगा। वह उसे दोनों हाथ पकड़ खींचने लगा और गौरी उसे दांतों से काटने लगी। जब बस नहीं चला तो वह चिल्लाने लगी, जिससे भीड़ इकट्ठी हो गई और लोग पूछने लगे 'क्या हुआ ?' 'क्या हुआ ?'

गौरी अपनी कहने लगी। सेठ अपनी सुनाने लगा। लोग चौंकने लगे। वे सब गौरी को चौकन्नी दृष्टि से देखने लगे। सेठ का कहना था कि मुझसे रोज रुपये मांगती है, दुनिया भर के दांव फेंकती है। मैं ऐसा बदचलन नहीं कि एक मजदूरनी के साथ अपने कुल की मर्यादा नष्ट करूँ। यह बड़ी नीच औरत है अपनी सुन्दरता का मोल चाहती है। और गौरी का कथन था कि नहीं यह सेठ झूठ कहता है। नीयत मेरी नहीं इसकी खराब है। मेरे साथ छेड़खानी की तो मैं चिल्लाई। उसपर यह दोष लगाता है। मैं ऐसी नहीं जो इसके बहकावे में आ जाऊँ।

किन्तु भीड़ गौरी और सेठ दोनों की बातों का एक सहारा समझ यह अर्थ लगाने लगी कि मामला कुछ और है। दाल में थोड़ा नहीं बहुत काला है। यह औरत फँसी होगी सेठ से। कुछ अनबन हो गई या पोल खुल गई होगी तभी यह स्वांग बना रखा है।

भीड़ में चख-चख मच रही थी। लोग अपनी-अपनी कह रहे थे। गौरी अब वहाँ खड़ी न रह सकी, धीरे-धीरे चल दी। सेठ अब भी बड़-बड़ा रहा था और जाती हुई गौरी को लोग देखकर व्यंग्य से हँसी हँस रहे थे। उन सब की दृष्टि में वह पतिता थी, कुलटा थी और थी व्यभि-चारिणी।

: २८ :

जैसे बिजली का करेन्ट लग जाने से देह का रोयाँ-रोयाँ सनसना जाता है वही गति गौरी की हो रही थी। उसे लगता था कि किसी ने उसकी बहुत बड़ी पूँजी लुट ली है, उसकी नेकनामी छीन ली है और उस के माथे पर कलंक का टीका लगा दिया है। वह घर आयी। मँगरू उससे पहले ही आ चुका था। उसने कुछ भी नहीं कहा उससे, निरन्तर अपनी घबराहट छिपाने का प्रयत्न करती रही। वह मुँह पर हँसी लाती रही रूखी और फीकी। उसने खाना बनाया और खाते समय आखिर मँगरू ने उसे टोक ही तो दिया, वह बोला—"दिन भर दाल दलते-दलते तुम बहुत थक जाती हो गौरी। देखो तो तुम्हारा चेहरा कैसा मुरझा रहा है। कितना कहता हूँ कि अब मेरी नौकरी पक्की हो गई है। तुम्हें काम करने की जरूरत नहीं। घर की रोटी और टहल इस पर बाहर का काम, मैं कहता हूँ कि यह सब नहीं चल पायेगा गौरी। तुम एक दिन बीमार पड़ जाओगी।"

पति की बातें सुन गौरी अपने मन का दुःख छिपा धीरे-धीरे कहने लगी—"ठीक कहते हो मैं न कमाऊँ तो भी काम चल सकता है; लेकिन फिर भी करना ही पड़ता है मन नहीं मानता जो।"

मँगरू हँस पड़ा और पत्नी की आँखों में झाँकता हुआ बोला—"वाकई गौरी तुम मर्दों से भी बड़ी हिम्मत रखती हो। लेकिन न जाने क्यों मेरा मन हमेशा यही चाहता है कि मेरी गौरी घर में रहे और मुस्कराती रहे। मैं जब काम पर जाऊँ तो उससे विदा होकर और लौटूँ तब भी वह दरवाजे पर खड़ी मिले। अब तो अपने लोगों का फेर बँध ही गया है, तुम्हें दिन भर मशीन की तरह काम करने की जरूरत नहीं।"

गौरी को अपनी समस्याओं का हल सहज ही मिल गया। उसने एक क्षण में ही तमाम बातें सोच डालीं और फिर दूसरे क्षण कहने लगी—

"काम एकदम तो नही बन्द किया जा सकता, कुछ न कुछ तो करना पड़ेगा ही। कहावत है 'बेकार से बेगार भली।' हाँ इधर दो-चार दिन से मुझे कुछ थकान-सी रहती है, देह में फुर्ती नही आती और काम मे मन नहीं लगता। सोचती हूँ कि कुछ दिन घर पड़ बैठूँ। सब अपने आप ठीक हो जायेगा।"

मँगरू प्रसन्न तो था ही अब वह और भी अधिक प्रफुल्लित होकर बोल उठा—"बड़ी जिद्दी हो गौरी, अपने मन का ही करती हो। खैर दो ही चार दिन सही कुछ तो देह को आराम दो।"

दम्पति में हँस-हँसकर बातें होती रही; लेकिन दोनों मे विभिन्नता थी। एक की हँसी मुक्त थी और दूसरे की परवश। गौरी के मुँह तक बार-बार आता कि वह पति को आज की घटना से अवगत करा दे; लेकिन जैसे कोई जबरदस्ती उसे रोक-रोक लेता। वह मन मानकर रह जाती, अपने अन्तर के पट नही खोल पाती। वह नारी थी, इसीलिए मजबूरी उसके समय थी। वह विवश थी, लाचार थी अपनी नारीगत दुर्बलता से। रात को जहाँ एक ओर पति निश्चिन्त सो रहा था, वहीं दूसरी तरफ जाग रही थी और सोच रही थी कि जब झूठी बदनामी एक बार उड़ जाती है तो वह धीरे-धीरे पक्की हो जाती है तूली रंग की तरह। उसका दाग कभी घुलता नहीं। क्या करूँ, अगर कुरूप होती तो बहुत अच्छा था। भगवान जब गरीबों को पैसे नहीं देता, उन्हें रोटी और कपड़े से जिन्दगी भर मोहताज रखता है, तो फिर इन्हे खूबसूरती क्यो देता है। मेरा रूप, मेरा रग और मेरी छवि सब की सब ऐसी है कि महतो और सेठ जैसे लोग जब देखो तब मुझे घूरते हैं। मुझे देखते ही ऐसे लोगों की नगाहें बदल जाती। वे आदमी से राक्षस बन जाते हैं। चलो अच्छा हुआ अभी चार-पाँच दिन घर में रहूँगी, काम पर नहीं जाऊँगी तब तक बात नई से पुरानी हो जायेगी और फिर मैं उस बाजार में जहाँ तक होगा काम न करके कलक्टर गंज गल्ला बाजार मे अपना [illegible] बनाऊँगी। बदनाम जगह को इस तरह छोड़ देना चाहिये [illegible] केंचुली [illegible]

: जब सूरज ने आँखें खोलीं

वदनाम आदमियों से इतना ही दूर रहना चाहिये जैसे धरती से
...श।

सारी रात गौरी को नींद नहीं आयी। दुनिया भर की बातें उसके ...ाग में आती रहीं। वह चकराती रही और सोचती रही, रात बीतती ...ी और पता नहीं कब सवेरा हो गया।

× × ×

दालमंडी में धूपचन्द दलाली करता था। उसने दूसरे दिन बाजार में सुना कि गौरी की सेठ गिल्लूमल के साथ कुछ धींगा-मुश्ती हुई है। सारी बातें विस्तार में उसे मालूम हुई और अन्त में उसका विश्वास भी पक्का हो गया कि हो न हो गौरी में कुछ खोट जरूर है। जरूर उसका सेठ के साथ कुछ सिलसिला रहा होगा या तो भेद खुल गया या फिर दोनों में कुछ खट-पट हो गई। अच्छा ! तभी गौरी आज काम पर नहीं आई क्योंकि जब मैं घर से चला तो रोज काम पर जाने की अपेक्षा आज वह घर में मौजूद थी।

जो गहरे पापी होते हैं उनकी थाह कोई नहीं पाता। वे ऐसा व... फँसते हैं कि वार कभी खाली नहीं जाता, तीर निशाने पर ही ल... है। उनके काम देर में होते; लेकिन उनके हिसाब से दुरुस्त होते... वे कभी कच्ची गोलियाँ नहीं खेलते, हर काम पक्का करते हैं। धू... की आँखों में गौरी समा रही थी। वह उससे हँसने-बोलने के प्र... रहता; किन्तु कोई राह नजर नहीं आती। अब सिलसिला बन ग... उसने घर के हर आदमी को बुलाया कि मँगरू की औरत गौ... नहीं बदचलन है। दराने में जहाँ काम करती थी, वहाँ ए... उसकी आँखें लड़ गईं। आज काम पर नहीं गई उसका यही... सेठ से उसका झगड़ा हो गया। सारे बाजार में चख-चख म... उसकी बदनामी फैल रही है।

ऊपर से लेकर नीचे तक सभी किरायेदारों में गौरी की... ...फल गई। सुना मँगरू ने भी, वह सन्न रह गया। उसने...

नही पूछा और सोचने लगा कि शायद यह झूठ हो, धूपचन्द से किसी ने गलत कह दिया हो। अगर कोई बात होती तो गौरी मुझे जरूर बतलाती। वह मुझसे कुछ भी नही छिपाती है।

और गौरी ने जब सुना कि धूपचन्द उसकी बदनामी की पुड़िया लाया और घर में खोल दी है तो उसे जमीन-आसमान नजर आने लगा। घबड़ाकर यह सोचने लगी कि मैं उनको (मँगरू) क्या जवाब दूँगी ? जिस बात से मैं बचना चाहती थी वह सामने आ गई। क्या करूँ ? भगवान मुझे हिम्मत दे। मेरा बना घर ऐसा ही बना रहे, उस पर कोई आफत न आये। मैं डरती हूँ; क्योंकि बहुत दुःख झेल चुकी हूँ।

अब परिस्थिति यह थी। मँगरू सोच रहा था कि अपनी बदनामी वाली बात गौरी ने भी तो सुनी होगी। इस बारे में वह मुझसे जरूर बातें करेगी। देखूँ क्या कहती है। और गौरी, मन ही मन डर रही थी कि कहीं वे कुछ पूछ न लें। आखिर मैं क्या कहूँगी। कोई बहाना भी तो समझ मे नही आता।

: २६ :

गौरी ने अपनी ओर से कोई बात नहीं चलाई तो मँगरू ने उससे स्वयं पूछा कि यह क्या माजरा है गौरी ? धूपचन्द क्या कहता है ? मैं कल से सुन रहा हूँ, हैरान हूँ, कुछ समझ में नही आता [illegible] तुमने तो मुझे कुछ भी नही बतलाया। आखिर क्या बात है गौरी ?

पति के इस कथन पर गौरी फफककर रो पड़ी और [illegible] —"क्या बताऊँ ? मेरी तकदीर ही खोटी है। जिधर [illegible] ठोकर लगती है। बात परसों की है। तुमने [illegible] गरम-गरम मामला था, कही बढ़ जाता तो [illegible] महतो के साथ झंझट होने का नतीजा मैं [illegible]

"आखिर हुआ क्या ? कुछ बताओ [illegible] बदलने लगी। उसका चेहरा गुस्से से [illegible]

पोंछती हुई संयत होकर बोली—"गुस्सा होने और मन खराब करने की जरूरत नहीं। मैं तो यह जानती हूँ कि जिस राह पर जहरीले सांप लोट रहे हों, वह राह छोड़ देनी चाहिए । तिनके और तूफान की लड़ाई में तिनका ही बरबाद होता है। जैसे हम लोग महतो वाले मुकदमे में बुरी तरह तबाह हो गये । सुनो! लेकिन तुम्हें मेरी कसम है। उस सेठ के पास झगड़ा करने मत जाना और न कुछ कहना धूपचन्द से ही। जो बकता है, उसे बकने दो। हमें अपने काम से मतलब है दुनिया भर से नहीं।" यह कहकर गौरी वह घटना बताने लगी जो गिल्लूमल के साथ घटी थी। दोष उसका था और लांछित गौरी की की जा रही थी।

मँगरू सुनता रहा, उसे क्रोध आता रहा; लेकिन बहुत कुछ सोचकर वह समाई कर गया और सेठ से भिड़ने नहीं गया। वह जानता था कि गौरी की हर बात सही होती है। वह हर हालत में बेगुनाह है। सारा कसूर इस धूपचन्द का है जो बाजार की बात घर में लाकर विष फैला रहा है।

बातचीत के सिलसिले में गौरी ने मँगरू को यह भी बतलाया कि धूपचन्द अक्सर उसे घूरता रहता है उसने यह बात कभी नहीं बतलाई, हमेशा अपने तक ही रखी; लेकिन जब मौका सामने आ गया है तो कह रही है। वह उससे बोलने की कोशिश करता है। मगर रुख नहीं पाता जो बात करे। अक्सर उसको देखकर मुस्करा देता और जब देखो तब उसकी आंखें मेरी ओर ही लगी रहती हैं।

इन सब बातों का मतलब मँगरू ने यह निकाला कि जितनी जल्दी हो सकेगा वह यह मकान छोड़ देगा और गौरी को कहीं शहर में मजदूरी करने नहीं भेजेगा। फिर क्या होगा सभी ताजिये अपने आप ही ठंडे हो जायेंगे। ऐसा सोचते समय मँगरू को बार-बार गौरी की वह बात याद आ जाती कि जिस राह पर काले सांप लोट रहे हों, वह राह छोड़ देनी चाहिए।

: ३० :

धूपचन्द सोचता था कि जब घर में गौरी की बदनामी फैलेगी तो बात बाहर भी जायेगी और इस तरह वह झुक जायेगी अपने ही आप। तब मुझे मौका मिलेगा उसकी कमजोरी उसके सामने रखकर नाजायज फायदा उठाने का। जब किसी की चोटी पैर तले दब जाती है तब न तो वह सिर उठा पाता है और न उफ ही कर पाता है।

लेकिन ऐसा हुआ नहीं। गौरी निर्दोष थी और मंगल को अपनी पत्नी के प्रति अटूट विश्वास था कि गौरी मुँह में सोना डाले है। वह कभी झूठ नहीं बोलती। इस तरह दम्पति मौन थे। लोगों के गाल बज रहे थे और धूपचन्द मन ही मन खिसिया रहा था कि मैंने जो सोचा था वह न होकर कुछ और ही हो रहा है। अतः वह दूसरा मार्ग ढूँढने लगा गौरी से सम्पर्क बढ़ाने का।

एक दिन गौरी आँगन में अरगनी पर धोती फैला रही थी कि उसने देखा धूपचन्द जीने के दरवाजे पर खड़ा उसकी ओर प्यासी आँखों से देख रहा है। उसने जल्दी से मुँह घुमा लिया और वहाँ से चली आयी। ऐसे ही दूसरे दिन जब गौरी रूपा को गोद में लिए चौखट पर खड़ी थी और एक दही वाले को बुला रही थी। दही वाला दूर निकल गया था सामने से आता हुआ धूपचन्द हँसकर कहने लगा—"दही वाला तो दूर निकल गया है, लाओ? मैं हलवाई के यहाँ से ला दूँ। कितना ··?"

"कितना भी नहीं!" यह कहकर गौरी द्रुतवेग से अपने कमरे में चली गई।

और एक दिन तो धूपचन्द को मुँह की खानी पड़ी। गौरी ने उसे टोक दिया जब वह स्नान कर रही थी और धूपचन्द की आँखें उसकी ओर लग रही थीं।

आदमी अपने मन बहलाव के लिये जो योजना बनाता है उसी के अनुसार उसका कार्यक्रम निर्धारित करता है। किन्तु जब योजना छिन-

भिन्न हो जाती है, काम बिगड़ जाता है तो वह खिसिया जाता है और उसे चल रही परिस्थितियों पर अनायास ही झुँझलाहट होने लगती है। कुमार्गी पर यदि कलंक लगता है तो वह थोड़ी देर के लिए शर्मिन्दा होकर फिर उसी धार में बहने लगता है। तभी लोग कहने लगते हैं कि यह पूरा बेहया है। और जब कपट भरे प्रेत के पाँसे फेंकते ही उसका हाथ पकड़ लिया जाता है, उँगलियाँ मरोड़ दी जाती हैं तब वह शरमाता नहीं, बल्कि खिसिया जाता है। प्रतिशोध की भावना उसके मन में घर कर लेती है। धूपचन्द गौरी से अपने अपमान का बदला लेने की न जाने कितनी तरकीबें सोचता; मगर एक पर भी वह नहीं चल पाता। तब वह धीरे-धीरे नीचता पर उतर आया। वह नील वाली गली के एक मशहूर बदमाश से मिला और उससे कहा कि दस-बीस रुपये मैं खर्च कर दूँगा। तुम एक दिन रास्ते में मँगरू के हाथ-पैर तोड़ दो। इसके अन्दर धूपचन्द की यह नीति थी कि जब मँगरू अपाहिज बनकर घर में पड़ेगा तो मैं गौरी से झूठी हमदर्दी के बहाने बोल सकूँगा, बात कर सकूँगा। कभी न कभी वह चंगुल में आयेगी ही। चिड़ीमार बड़ी साव धानी और समझदारी से चिड़िया पकड़ता है।

लेकिन उस बदमाश आदमी ने जो कि एक कुख्यात गुंडा था क वार का सजायाफता—उसने धूपचन्द को यह सलाह दी कि लाला उ रुपये मुझे दो मैं आपको एक करौली लाकर देता हूँ। उसे छिपा किसी तरह मंगरू के कमरे में और मुझे आकर बता दो। मैं मुखबि कर दूँगा जाकर पुलिस थाने में। बस ! फिर वह रंगे हाथों गिरफ्तार जायेगा।

उस आदमी की बातें सुन धूपचन्द बहुत खुश हुआ। रुपये दे उसने थोड़ी देर में ही करौली प्राप्त कर ली। वह लाकर घर में और प्रतीक्षा करने लगा कि किसी तरह रात हो और मैं करौली छिपा आधी रात के समय मँगरू के कमरे के रोशनदान में रख दूँ। पुलिस को खबर हो जायेगी और भगवान की दया से कल इतवा

है। मँगरू काम पर नहीं जायेगा, उसकी छुट्टी रहेगी।

दिन गुजर रहा था। गौरी घर में बैठी बच्चों से मन बहला रही थी। छुट्टी हो गई थी, मँगरू घर आ रहा था। उसे पत्नी की याद आ रही थी। बच्चों की सुधि उसके पैरों में तेजी बनकर समा रही थी। वह आया। गौरी खिल उठी फूल की तरह। थोड़ी देर मे रात हो गई, तारे निकल आये; किन्तु चाँद नही निकला; क्योंकि आज अमावस थी।

× × ×

अलख सवेरे ही धूपचन्द घर से निकल गया। किसी ने न देखा और न किसी ने जाना ही। वह जब लौटा तो सूरज निकल आया था। उसके दाहिने हाथ में सुमिरिनी थी जिस पर उँगलियाँ चल रही थी। लाल और पीला चन्दन लग रहा था उसके माथे पर, कांधे पर गीला अँगोछा और बाये हाथ मे जल से भरी गगाजली लटक रही थी। वह मँगरू के कमरे की ओर देखता हुआ जीने पर चढने लगा। तब गौरी हँसकर रतन से न जाने क्या कह रही थी और मँगरू रूपा से खेल रहा था। उस छोटे से कमरे मे अनोखा मसार बस रहा था।

धूपचन्द मन ही मन सोचने लगा कि गौरी की यह हँसी अभी आँसुओं मे बदल जायेगी। थोड़ी देर बाद ही यहाँ कुछ का कुछ हो जायेगा। वह अपने कमरे मे पहुँचा और बेचैनी से राह देखने लगा कि कब पुलिस आये और कब मँगरू पकडा जाये। बस उसकी राह का काँटा दूर हो जाय, फिर मेरी पाँचों उँगलियाँ घी मे है। गौरी जायेगी कहाँ मुझसे बचकर। उसका गुनाह यही है कि वह गजब की खूबसूरत है।

धूपचन्द की बुराई का साँप मँगरू पर फन उठाकर फुफकार पडा। वह एकदम घबड़ा गया। उसके बदन में काटो तो लोहू नहीं। गमगमाती हुई पुलिस एकदम आगन मे आ गई। कमरे मे जाते ही दरोगा ने मँगरू से यह कहा—"मुखबिर के जरिए हमें मालूम हुआ है कि तुम नाजायज हथियार घर मे रखते हो। हमे शक है। हम तुम्हारे कमरे की तलाशी लेंगे।"

तो पुलिस ने उन्हें बड़ी बेरहमी से पीटा था। क्या आज छोड़ देगी ? जरूर मारा होगा उनको और सीखचों में बन्द कर दिया होगा। देखो ! धूपचन्द गया है क्या होता है। मेरी तो बुद्धि काम नहीं कर रही है। आदमी आखिर जायेगा कहाँ वह रहेगा धरती पर ही। गाँव और शहर दोनों की दुनिया मैंने खूब देखी और बाज आई ऐसी बस्ती से। लगता है कि अब आबादी छोड़ जंगल में रहना पड़ेगा।

गौरी विचारों में खोई मलिन मुद्रा में बैठी थी। रतन भूखा था। वह रात की रखी बासी रोटियाँ खाने लगा, आधी रोटी रूपा को भी पकड़ा दी और फिर माँ के पास आकर बोला—"तुम भी खा लो माँ। बहुत देर हो गई बापू पता नहीं कब आयेंगे। माँ! अभी ऊपर वाले धूप-चन्द लाला लौटे नहीं। वे बापू को लेने गये हैं न ?"

'हाँ ! वे बापू को लेने गये हैं। तुम खाओ रतन मुझे अभी भूख नहीं है।"

माँ के मुँह से यह सुन रतन को संतोष नहीं हुआ। वह जिद करने लगा—"नहीं ! तुम भूखी हो। बापू को सिपाही ले गये हैं इसीलिए नहीं खा रही हो। लो···।"

अभी रतन इतना ही कह पाया था कि धूपचन्द आ गया और आते ही गौरी से कहने लगा—"मैंने बड़ी कोशिश की गौरी, साथ में कई आद-मियों को भी ले गया। उन पर आठ-दस रुपये भी खर्च कर दिये कि उन लोगों का शायद दरोगा साहब पर कुछ असर पड़ जाये। मगर दरोगा साहब मिले ही नहीं। वे दौरे पर गये हैं, कहीं रात तक लौटेंगे। अब तुम्हीं बताओ क्या हो सकता है ? अब सवेरे ही कुछ हो पायेगा।"

गौरी धुपचन्द के एहसान से दब गई। वह विनय-भरी दीन वाणी में बोली—"तुमने अपनी कोशिश में कुछ उठा नहीं रखा लाला; लेकिन मेरा मुकद्दर ही खोटा है। उसके लिए कोई क्या कर सकता है। मैं तुम्हारा यह एहसान कभी नहीं भूलूंगी। तुम गाढ़ में मेरे काम आये हो। चलो सवेरे ही सही। देखो क्या होगा।"

धूपचन्द थोड़ी देर तक वहाँ बैठा रहा और गौरी से हमदर्दी भरी बातें करता रहा। इस समय गौरी यह बिल्कुल भूल गई थी कि वह खोटा आदमी है, खरा नहीं। वह उससे अपने दुःख-सुख की बातें कहती रही। जिससे उसके मन का बोझ कुछ हल्का हो गया।

और सवेरे धूपचन्द ने आकर गौरी को यह सूचना दी कि मँगरू कचहरी भेज दिया गया है। वहाँ से जेल जायेगा। अब जमानत थाने से नहीं कचहरी से ही हो सकेगी। क्या बताऊँ इस समय भी पाँच रुपये खर्च हो गये तुम फिक्र न करो। मैं आज कचहरी जाऊँगा और मँगरू की जमानत करके ही लौटूँगा।

गौरी ने यह सुना तो वह धूपचन्द की ओर देखती रह गयी उसे लगने लगा कि मामला सुलझ नहीं उलझ रहा है। जमानत अब शायद मुश्किल से होगी।

: ३२ :

तीसरे पहर चार बजे धूपचन्द घर वापस आया। वह सीधा गौरी के कमरे मे गया और बताने लगा कि बड़ी हैरानी रही। सब मिलाकर बीस-बाइस रुपये खर्च हो गये; लेकिन जमानत मंजूर नहीं हुई। मेरे सामने मँगरू जेल भेजा गया है। खैर! अब भी मैंने हिम्मत नहीं हारी है। कल जजी (सेशन कोर्ट मे) दरख्वास्त दूँगा। वहाँ से जमानत जरूर हो जायेगी।

गौरी ने सुन लिया, उसने कुछ जवाब नहीं दिया और धूपचन्द यह समझा कि उसका प्रभाव पूर्णरूपेण गौरी पर पड रहा है। इस समय वह भीगी बिल्ली बन गयी है। वह उस वक्त के अलावा रात तक दो बार उसके कमरे में आया। हमदर्दी भरी बातें करता रहा। गौरी भी हाँ-हाँ करती रही। यद्यपि उसे अब उम्मीद नहीं रह गयी थी कि मँगरू की जमानत होगी; लेकिन फिर भी थोड़ी-थोड़ी आशा की झलक जरूर देख पड़ती जब धूपचन्द उससे लल्लो-चप्पो भरी दुनियादारी की

दूसरे दिन धूपचन्द का सवेरा हुआ आकर गौरी के कमरे में। उसने कहा मैं पचास रुपये लेकर जाता हूँ और जमानत की अर्जी मंजूर करवा कर ही लौटूंगा। तब गौरी संकोच से पड़ती हुई विनयी स्वर में बोली —"जितने भी रुपये खर्च होंगे लाला मैं सब दूंगी। जमानत हो जाये वे किसी तरह घर आयें। पैसे का ख्याल न करना, वह कहीं जायेगा नहीं।"

इस पर धूपचन्द दरियादिली की लहर में बहता हुआ बोला—"पहले काम तो होने दो। रुपये की बातें फिर बाद में करना। तुम खर्च करो या मैं बात एक ही है। सौ बातों की एक बात कि सब से पहले काम होना चाहिए।"

अब गौरी धूपचन्द के प्रति फिर एक बार श्रद्धा से भर आयी। उसे ऐसा लगने लगा कि वह दूसरे का दर्द पहचानने वाला आदमी है। उसमें बड़ी दया-मया है।

लेकिन जब धूपचन्द दिन ढले आया तब भी उसने ऐसी बातें कहीं जो किसी हद तक दुरुस्त थी और बहुत कुछ चौंकाने वाली। उसने कहा कि पैंतीस-छत्तीस रुपये बिगड़ गये और काम नहीं बना। बस ! दो दिन बाद ही मैं इलाहाबाद जाऊंगा। हाईकोर्ट से जमानत करवाऊंगा। यहाँ तो कुछ जोर नहीं चला। तब गौरी का माथा ठनका और वह समझ गई कि धूपचन्द उसे झूठ बता रहा है। उसने शायद जमानत की कोशिश ही नहीं की। भला कौन काम नहीं होता है। अगर खूब दौड़-धूप की जाये। जरूर इसके दिल में खोट थी। यह मुझे भुलावा देता रहा। इससे रुख न मिलाना ही अच्छा है।

गौरी खिच गई, वह कटी-कटी रहने लगी धूपचंद से। धूपचंद आता उससे बातें करता। वह हूँ-हाँ करके रह जाती, उससे अच्छी तरह नहीं बोलती। और जब उसका क्रम अधिक बढ़ा तो गौरी यह करने लगी कि जब धूपचंद कमरे में आता तो वह उठकर बाहर चली जाती। धूपचंद को उसका यह व्यवहार बहुत अप्रिय लगता। वह मन ही मन झुंझलाकर

रह जाता, कुछ कह नही पाता ।

आखिर एक दिन समाई नही हुई धूपचंद को । जब गौरी उठकर बाहर जाने लगी तो उसने उसका पहुँचा कसकर पकड़ लिया और बोला—"जाती कहाँ हो गौरी ? मुझसे इतना भागती क्यों हो ? मैं कोई हौआ हूँ क्या ?"

रतन बाहर था, रूपा आँगन में बैठी थी । दिन डूब गया था । गौरी दिया जलाने जा रही थी अचानक धूपचन्द आ गया और उसने यह हरकत की तो वह चिहुँक उठी । वह पहुँचा छुड़ाती हुई बोली—"तुम्हें क्या हो गया है लाला ? छोड़ो मेरी कलाई और दूर से बात करो ?"

"दूर से बात करूँ और मैं । जानती हो जमानत के चक्कर में मेरे सौ सवा सौ रुपये खर्च हो गये । वे कौन देगा ? मेरी बात सुनो गौरी । मैं तुम्हे सोने-चाँदी के गहनो से लाद दूँगा । मेरे पास पैसे की कमी नहीं है । केवल इतना चाहूँगा कि मुझे भर नजर देखो और मुस्करा दो । उस मुस्कराहट पर मैं सब कुछ निछावर कर दूँगा ।"

धूपचन्द कहता रहा । गौरी सुनती रही । वह मन ही मन सुलगती रही । फिर एकदम भड़क उठी आग की तरह और जोर का एक मुक्का धूपचन्द के मुँह पर मारती हुई बोली—"मुझे पैसे का लालच देता है । यह नहीं जानता कि मैं नागिन हूँ नागिन । ऐसा डसूँगी कि मौत ही नजर आयेगी लाला । चले जाओ । नही तो मैं बहुत बुरी तरह पेश आऊँगी । तुम्हारे जैसे लोगो से यही उम्मीद करती हूँ मैं; क्योंकि ऐसे पापी मुँह के मीठे और मन के काले होते हैं ।"

बात बिगड़ गई थी, इसीलिये धूपचन्द खिसिया गया । उसने भी हाथ छोड़ दिया गौरी पर । गौरी उससे लिपट गई । दोनो मे हाथा पाई होने लगी । दोनों का चिल्लाना सुनकर वहाँ घर के सब लोग इकट्ठे हो गये । दोनों लड़ते-लड़ते अब आँगन में आ गये थे । लोगो ने उनको छुड़ाया । धूपचन्द सब से कह रहा था कि इसके आदमी की जमानत कराने के चक्कर मे मेरे सौ रुपये से ऊपर खर्च हो गये । इसने कहा था कि मैं

इकट्ठे दे दूँगी। आज माँगे तो गालियाँ देने लगी और धक्का देकर मुझे कमरे से बाहर निकालने लगी। औरत होकर यह मेरी बेइज्जती करेगी, मैं कभी बर्दाश्त नहीं कर सकता।

और गौरी कह रही थी दोनों हाथ नचा-नचाकर कि यह निगोड़ा झूठ बोलता है। इसने मुझे आते ही छेड़ा और लालच देने लगा कि मेरे पास पैसे की कमी नहीं है। मैं तुम्हें सोने-चाँदी के गहनों से लाद दूँगा। यह मेरी इज्जत पर डाका डालना चाहता था। यह मैं कतई नहीं सह सकती। मैं कोई आवारा औरत हूँ क्या ?

औरतें अलग काना-फूसी कर रही थीं कि गौरी बड़ी पाकदामन बनती है। दराना बाजार में इसकी थू-थू हो चुकी है। आज यहाँ भी भेद खुल गया कि धूपचन्द से वह मोहिनी बनकर रकम ऐंठती रही और अब सत्तर चूहे खाकर बिल्ली हज को चली है।

और आदमी, जब धूपचन्द अपने कमरे में चला गया और गौरी भी चुप होकर बैठ रही, तो जहाँ-तहाँ इस तरह की बातें करने लगे कि गौरी और धूपचन्द दोनों के बीच कुछ दाल में काला था। फिर रुपये-पैसे के मामले में तो बड़ों-बड़ों में कहा-सुनी हो जाती है। औरत जब गैर मर्द से प्यार करती है तो सबसे पहला उसका आकर्षण पराया धन ही होता है। इसीलिए गौरी और धूपचन्द में खटपट हो गई। वाकई गौरी बदचलन है। आज यह अच्छी तरह खुलासा जाहिर हो गया।

: ३३ :

अब गौरी का उस घरमें कोई भी अपना नहीं था। वह अपना दुःख किससे कहती। सभी उसको घृणा भरी निगाहों से देखते, उसका उपहास करते। एक महीना बीत गया और वह काम पर नहीं गई। हाँ इस बीच जेल जरूर गई, पति से मिली। मंगरू ने उसे यह सलाह दी कि गौरी जितनी जल्दी हो सके वह मकान छोड़ दो। उस घर के लोग अच्छे आदमी नहीं हैं, उनसे तुम्हारा कभी भला नहीं हो सकता और मैं तो अब पराये

बन्धन मे हूँ। मुकदमा चलेगा। देखो छुटता हूँ या सजा होती है। घबड़ाना मत गौरी और न हिम्मत ही हारना। ये टेढ़े दिन किसी तरह बीत ही जायेंगे।

गौरी ने बहुत कोशिश की लेकिन उसे उस मुहल्ले मे कही भी कोई खाली कमरा नही मिला। दूसरे मुहल्लों मे जब वह जाती और लोगो से कहती कि मेरा आदमी जेल में है मुझे कोई कमरा खाली हो तो बताओ तो लोग हँसते और उसकी उपेक्षा करते। गौरी दुःख के अथाह सागर में डूब जाती और सोचने लगती कि औरत के सिर पर जब मर्द की छाया होती है तो उसे दुनिया अच्छी निगाहो से देखती है और अगर मेरी जैसी हालत हुई तो कोई फूटे मुँह से बात तक नही करता। बहुत ढूँढा और खोजती रहूँगी कभी न कभी तो मकान मिलेगा ही। सब से पहले जरूरी है मुकदमे की पैरवी करना। मेरे पास जो कुछ है सब दाँव पर लगा दूँगी और भगवान से विनती करूँगी कि मुकदमे का फैसला ऐसा हो कि दूध का दूध और पानी का पानी सामने आ जाये। वे साफ छूट जायें।

मुकदमा शुरू हो गया। गौरी ने वकील किया। वह तारीख वाले दिन कचहरी जाती, इजलास मे खड़ी होकर मुकदमा सुनती। उसकी समझ में कुछ आता और कुछ नही। घर मे धूपचन्द उसको देखकर व्यंग्यात्मक हँसी हँसता जो गौरी को बहुत बुरी लगती; लेकिन वह सोचती कि मेरा समय खराब है किसी से उलझना ठीक नही। इसीलिये चुप रह जाती। उसकी खामोशी का मतलब धूपचन्द यह निकालता कि गौरी अब दब गई है, उसकी सारी तेजी हवा हो चुकी है।

दो महीने बीत गये। गौरी के पास के रुपये धीरे-धीरे खर्च हो गये। अब नम्बर गहने बिकने का था। वह रोज सोचती कि दलिहाई मे न जा मैं कल्लवटरगंज जाऊँगी। वह शहर की सब से बड़ी गल्ले की मंडी है। वहाँ काम जरूर मिलेगा; लेकिन वह ऐसा सोचकर ही रह जाती, कुछ कर नही पाती। उसका मन कहता कि मुकदमे के फैसले की राह देख लो। अभी ध्यान एक ही तरफ दिया जा सकता है। चाहे रोजी-रोजगार

देख लूं और चाहे मुकदमे की दौड़-धूप कर लूँ।

मुकदमे का फैसला नहीं हो पाया, गौरी की हसली बिक गई औ जिस दिन हुक्म सुनाया जाने वाला था, टंड़िया और हाथों के कड़े बे वह रुपये बांधकर ले गई; लेकिन वहां सुनने को मिला कि मँगरू को ए साल की कैद हो गई है। गौरी वहीं भरभरा कर गिर पड़ी। वह कु देर तक अचेत रही। फिर जब होश आया तो खूब रोयी फूट-फूट कर वह इजलास में। मँगरू को जेल भेज दिया गया और वह किसी तरह गिरती पड़ती घर पहुँची।

अब गौरी को अपनी मंजिल स्वयं तय करनी थी। दुःख को पी छोड़ वह हिम्मत के साथ आगे बढ़ने की सोच रही थी। वह कलक्टरगं गल्ला बाजार गई। वहां कहीं भी उसकी दाल नहीं गली। लगभग ए हफ्ते तक इसी तरह वह इधर-उधर भटकती रही। अन्त में उसने य निश्चय किया कि वह नई बस्तियों मे जायेगी जहाँ मकान बन रहे हैं वह ईंट और गारा ढोयेगी। शायद अब शहर में और कहीं काम न मिलेगा। मरता क्या न करता यह भी करके उसने देख लिया। कहीं भ उसे काम नहीं मिला। उसकी परेशानी बढ़ती गई।

तब गौरी पहुँची दराना बाजार में। वहां उसने काम की माँग व तो दूकानदार कहने लगे कि जाओ ! जाओ ! तुम्हारी जैसी आवा औरतों के लिए हमारे यहां काम नहीं है। यहां से भी गौरी निराश लौ आई। चैत का महीना चल रहा था। वह घर पर ही कुछ करती अग देहात में होती। उसने सोचा क्यों न बच्चों को लेकर कुछ दिन के लि गंगादेई के गांव चली जाऊँ। वहां इस समय खेतों में कटाई का काम च रहा होगा। गंगादेई जरूर काम दिलवायेगी।

लेकिन ऐसा सोचते क्षण गौरी इस बात से पीछे हट जाती और म ही मन कहने लगती कि नहीं मैं गांव नहीं जाऊँगी। हर इतवार व जेल जाती हूँ उनसे मिलने, वह फिर से कैसे हो पायेगा और इसके अला बैसाख में इम्तहान होगा रतन का। अगर मैं उसको लेकर चली गई

उसकी एक मान की पढ़ाई बेकार जायेगी। अच्छा ! देखती हूँ मैं मुसीबतों को कि वे कब तक पीछा नहीं छोड़ेंगी। गौरी कुआं खोदकर ही पानी पियेगी, किसी से भीख नहीं माँगेगी। जब तक एक छल्ला भी जेवर मेरे पास रहेगा मैं नहीं डरूँगी दुःखों से, बराबर काम की तलाश में लगी रहूँगी।

मकान का किराया चार महीने का हो गया था। मकान मालिक रोज आकर गौरी को जली-कटी सुनाता। उसका तकाजा करने का ढंग ऐसा होता जो गौरी को बहुत बुरा लगता। आखिर एक दिन उसने तंग आकर बचे-खुचे गहने भी बेच डाले और किराया चुका दिया। फिर उस दिन यह तय करके निकली की अगर आज भी उसे कहीं काम न मिला तो वह खोमचा लगायेगी, फेरी में बेचेगी। इसके अलावा और चारा ही क्या है कहीं भी तो कोई गुन्जाइश नहीं देख पड़ती।

दृढ़-प्रतिज्ञ जब अपने निश्चय पर अडिग हो जाती है तो सफलता फिर उससे दूर नहीं रह पाती। वह किसी न किसी रूप में उसके सामने आकर ही रहती है। गौरी को काम मिल गया एक सड़क पर। वह दुरमुट चलाती, गिट्टियाँ तोड़ती, सिर पर लादती। मतलब यह कि भूत की तरह जुटकर काम करती, पसीने-पसीने हो जाती। तब नकद मजदूरी के पैसे हाथ पर आते। वह खुशी-खुशी घर पहुँचती, हँसकर बच्चों को गले से लगाती, फिर चौके में घुसती। आधी रात होते-होते वह कमर लगा पाती। वह सवेरे जल्दी उठती, रात की बची रोटियाँ खुद खाती, बच्चों को खिलाती तब काम पर जाती।

यह दिनचर्या बन गई थी गौरी की। लोग उसकी मेहनत को देखते, दाँतों तले ऊँगली दबाते। घर के किरायेदार कोई कुछ कहता और कोई कुछ। धूपचन्द की जिससे भी बातें होती तो वह यही कहता कि गौरी बड़ी बेढब औरत है। सारे दिन न जाने कहाँ खो जाती है, रात को देख पड़ती है। रतन कहता है कि वह सड़क पर काम करती है; लेकिन कुछ समझ में नहीं आता कि इतनी नाजुक और दुरमुट कैसे चलाती है

ये सब बनी-बनाई बातें हैं। राज़ कुछ और ही होगा जो एक दिन अपने आप ही खुल जायेगा।

और गौरी की स्थिति यह थी कि वह दूसरे लोगों की बातें एक कान से सुनती, दूसरे से निकाल देती। वह अच्छी तरह जानती थी की क्या शहर और क्या देहात हमदर्दी के नाम पर हर आदमी सूना है। आजकल किसी के दिल में दया नहीं रह गई। हर कोई पहले अपना घर देखता है। किसी को इतनी फुरसत ही नहीं जो दूसरे की बात सुने, उस पर ध्यान दे। जमाना बड़ा बेरहम हो गया है।

गौरी को जो कटु अनुभव हुए थे अपनी इस ज़िन्दगी में, उन्हीं की आधार-शिला पर वह खड़ी थी और फूंक-फूंककर कदम रख रही थी कि रास्ते में पड़ा हुआ कोई काला नाग उसे डस न ले।

: २४ :

दुष्ट प्रकृति के व्यक्ति जब भी सोचेंगे, कोई अच्छी बात नहीं। वे परोपकार का नाम तो जानते ही नहीं। दूसरों के अहित में ही उन्हें सुख मिलता है। वे भगवान से तो क्या स्वयं अपने आप से भी नहीं डरते। इसी तरह अधम धूपचन्द गौरी के पीछे पड़ा था। वह उसे बदनाम करके नहीं थका, अभी किये जा रहा था। यहाँ तक कि वह एक दिन मकान मालिक के पास पहुँचा। उससे गौरी की शिकायत की कि वह आवारा औरत है। दिन भर न जाने कहाँ घूमती रहती है, रात को घर आती है; कहती है कि मैं बाहर मजदूरी करती हूँ। उसका चाल-चलन अच्छा नहीं है। दराना बाजार से इसीलिए वह भगाई गई। कोई भी उसे काम नहीं देता है।

मकान मालिक दूसरे मुहल्ले में रहता था। धूपचन्द के साथ दो-तीन किरायेदार भी गये थे। वे सब उसकी हां में हाँ मिला रहे थे। अतः मकान मालिक को गौरी के पास आना पड़ा और कहना पड़ा कि जितनी जल्दी हो सके वह मकान खाली कर दे। उसकी बड़ी शिकायत है। दूसरे

किरायेदार उससे खुश नहीं है। उनका कहना है कि गौरी बदचलन है। कभी घर में नहीं बैठती जहाँ मन होता, घूमती रहती है।

गौरी के सामने जब यह परिस्थिति आयी तो वह डरी नहीं और न तनिक भी घबड़ाई। उसने साहस बटोरकर मकान मालिक से कहा—"मैं तो पहले से ही घर छोड़ने को तैयार हूँ। बड़ी मेहरबानी होगी आपकी अगर किसी भली जगह मुझे एक कमरा दिला दें।"

"भली जगह! और यह क्या कोई बुरी जगह है। बुरी तू है। तुझको सारी दुनिया जानती है।" धूपचन्द बीच में ही बोल पड़ा और मकान मालिक से कहने लगा—"निकालिए साहब इसे बाहर। यह हम लोगों के लिए एक बहुत बड़ी बला है।"

"खबरदार जो अलिफ से बे किया तो जबान खींच लूँगी। नहीं निकलती हूँ मैं मकान से। देखूँ कौन निकालता है।" धूपचन्द की बातें सुन गौरी उबल पड़ी और क्रोधावेश में उसके मुँह से ये शब्द निकल गये।

तब मकान मालिक की भी त्यौरियाँ बदल गईं। वह था तो साठ साल का बूढ़ा। लेकिन ऐसा अकड़ा जैसे गौरी को खा जायेगा। उसने कहा—"मैं खड़े खड़े एक मिनट में तुम्हें निकाल दूँगा। तुम जैसी नापाक औरत को किराये पर कोई घर नहीं देगा। मुझसे कहती है कोई घर दिला दो। बस, कल तुम और तुम्हारा सामान, बच्चे वगैरह कोई भी न देख पड़े यहाँ, नहीं तो मुझ से बुरा कोई नहीं होगा।"

देर तक गौरी की मकान मालिक से तू-तू मैं-मैं होती रही। धूपचन्द और किरायेदारों से भी वह लड़ती रही। तंग आकर मकान मालिक चला गया और गौरी बड़बड़ाती रही। वह सब को सुना-सुनाकर कहती रही कि यह अच्छा फैसला किया गया मुझे घर से निकालने का। धर्मशाला में तो नहीं रहती किराया देती हूँ। एक कौड़ी बाकी भी नहीं रखी फिर क्यों निकलूँ। मैंने भी तय कर लिया है और मुझे इस बात की जिद है कि अब मकान नहीं बदलूँगी इसी में रहूँगी। देखूँ कौन निकालता है।

धूपचन्द का एक भी कर्म बाकी नहीं रहा। गौरी ने उससे उसे खूब

खरी-खोटी सुनाई। वह जब खिसिया गया तो वहाँ से चला गया। काफी देर बाद हाय-हाय शान्त हुई।

: ३५ :

माँ-बाप जब उद्योगी और परिश्रमी होते हैं तो संतानपर भी उसका प्रभाव पड़ता है और बचपन से ही उनमें जागृति के दर्शन होने लगते हैं। रतन देखता था कि उसकी माँ कितनी बड़ी मेहनत करती है। सड़क पर का काम छुट गया था अब वह एक मकान में मजदूरी करती थी। जहाँ ईंटें, चूना, राखी और सीमेंट आदि उसे सिर पर लादकर ढोनीं पड़ती। ऊँचे-ऊँचे जीने चढ़ने में वह थक कर रह जाती। मगर फिर भी काम करती रहती।

इसी तरह रतन अपने बाप को देखता था कि वह सवेरे लड़कियाँ काटने जाता, साँझ को उन्हें बेचकर घर लौटता। शहर में भी वह जी तोड़ मेहनत करता था। उसका इम्तहान खत्म हो गया। गर्मी की छुट्टियाँ चल रही थीं। उसने देखा कि लड़के गुब्बारे और खिलौने घूम-घूम कर बेचते हैं। मैं भी क्यों न गुब्बारे बेचूँ। कुछ थोड़े-बहुत तो पैसे मिलेंगे ही। यह सोच वह माँ से एक रुपया ले गुब्बारे लाया और घर में उनको फुला अपने मुहल्ले से दूसरे मुहल्लों तक बेचता फिरा। शाम तक सब गुब्बारे बिक गये। उसमें दस आने पैसे मुनाफे के बचे। गौरी पुत्र की इस मेहनत और कोशिश को देखकर बहुत खुश हुई। अब नियम बन गया और रतन रोज गुब्बारे बेचने जाने लगा।

धूपचन्द गौरी की तरक्की नहीं देखना पसन्द करता। रतन गुब्बारे बेचता था यह उसे अच्छा नहीं लगता। उसके भड़काने से मकान मालिक दो-एक बार और आया; लेकिन गौरी ने वही सूखा जवाब दिया कि कुछ भी हो मैं मकान खाली नहीं करूँगी।

समय बीतता गया। जेठ-आषाढ़ की कड़ी गर्मी के बाद सावन बरसा। इस साल अच्छी बरसात हो रही थी। इस मौसम में पक्के मकान अधिक

पैर पड़ गया था, तो डाँट देते; मुझसे शिकायत करते। तुम्हारी मारने की हिम्मत कैसे पड़ गई। खबरदार! अब जो उसके कभी उँगुली भी छुआई तो मैं आफत मचा दूँगी, तुम्हारे सिर हो जाऊँगी।"

धूपचन्द वहीं रुक गया और गौरी को फटकारने लगा। वह एक कहता, गौरी चार सुनाती। सब लोग तमाशा देख रहे थे। रतन खड़ा रो रहा था और झगड़ा शान्त होने नहीं आ रहा था।

: ३६ :

धूपचन्द गौरी को नीचा दिखाना चहता था और वह सिर पर चढ़ती चली आ रही थी। वह तनिक भी नहीं दबती उससे, ईंट का जवाब पत्थर से देती। इन सब बातों को लेकर धूपचन्द बहुत चिढ़ गया था। वह सोचता कि मँगरू को जेल मैंने ही भिजवाया था कि गौरी की ऐंठ खत्म हो जायेगी; लेकिन नतीजा कुछ नहीं निकला। वह पहने से भी अधिक मस्त हो गई है। अब कोई ऐसी राह निकालनी चाहिये कि वह सिर ऊपर न उठा सके। झूठी बदनामियों से वह डरती नहीं। सच्ची बदनामी किस तरह हो सकती है यह सोचना है।

एक ओर धूपचन्द के विचार ऐसे थे गौरी के प्रति और दूसरी ओर गौरी यह सोच रही थी कि एक साल की सजा पूरी होगी नौ महीने में कातिक-अगहन तक वे जेल से छुट आयेंगे। फिर मैं नहीं रहूँगी यहाँ धूपचन्द मुझे फूटी आँखों भी नहीं देखना चाहता; लेकिन वह मेरा कुछ बिगाड़ नहीं सकता। कोशिशें उसने बहुत कीं, मगर सब दे

और धूपचन्द षड़यन्त्र रच रहा था जिसका किसी को समय लग रहा था; लेकिन उसकी चाल अभी कामयाब न थी। वह अपना जाल फैलाते-फैलाते ही रह गया कि एक भी जल गई।

गौरी बहुत प्रसन्न थी; क्योंकि मँगरू ने बतलाया था दिन में वह रिहा कर दिया जायेगा। फिर इतवार च

मालूम हुआ कि इसी सप्ताह वह छोड़ दिया जायेगा।

मंगरू के छूटने की निश्चित तिथि गौरी को नहीं मालूम हो पाई थी। फिर भी वह प्रतीक्षा कर रही थी कि उसका पति आज आया, कल आया। गुलाबी जाड़े की रात शुरू होकर जवानी की ओर बढ़ रही थी। नौ बज रहे थे। बाहर मुहल्ले में कुछ-कुछ सन्नाटा-सा हो चला था। आज रूपा के लिए दूध नहीं रहा; क्योंकि बचा हुआ बिल्ली पी गई थी। गौरी घर से बाहर निकली हाथ में गिलास लेकर। तब एक काली छाया धीरे-धीरे उसके आगे बढ़ रही थी। उसने नहीं देखा, अपनी राह चलती गई। जब वह पहुँची एक तंग तथा अन्धेरी गली में तो पीछे से किसी ने आकर उसके सिर पर कपड़ा डाल दिया। एक ने उसके मुँह पर कसकर हाथ रख दिया। वे कई आदमी थे। सब के सब उसको उठाकर ले चले। वह फड़फड़ाती रही और मन ही मन अपनी विवशता पर रोती रही।

गौरी को बदमाशों ने एक सूने घर में ले जाकर छोड़ा। वहाँ एक कमरे में लालटेन जल रही थी और धूपचन्द एक तख्त पर बैठा मुस्करा रहा था। गौरी को देखते ही वह ठठाकर हँसा और इशारा किया। सब लोग इधर-उधर हो गये। तब वह उसकी ओर बढ़ा और मद्धे स्वर में बोला—"आज देखता हूँ तुम कहाँ बचकर जाओगी गौरी! मैं साँप हूँ साँप! बारह वर्ष के बाद भी बदला लेना नहीं चूक सकता। आज देखता हूँ कौन बचाता है तुमको। बुलाओ अपने [illegible] को। अब तुम मेरे चंगुल में हो।"

"नीच! पापी! चण्डाल! एक औरत को मजबूर करके उसपर जोर अजमाता है, मैं सिहनी हूँ सिहनी [illegible] न छूँगी।" यह कहकर गौरी जैसे ही झपटी धूपचन्द पर वैसे ही दो आदमी दौड़ पड़े और क्षण की बात में उसके हाथ पैर बाँध दिए [illegible] मुँह में कपड़ा भर दिया और फिर मार पड़ी बेंतों की।

अबला बिलबिला गई। [illegible] उसकी [illegible] गई। वह कहीं की न रही। थोड़ी देर बाद दो आदमी उसको [illegible]

बाहर गली में छोड़ आये ।

गौरी अधमरी-सी वहीं पर बैठ गई । वह सोचने लगी कि क्या से क्या हो गया । कामी कुत्ते धूपचन्द ने मेरा धर्म बिगाड़ दिया । अब देखो ! चुप रहता है या घर में जाकर जहर फैलाता है । मैं छोड़ूंगी नहीं उसे, अभी जाती हूँ और छाती पर सवार होती हूँ ।

तभी सहसा ध्यान आया गौरी को अपने बच्चों का कि रूपा और रतन दोनों अकेले हैं । दुष्ट धूपचन्द घर जाकर न जाने उनके साथ किस तरह पेश आये । वह बहुत बुरा आदमी है जानवरों से भी गया बीता । राक्षसी आदतें हैं उसकी । ऐसे आदमियों को भगवान मौत भी नहीं देता । वे न जाने दुनिया में क्यों पैदा होते हैं ।

यह सोच गौरी धीरे-धीरे उठी और मुर्दा-सी गति में अपने घर की ओर चल रही थी, उसके पैर कांप रहे थे । उसका हृदय तेजी के साथ धड़क रहा था, आंखों से चिनगारियाँ निकल रही थीं और दोनों नथुने सांस फेंक रहे थे जोर-जोर से । वह क्रोध से पागल हो रही थी ।

: ३७ :

शाम को मंगरू जेल से छूटा और चला घर की ओर । रास्ते में एक मोटर एक्सीडेन्ट हो गया । वह देखने लगा । एक महिला रिक्शे पर अपने दो बच्चों के साथ जा रही थी । सामने से एक मोटर ट्रक आ रही थी । दोनों की भिड़न्त हो गई । एक बच्चा ट्रक के पहियों से दब कर वहीं मर गया । दूसरे बच्चे और स्त्री को घायलावस्था में अस्पताल पहुँचाया गया । मंगरू दुःख से भर उठा । वह घर न जाकर अस्पताल गया । वहां काफी देर तक रुका । मालूम हुआ कि माँ-बेटे दोनों की मौत हो गई ।

गमगीन मंगरू धीरे-धीरे पांव रखता हुआ अपने घर को चल दिया । उसका मन कांपने लगा कि गौरी, रतन और रूपा सब मजे में तो हैं । कहीं उन पर कोई मुसीबत तो नहीं आ गई । बेचारी उस औरत और

उसके बच्चों की कितनी बेदर्द मौत हुई है। ईश्वर ऐसी मौत दुश्मन को भी न दे। सब का भला करे।

और जब मंगरू घर पहुँचा तो गौरी वहाँ नहीं थी। रतन रो रहा था, रूपा सिसक रही थी। वह बच्चों के पास पहुँचा। उसने रूपा को कंधे लगा लिया और रतन को चुप कराने लगा। रतन ने बताया कि बहुत देर हुई तब माँ रूपा के लिये दूध लेने गई थी, अभी तक नहीं लौटी। मैं बाहर जाकर भी देख आया हूँ।

यह सुन मंगरू खुद गया बाहर और इधर-उधर देखा। गौरी कहीं भी नजर नहीं आयी। तब वह लौट आया और किरायेदारों से पूछा। वे सब अपनी-अपनी कहने लगे कि मुझे नहीं मालूम कि गौरी कहाँ गई है। उसका न तो कोई आने का समय है और न जाने का। वह कभी घर में नहीं बैठती, इधर-उधर घूमा करती है। उससे हम लोग ही नहीं सारा मुहल्ला परेशान है।

मंगरू को बहुत बुरा लगा कि गौरी इतनी रात को भी घर से गायब है। मजदूरी दिन में की जाती है न कि रात में। आने दो अभी उससे पूछता हूँ कि कहाँ गई थी।

मंगरू चुपचाप कमरे में आकर बच्चों के पास बैठ गया और सोचने लगा कि आखिर गौरी कहाँ गई होगी! बच्चे रो रहे है और वह गायब है। किसी काम से गई होती तो अब तक लौट आती। जरूर कोई बात है। कुछ भी नहीं कहा जा सकता कि यह गौरी की मजबूरी है या उसकी हिम्मत। घर वाले जो पहले कहते थे, उससे भी गया-बीता अब कह रहे हैं। क्या सचमुच गौरी ने अपने माथे पर कलंक का टीका लगा लिया है। आने दो उससे पूछूँगा। अगर वह मुझे समझा न पाई तो फिर मैं उस से बोलना तो दूर रहा, उसके पास भी नहीं रहूँगा, यहाँ से चला जाऊँगा।

कमरे में मिट्टी के तेल का लैम्प जल रहा था। उसका बदबूदार धुँआ समा रहा था वातावरण में और सोचते-सोचते मंगरू लम्बी साँसें ले रहा था। उसकी निगाह अटक रही थी बाहर के दरवाजे की ओर। और

लग रहा था कि शायद गौरी आ रही है।

: ३८ :

मंगरू गौरी की राह देख रहा था कि इतने में धूपचन्द आया और आँगन में खड़ा हो नीचे के किरायेदारों से कहने लगा—"यह गौरी बड़ी बेहया औरत है। गली के नुक्कड़वाली पान की दुकान पर गई और पान वाले के लड़के को छेड़ा। उसके साथ उसका पहले से कुछ सम्बन्ध रहा होगा। आज वह पकड़ी गई। लोग उसे पीट रहे थे, मैंने बचा लिया। मैं चला आया। वह पीछे-पीछे आ रही है। अब कान खोलकर सुन लो सब लोग। गौरी इस घर में नहीं रहेगी। उसका चाल-चलन बहुत ही खराब है।"

सब लोग अपनी-अपनी खिचड़ी पकाने लगे। अच्छी खासी चर्चा चल पड़ी। मंगरू यह सब सुनकर दंग रह गया। उसके रोयें खड़े हो गये। वह कमरे से बाहर नहीं निकला। जहाँ का तहाँ ही बैठा रहा और सोचता रहा कि कैसे यकीन कर लूँ कि धूपचन्द सही कह रहा है। गौरी इतना नहीं गिर सकती जैसा वह बता रहा है। कहीं कुछ इसी की चाल तो नहीं है।

मंगरू विचारों में उलझ रहा था और आँगन में खड़ा धूपचन्द सब से बढ़-चढ़ कर बातें कर रहा था। इतने में पैर पटकती हुई गौरी वहाँ आ गई। आते ही वह टूट पड़ी धूपचन्द पर। दोनों हाथों से उसका गला दबाने लगी और कहने लगी दाँत पीस-पीसकर—"दुश्मन! नीच! पापी! जल्लाद! तूने मेरी लाज लूट ली, मुझे मजबूर करके। मैं तुझे जिन्दा नहीं छोड़ूंगी, कच्चा ही चबा जाऊँगी।

धूपचन्द को जान छुड़ाना मुश्किल हो गया। उसकी खीसें निकल आयीं और वह घिघियाने लगा। लोगों ने गौरी को छुड़ाया। फिर भी वह मौका पाकर उसे नाखूनों से बकोट लेती, दाँतों से काट लेती। लोग अरे-अरे करते ही रह जाते।

मँगरू गौरी की बातें सुनकर सन्न रह गया। वह आँगन में निकल आया और देखने लगा गौरी के चण्डी रूप को। उसके बाल बिखर रहे थे, सिर की धोती जमीन पर पड़ी थी और वह लोगों से अपने को छुड़ाने की भरपूर कोशिश कर रही थी कि किसी तरह छूट जाये और धूपचन्द को अधमरा कर डाले। वह कह रही थी, उसके हाथ तलवार की तरह धूपचन्द के सामने नाच रहे थे। सब सुन रहे थे। और उसकी जबान चल रही थी—"तू जानता होगा कि मैं औरत हूँ, तेरा कुछ बिगाड़ नहीं सकती; लेकिन इस समय मेरी आँखों में खून उतर आया है। मेरे हाथों में तेरी मौत बदी है। मैं तेरा गला घोट कर ही रहूँगी चाहे मुझे फाँसी हो जाये। तूने वह काम किया है जो चोर और उच्चके करते हैं।"

इसी तरह बड़बड़ाती हुई गौरी न जाने कैसे छूट गई। वह जा झपटी धूपचन्द पर और फिर दोनों हाथों से उसकी गर्दन दबोच ली। अब औरतें गौरी की पीठ पर हाथ पटकने लगीं। लोग उसे बुरा-भला कहने लगे। मँगरू को क्रोध आ गया सब पर। वह बीच में कूदना चाहता था, लेकिन सोच रहा था कि कहीं मेरा बोलना बुराई तो नहीं पैदा कर देगा। कोई रास्ता सामने न देख वह जोर-जोर से पुकारने लगा—"गौरी ओ गौरी। पागल तो नहीं हो गयी हो। तुम्हें क्या हो गया है। यहाँ आओ मेरी बात तो सुनो। मुझे भी तो बताओ कि आखिर बात क्या है।

किन्तु गौरी पागल नहीं क्रोध से अंधी हो रही थी। वह सुन ही नहीं रही थी कि उसका जीवन देवता बोल रहा है। वह दोनों हाथों से गला दबा रही थी धूपचन्द का और उस भीड़ में दइया-तोबा मच रहा था।

: ३६ :

लोगों ने सोचा। गौरी के हाथ तनिक ढीले पड़े। धूपचन्द ने साँस ली और फिर उसने हाथ छोड़ दिया गौरी पर। सब लोग हट गये। वह गौरी को पीटने लगा। तब मँगरू बर्दाश्त नहीं कर सका। वह छिटककर ऊपर गिरा धूपचन्द के। उसके कई मुक्के मारे और फिर उठाकर दे मारा—

अब धूपचन्द बुरा फँस गया था। मँगरू उसकी छाती पर बैठा तड़ातड़ उसकी कनपटियों पर हाथ जमा रहा था और गौरी भी जुटी थी दोनों हाथों। धूपचन्द रो रहा था, चिल्ला रहा था। लोग चिल्लाये। वे मँगरू से बोले—"क्या करते हो मँगरू ? क्या धूपचन्द को मार ही डालोगे ? बस अब बहुत हो गया, अलग हट जाओ। वरना हम लोगों को दखल देने के लिए मजबूर होना पड़ेगा।"

लेकिन मँगरू किसी की बात नहीं सुनता। वह अपनी धुन में था। आखिर कई लोग उसके खिलाफ हो गये। वे मना करते रहे और वह नहीं माना। तब सब के सब उसके एक साथ ही उस पर पिल पड़े। वे मँगरू को अलग खींच ले गये और लात घूंसों से उसकी मरम्मत करने लगे। गौरी चिल्लाने लगी वह छाती पर हाथ पीट-पीट कर कह रही थी—"तुम्हारा सत्यानाश हो हरामजादो। तुम सब कुत्तों की मौत मरोगे। बेईमान आदमी का साथ देते हो। तुम्हें शरम नहीं आती। छोड़ो ! मैं कहती हूँ छोड़ो मेरे आदमी को, नहीं तो मैं अभी थाने जाती हूँ और पुलिस लेकर लाती हूँ। वाह ! अच्छा तमाशा है उल्टा चोर कोतवाल को डांट रहा है। मारो इस धूपचन्द को, जान ले लो इसकी। यह बड़ा कमीना है। छोड़ो नाशकाटो, हत्यारो।"

नगाड़खाने में तूती की आवाज नहीं पहुँच रही थी। गौरी चिल्ला रही थी, रो रही थी और मँगरू पर मार पड़ रही था बेभाव की। धूपचन्द अब उठकर बैठ गया था। वह दूर से तमाशा देख रहा था।

जब तक मँगरू चिल्लाता रहा, बोलता रहा लोग उसे पीटते रहे और जब वह बेदम हो गया तो सबने उसे छोड़ दिया। अब स्थिति यह थी कि धूपचन्द ऊपर चला गया था अपने कमरे में। भीड़ तितर-बितर हो गई थी। थकी हारी परेशान गौरी अपने अधमरे पति को धीरे-धीरे उठा सहारा देकर कमरे में लिये जा रही थी। इस समय रात आधी से अधिक हो गई थी।

नहीं रही। मैं अब तुम्हारी जोरू कहलाने का हक खो चुकी हूँ, तुम्हारे काबिल नहीं रही।" यह कहने के साथ गौरी फफक कर रो पड़ी और फिर रोते-रोते सब हाल धीरे-धीरे बतलाने लगी।

दोनों बच्चे नींद में बेखबर सो रहे थे। गरम दूध ठंडा हो रहा था और मंगरू में जोश उमड़ रहा था, उसका खून खौल रहा था। गौरी उसके सामने आग में तपाये हुए सोने की तरह खरी, निर्दोष और पवित्र बैठी थी! उसका विश्वास उसे प्रोत्साहन दे रहा था कि गौरी अपनी जगह बिल्कुल दुरुस्त है। सारे झगड़ों की जड़ है यह धूपचन्द। उस पापी की यह हिम्मत कि मेरी औरत की आबरू बिगाड़े। यह मैं कभी नहीं सह सकता। मैं उसे जिन्दा नहीं रखूँगा। उसकी मौत मेरे हाथों बदी है। जर, जमीन और जोरू को लेकर ही दुनिया में खून खराबियाँ होती हैं। वाकई जिसे इज्जत प्यारी है वह जान पर खेल जाता है।

गौरी ने आँसू पोंछे और दूध में उँगली डाल पति की ओर देखती हुई बोली—"अरे! दूध तो ठंडा हो गया। अच्छा! अभी अँगीठी जलाकर गरम करती हूँ। तुम क्या सोच रहे हो। बस! अब भलाई इसी में है कि हम लोग इस मकान में नहीं रहेंगे। कल ही खाली कर देंगे। चाहे सड़क पर ही डेरा डालना पड़े।"

गौरी कटोरा उठाकर चली तो मंगरू ने उसका हाथ पकड़ लिया और बोला—"ठहरो गौरी। दूध रख दो, वह बाद में देखा जायेगा। मैं पहले इस धूपचन्द से निपट लूं, जिसने तुम्हारी इज्जत पर डाका डाला है।"

और यह कहने के साथ ही मंगरू एक झटके के साथ उठकर खड़ा हो गया। उसने कोने में रखी अपनी लाठी उठाई और आगे बढ़ा। घबड़ाहट में गौरी के हाथ से कटोरा छूट गया। दूध फर्श पर फैल गया। मंगरू चौखट से बाहर निकल गया था। वह पीछे दौड़ी और बोली जोर देकर—"लौट आओ, कहाँ जाते हो? क्या भूल गये कि घर वालों ने कसाई की तरह अभी-अभी तुम्हें पीटा था। ये लोग बड़े जालिम हैं।

इधर धूपचन्द अपनी उलझन में था। उधर मँगरू हुमक-हुमक लाठियाँ मार रहा था किवाड़ों पर। गौरी रो रही थी। वह हार गई। तब आगे आ उसने लाठी पकड़ ली। लेकिन जोश अंधा होता है वह न आगे देखता है और न पूछे। मँगरू ने लाठी छुड़ा ली, गौरी के हाथ मरोड़ दिये। उसकी नरम कलाइयाँ चरमराकर रह गईं और टूट गईं सब चूड़ियाँ जो बची थीं धूपचन्द से संघर्ष के बाद।

जाड़े के मौसम में भी धूपचन्द की बनियाइन पसीने से तर हो गई। उसका कलेजा मुँह को आने लगा, दिल धड़कने लगा, पैर काँपने लगे थर-थर और घिग्घी बँध गई। जिससे वह मजबूर हो गया, किसी को बुला नहीं सका, पुकार नहीं सका।

मरियल कुत्ते की भाँति दुम दबाये धूपचन्द यह सोच रहा था कि न जाने सब लोगों को क्या हो गया है, कोई बोलता ही नहीं। अगर किवाड़ टूट गये तो मैं क्या करूँगा? अपनी जान कैसे बचाऊँगा? वाकई जब आदमी गुस्से से बेकाबू हो जाता है तो वह सिर पर कफन बाँधकर चल देता है बदला लेने। मँगरू को कैसे रोका जाये। मालूम होता है कि अनर्थ होकर ही रहेगा उसे कोई नहीं बचा सकता।

धूपचन्द का बुरा हाल था। उसका सारा खून पानी हो रहा था। उसकी बुद्धि पथरा गई थी और हिम्मत कच्ची पड़ गई थी उस बुजदिल की तरह जो लड़ाई के मैदान में पीठ पर तीर खाकर भागता है। वह डर रहा था और मँगरू तड़प रहा था सिंह की तरह—"अरे धूपचन्द के बच्चे तू नहीं निकलेगा। न निकल। बस ! किवाड़ टूटने ही वाले हैं। तूने ही लाज लूटी थी मेरी गौरी की। तू नहीं जानता था कि तेरा काल मैं जेल से छूटकर आ रहा हूँ। तू घटिहा है, दगाबाज है। अब मुझे मालूम होता है कि शायद तूने ही मेरे कमरे में करौली रखी थी और मुझे जेल भिजवाया था। मैं फाँसी के तख्ते पर झूल जाऊँगा; लेकिन पहले तेरी खोपड़ी के दो टुकड़े जरूर करूँगा। धिक्कार है, लानत है तेरी मरदूमी पर। जवाब तक नहीं देता। तेरे पास पैसे की ताकत है और मेरी बाँहों की।

चलो थाने। बदमाश ने गदर मचा रखा है।"

मंगरू समझ गया कि पुलिस को घर वाले ही लाये हैं। वे लोग खामोश थे, यह उनकी चाल थी। वह चिटका, अलग जाकर खड़ा हुआ और तनिक तेजी दिखलाई। तभी डंडा बरसने लगा दरोगा का उस पर। उसके होश-हवास गुम हो गये।

कायर धूपचन्द अब कुंडी खोलकर बाहर आ गया था। किरायेदार मन ही मन मुस्करा रहे थे। उन में काना-फूसी चल रही थी और पुलिस लिये जा रही थी मुलजिम मंगरू को। रतन बाप के पीछे दौड़ रहा था। वह बिलख रहा था, सिपाही उसे डांट रहे थे। गौरी उसकी संज्ञा शून्य-सी हो गई थी। वह निश्चेष्ट-सी होकर गिर पड़ी। तब उसके पास न तो कोई सरपरस्त था और न कोई दुनियादार ही। दिल जाग रहा था और वह सो रही थी।

: ४३ :

जब शिशु जन्म लेता है और केहाँव-केहाँव करके रोता है तो जननी भूल जाती है अपनी प्रसव पीड़ा। वह उस नवजात चेहरे को भर आँख देखती, उसका अन्तर खिल उठता है। लेकिन दैव-दुर्विपाक से जब वा बच्चा थोड़ी देर बाद ही मौत के मुँह में चला जाता है तो माँ उस दुःख को जीवन भर नहीं भूल पाती। ऐसी ही स्थिति थी गौरी की। नौ महीने के बाद उसका पति जेल से रिहा हुआ। रात को आया और फिर उसे दूसरी रात न मिल पाई कि जेल चला गया। दुःख पर दुःख झेलते झेलते आदमी पत्थर बन जाता है। वह बैठ जाता है हाथ पाँव फुलाकर। उसकी मति भ्रष्ट हो जाती है। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में सोचने विचारने, समझने और सहने की क्षमता बहुत कम होती है। तभी परम्परागत भीरु का विशेषण मिला है उन्हें।

गौरी बड़े असमंजस में थी। वह कुछ भी नहीं कर पाती, सोचती बहुत कुछ। सारा खेल पैसे का था और उससे उसका हाथ खाली था।

जमानत के लिए वह जानती थी कि यह मुकदमे-मामले की बात है, मुझ से किसी तरह भी नहीं हो सकेगी। मैं देख चुकी हूँ पिछले दो मुकदमों में कि पुलिस अगर उँगली पकड़ पाती है तो बड़ी मुश्किल से छोड़ती है। अब उसके सामने दो मुख्य समस्यायें थीं रोटी और रोजी की। सारा घर उसका दुश्मन था। वह डरती थी कि बच्चों को घर में अकेला छोड़कर वह बाहर कैसे जाये क्योंकि आज की दुनिया ऐसी है कि नेकी विरले ही करते हैं और बदी के लिये सबके हाथ आगे बढ़ जाते हैं। इसके अलावा धूपचन्द मेरा सबसे बड़ा शत्रु है। वह जान भी ले सकता है, माल भी हड़प सकता है और लाज तो लूट ही चुका है।

जब खूँख्वार की जबान में खून का स्वाद लग जाता है तो उसकी लिप्सा और बढ़ जाती है और वह व्याकुल हो जाता है क्रूर कर्म करने के लिये। धूपचन्द को अभी शान्ति नहीं मिली थी। वह चाहता था कि गौरी नेस्तनाबूद हो जाये। वह इतनी पतित और परेशान हो जाये कि उससे फिर शहर छोड़कर भागते ही बने। इसलिये जब मुकदमा शुरू हुआ गैंगरू का तो वह उसके खिलाफ पैरवी करने के लिए जमीन-आसमान एक करने लगा।

गौरी सवेरे काम पर जाती। रूपा उसके साथ रहती और रतन स्कूल से लौटने के बाद गुब्बारे बेचने चला जाता। जिस दिन छुट्टी होती उस दिन वह माँ के साथ जाता। गौरी उसे अकेला कभी नहीं छोड़ती। जब उसने सुना कि मुकदमा चालू हो गया है तो जैसे-तैसे करके बरतन बेचे। इसके अलावा कुछ गृहस्थी का जरूरी सामान भी। इस तरह उसने वकील किया और मुकदमे की कार्यवाही चलने लगी।

गाँव की अपेक्षा शहर में आने पर गौरी में बहुत कुछ परिवर्तन हो गया था। वह अब इतनी बुद्धू नहीं थी कि शहर वाले उसे गँवार कहते और बुद्धिहीन समझते। ठोकरें खाते-खाते उसे तजुर्बा हो गया था कि जिन्दा रहने के लिए हिम्मत जरूरी है और दुनिया का कोई भी काम अगर मेहनत और लगन से किया जाये तो मुश्किल नहीं है। वह वेध

अदालत में जाती, मुकदमा सुनती खूब कान देकर। उसने सुने धूपचन्द के बयान जो सोलहों आने उसके पति के खिलाफ थे और फिर उसने सुना जो कुछ मँगरू ने कहा था। वह सच्ची तस्वीर थी जो उसके पति ने खींची थी। वह अपनी जबान से एक अक्षर भी झूठ नहीं बोला।

गौरी के मन में दिन-रात मुकदमे की बातें घूमती रहतीं। कभी उसे पक्का विश्वास हो जाता कि उसका पति छूट जायेगा और कभी वही दुर्बल मन आशंका से भर जाता कि नहीं कौन जानता है कि कल क्या होगा।

दो धारायें बह रही थीं। एक में विश्वास और दूसरी में अन्देशा तैर रहा था। गौरी की समझ में नहीं आ रहा था कि वह किस किश्ती पर पैर रखे, कौन-सी नाव पार लगेगी ?

: ४४ :

एक दिन वह आया जब गौरी को इजलास में बोलने का मौका मिला। उसने हाकिम के सामने ही सबसे पहले खूब फटकारा धूपचन्द को, फिर रो-रोकर सुनाई अपनी सब कहानी। मजिस्ट्रेट के भी आँसू आ गए। उस समय धूपचन्द के अन्दर का दानव कांप गया। वह चाहने लगा कि तनिक भी मौका मिले और मैं यहाँ से भाग जाऊँ; लेकिन भागने वाले के पैर पहले ही फूल जाते हैं। कहावत है कि चोर में हिम्मत कितनी होती है 'पत्ता खड़का और बन्दा सरका'। दिन बीते और वह मौका आ लगा जिस दिन मँगरू के मुकदमें का फैसला था। दस बजे से ही वादी-प्रतिवादी कचहरी पहुँच गये थे। सभी घबड़ा रहे थे कि देखो हुकुम क्या सुनाया जाता है। चार बजे मजिस्ट्रेट ने फैसले में यह सुनाया कि धूपचन्द खुद ही गुनाहगार है। वह अपने पक्ष की सफाई नहीं दे सका। इसलिए उस पर पांच-सौ रुपये जुरमाना किया जाता है और वह जमा न करने पर छः महीने की सख्त कैद। मंगरू को बरी (छोड़ना) किया जाता है उसका कुसूर साबित नहीं हो सका।

बड़ी मछली ही नहीं, मगर है मगर। जिसके एक बार मुँह खोलने पर न जाने कितनी मछलियाँ पेट में पहुँच जायेंगी और फिर भी वह भूखा रहेगा।

एक दिन मंगरू ने गौरी से कहा—"गौरी शहर सीधे-सादे आदमियों के रहने की जगह नहीं है यहाँ तो तिकड़मी आदमी ही पार पा सकता है। क्यों न हम लोग गाँव चलें। बहुत दिन हो गये। शहर की रंगत देख ली। यह किसी का नहीं सबके लिये पराया ही रहता है और धूहचन्द बहुत जहरीला आदमी है। उसके रोयें-रोयें में शरारत भरी है उससे अपने लोगों को हर समय खतरा है।"

कहते तो ठीक हो; लेकिन यह समझ में नहीं आता कि हम लोग आखिर किस गाँव चलेंगे अपने या गंगादेई के। मेरी समझ से पार्वतीपुर जाना गड़े मुर्दे उखाड़ना है। दुनिया बदल जाये; मगर वहाँ के लोग नहीं बदल सकते।"

पत्नी की यह बात सुनकर मंगरू तनिक सोच में पड़ गया और फिर धीरे-धीरे कहने लगा—"गौरी! अपना देश अपना ही होता है, पराया कभी काम नहीं होता। पार्वतीपुर में हम रहना चाहेंगे तो कोई हमें भगा नहीं पायेगा। पहले वाली बातें जाने दो। हम लोग शहर में आकर बहुत कुछ सीख गये हैं।"

गौरी पति के विचारों से तो सहमत थी, लेकिन वह पार्वतीपुर जाने के पक्ष में बिल्कुल नहीं थी। वह बोली—"अगर गाँव न चलो और यहीं रहो तो क्या हर्ज है? इस घर को नहीं इस मुहल्ले को भी छोड़ दो। वहाँ धूपचन्द अपना कुछ भी नहीं बिगाड़ पायेगा।"

गौरी की इस बात पर मंगरू हँस पड़ा। उसने उसको समझाया और कहा—" नहीं गौरी नहीं। तुम भूल रही हो। शहर में आकर हमने वे दिन देखे, वे मुसीबतें उठाई जिनके लिए कभी सपने में भी नहीं सोचा था। मेरा जी उचट गया है, पैर उखड़ रहे हैं। मैं यहाँ नहीं रहूँगा किसी भी शर्त पर। बस! तुम यही सोचती होगी कि पार्वतीपुर में लोग पुरानी बातों

को लेकर रोज बखेड़े खड़े करेंगे तो यहाँ क्या कोई झंझट कम हैं। ज्यादा से ज्यादा यह होगा कि वह गाँव छोड़ देंगे, किसी दूसरे में रहेंगे। जब मैं शहर आया था तो सोचता था कि गाँव की जिन्दगी बुरी है। और अब यही लग रहा है कि गाँव मे शान्ति है, शहर मे किसी तरह का भी सुख नहीं। दो-तीन दिन के अन्दर ही हम लोग यहाँ से चले जायेंगे। तुम भी सोच लो जल्दी की कोई जरूरत नही। काम कोई भी हो एक राय से होना चाहिये। वही अच्छा रहता है। उसमें किसी को शिकायत का मौका नहीं मिलता।''

पति की यह लम्बी वार्ता सुनकर गौरी चुप हो रही। मँगरू उसे देर तक समझाता रहा और इस तरह दोनो की बातचीत का क्रम दो-तीन दिन तक यों ही चलता रहा। गौरी ने भी खूब सोच विचार कर देख लिया कि गाँव जाने में ही गति है। पार्वतीपुर न सही तो कही और ही।

इस प्रकार योजना बन गई। रतन भी बहुत खुश हुआ कि अब वह गाँव जायेगा, वहीं रहेगा। धूपचन्द को कुछ भी पता नही था कि गौरी और मँगरू गाँव जाने की तैयारी कर रहे हैं। वह उनसे बदला लेने की युक्ति सोच रहा था; लेकिन तब तक एक दिन मँगरू ने सवेरे कमरा खाली कर दिया। उसने जरूरी सामान साथ ले बाकी सब बेच दिया और चल दिया अपने परिवार के साथ गाँव की ओर। धूपचन्द ने जब यह सुना तो वह दंग रह गया और जाते हुए मँगरू तथा गौरी की ओर देखने लगा।

: ४६ :

पार्वतीपुर की स्थिति दिन पर दिन बिगड़ती जा रही थी। श्रमिक वर्ग हैरान था। कुछ परेशान होकर इधर-उधर भटक गये थे जैसे मँगरू। वे ही लोग खुशहाल थे जिनके पास पूँजी थी। उसी के माध्यम से वे गरीबों का शोषण कर रहे थे। गाँव दिन पर दिन तबाह होता चला जा रहा था।

बड़ी मछली ही नहीं, मगर है मगर। जिसके एक बार मुँह खोलने पर न जाने कितनी मछलियाँ पेट में पहुँच जायेंगी और फिर भी वह भूखा रहेगा।

एक दिन मंगरू ने गौरी से कहा—"गौरी शहर सीधे-सादे आदमियों के रहने की जगह नहीं है यहाँ तो तिकड़मी आदमी ही पार पा सकता है। क्यों न हम लोग गांव चलें। बहुत दिन हो गये। शहर की रंगत देख ली। यह किसी का नहीं सबके लिये पराया ही रहता है और धूहचन्द बहुत जहरीला आदमी है। उसके रोयें-रोयें में शरारत भरी है उससे अपने लोगों को हर समय खतरा है।"

कहते तो ठीक हो; लेकिन यह समझ में नहीं आता कि हम लोग आखिर किस गाँव चलेंगे अपने या गंगादेई के। मेरी समझ से पार्वतीपुर जाना गड़े मुर्दे उखाड़ना है। दुनिया बदल जाये; मगर वहाँ के लोग नहीं बदल सकते।"

पत्नी की यह बात सुनकर मंगरू तनिक सोच में पड़ गया और फिर धीरे-धीरे कहने लगा—"गौरी ! अपना देश अपना ही होता है, पराया कभी काम नहीं होता। पार्वतीपुर में हम रहना चाहेंगे तो कोई हमें भगा नहीं पायेगा। पहले वाली बातें जाने दो। हम लोग शहर में आकर बहुत कुछ सीख गये हैं।"

गौरी पति के विचारों से तो सहमत थी, लेकिन वह पार्वतीपुर जाने के पक्ष में बिल्कुल नहीं थी। वह बोली—"अगर गाँव न चलो और यहीं रहो तो क्या हर्ज है? इस घर को नहीं इस मुहल्ले को भी छोड़ दो। वहाँ धूपचन्द अपना कुछ भी नहीं बिगाड़ पायेगा।"

गौरी की इस बात पर मंगरू हँस पड़ा। उसने उसको समझाया और कहा—"नहीं गौरी नहीं। तुम भूल रही हो। शहर में आकर हमने वे दिन देखे, वे मुसीबतें उठाई जिनके लिए कभी सपने में भी नहीं सोचा था। मेरा जी उचट गया है, पैर उखड़ रहे हैं। मैं यहाँ नहीं रहूँगा किसी भी शर्त पर। बस ! तुम यही सोचती होगी कि पार्वतीपुर में लोग पुरानी बातों

को लेकर रोज झमेले खड़े करेंगे तो यहाँ क्या कोई झंझट कम हैं। ज्यादा से ज्यादा यह होगा कि वह गाँव छोड़ देंगे, किसी दूसरे में रहेंगे। जब मैं शहर आया था तो सोचता था कि गाँव की जिन्दगी बुरी है। और अब यही लग रहा है कि गाँव में शान्ति है, शहर में किसी तरह का भी सुख नहीं। दो-तीन दिन के अन्दर ही हम लोग यहाँ से चले जायेंगे। तुम भी सोच लो जल्दी की कोई जरूरत नहीं। काम कोई भी हो एक राय से होना चाहिये। वही अच्छा रहता है। उसमें किसी को शिकायत का मौका नहीं मिलता।"

पति की यह लम्बी वार्ता सुनकर गौरी चुप हो रही। मँगरू उसे देर तक समझाता रहा और इस तरह दोनों की बातचीत का क्रम दो-तीन दिन तक यों ही चलता रहा। गौरी ने भी खूब सोच विचार कर देख लिया कि गाँव जाने में ही गति है। पार्वतीपुर न सही तो कहीं और ही।

इस प्रकार योजना बन गई। रतन भी बहुत खुश हुआ कि अब वह गाँव जायेगा, वहीं रहेगा। धूपचन्द को कुछ भी पता नहीं था कि गौरी और मँगरू गाँव जाने की तैयारी कर रहे हैं। वह उनसे बदला लेने की युक्ति सोच रहा था, लेकिन तब तक एक दिन मँगरू ने सवेरे कमरा खाली कर दिया। उसने जरूरी सामान साथ ले बाकी सब बेच दिया और चल दिया अपने परिवार के साथ गाँव की ओर। धूपचन्द ने जब यह सुना तो वह दंग रह गया और जाते हुए मँगरू तथा गौरी की ओर देखने लगा।

: ४६

पार्वतीपुर की स्थिति दिन पर दिन बिगड़ती जा रही थी। श्रमिक वर्ग हैरान था। कुछ परेशान होकर इधर-उधर भटक गये थे जैसे मँगरू। वे ही लोग खुशहाल थे जिनके पास पूँजी थी। उसी के माध्यम से वे गरीबों का शोषण कर रहे थे। गाँव दिन पर दिन तबाह होता चला जा रहा था।

बड़ी मछली ही नहीं, मगर है मगर। जिसके एक वार मुँह खोलने पर न जाने कितनी मछलियाँ पेट में पहुँच जायेंगी और फिर भी वह भूखा रहेगा।

एक दिन मंगरू ने गौरी से कहा—"गौरी शहर सीधे-सादे आदमियों के रहने की जगह नहीं है यहाँ तो तिकड़मी आदमी ही पार पा सकता है। क्यों न हम लोग गाँव चलें। बहुत दिन हो गये। शहर की रंगत देख ली। यह किसी का नहीं सबके लिये पराया ही रहता है और धूहचन्द बहुत जहरीला आदमी है। उसके रोयें-रोयें में शरारत भरी है उससे अपने लोगों को हर समय खतरा है।"

कहते तो ठीक हो; लेकिन यह समझ में नहीं आता कि हम लोग आखिर किस गाँव चलेंगे अपने या गंगादेई के। मेरी समझ से पार्वतीपुर जाना गड़े मुर्दे उखाड़ना है। दुनिया बदल जाये; मगर वहाँ के लोग नहीं बदल सकते।"

पत्नी की यह बात सुनकर मंगरू तनिक सोच में पड़ गया और फिर धीरे-धीरे कहने लगा—"गौरी ! अपना देश अपना ही होता है, पराया कभी काम नहीं होता। पार्वतीपुर में हम रहना चाहेंगे तो कोई हमें भगा नहीं पायेगा। पहले वाली बातें जाने दो। हम लोग शहर में आकर बहुत कुछ सीख गये हैं।"

गौरी पति के विचारों से तो सहमत थी, लेकिन वह पार्वतीपुर जाने के पक्ष में बिल्कुल नहीं थी। वह बोली—"अगर गाँव न चलो और यहीं रहो तो क्या हर्ज है? इस घर को नहीं इस मुहल्ले को भी छोड़ दो। वहाँ धूपचन्द अपना कुछ भी नहीं बिगाड़ पायेगा।"

गौरी की इस बात पर मंगरू हँस पड़ा। उसने उसको समझाया और कहा—" नहीं गौरी नहीं। तुम भूल रही हो। शहर में आकर हमने वे दिन देखे, वे मुसीबतें उठाईं जिनके लिए कभी सपने में भी नहीं सोचा था। मेरा जी उचट गया है, पैर उखड़ रहे हैं। मैं यहाँ नहीं रहूँगा किसी भी शर्त पर। बस ! तुम यही सोचती होगी कि पार्वतीपुर में लोग पुरानी बातों

दिन छिपते-छिपते मँगरू गांव पहुँच गया। उसने परिवार सहित अपने घर के दरवाजे के सामने डेरा डाला और फिर सबको वहीं छोड़ गया बिन्दो के पास। तब बिन्दो संध्या-पूजन से निवृत्त हो बाहर चबूतरे पर आ रही थी। वहाँ नित्य जमात जुड़ती बड़ी-बूढ़ी स्त्रियों की। उसमें राम रसरा चलता और दुनिया भर की इधर-उधर की बातें होतीं। चबूतरे पर छप्पर पड़ा था। आले में मिट्टी के तेल की कुप्पी जल रही थी। जंगी एक ओर बैठा था नुकीली मूँछें ऊपर उठाये। बिन्दो अभी आकर बैठी ही थी कि मँगरू सामने आकर खड़ा हो गया।

"मँगरू तुम ?" कहकर बिन्दो कुछ चौंकी, फिर नीचे से ऊपर तक उसको देखती हुई बोली—"कहाँ रहे इतना दिन ? कैसे आये मँगरू ? पिछली बार तो तुम बहुत अकड़कर गये थे। बोलो, मतलब बताओ क्या कहते हो ?"

"मतलब क्या बताऊँ दीदी। हम लोग शहर से अभी-अभी आ रहे हैं। रात भर ठहरने के लिए चौपार में जगह चाहते हैं और किसके यहाँ जाऊँ। अगर कोई एतराज न हो तो सामने की चौपार में रात बिता दूं। जब सवेरा होगा तो देखा जायेगा।"

यद्यपि मँगरू की वाणी दीनता भरी थी; लेकिन फिर भी बिन्दो गरम हो उठी और तेज गले से बोली—"तुमको अपनी चौपार में टिका कर मुझे पूरे गाँव भर से दुश्मनी नहीं मोल लेनी है। जाओ किसी और के घर ठहर जाओ। मेरा घर और चौपार कोई मुसाफिरखाना नहीं है। और तुम शहर से आ कैसे गये ?"

मँगरू कुछ नहीं बोला। वह चुपचाप खड़ा रहा और बिन्दो कहती रही "जाओ खड़े क्यों हो। मैं मजबूर हूँ। रात भर के लिये क्या मैं एक मिनट के लिये भी तुम्हें जगह नहीं दे सकती। जानते नहीं कि सारे गाँव ने तुम्हारा बहिष्कार कर रखा है।"

अब मँगरू खड़ा नहीं रह सका, चल दिया। रास्ते में वह सोचता रहा कि गांव वालों की यही हालत होगी जो बिन्दो की है, किसी के

यहाँ जाना ठीक नही। कोई हर्ज नही हम सब लोग बाहर खुले में ही पड़े रहेंगे। जिसका कोई नहीं होता, उसका रक्षक भगवान होता है। सवेरे देखूंगा कि हवा कैसी बह रही है और मुझे कदम किस ओर उठाने चाहियें।

रात अँधेरी थी। यद्यपि चैत का महीना था; लेकिन शहर की अपेक्षा यहाँ गाँव के खुले वातावरण में ठंड का अधिक समावेश था। मँगरू और गौरी जमीन पर बिछौना बिछाये लेटे थे। बाप के वक्ष से लगा रतन भर नींद सो रहा था और रूपा माँ के पास लेटी नींद लोक में विचर रही थी। हवा कुछ तेज हो गई थी। गौरी ने चादर से दोनों बच्चों को अच्छी तरह ढक दिया और एक लम्बी साँस ले पति से कहने लगी—"आसमान पर चढ़कर हम लोग फिर खंदक में आ गिरे। मैं पहले ही कहती थी कि पार्वतीपुर न चलो और तुम्हें बिन्दो के यहाँ तो जाना ही नहीं चाहिये था। अच्छा यही रहेगा कि कल हम लोग गंगादेई के गाँव चलें। वहाँ वही छीछालेदर होगी जो पहले हुई थी।"

मँगरू लेटा था ग़मगीन। वह सोच रहा था, आने वाले दिनों को कि वे कैसे होंगे। तब तक गौरी ने अपनी यह बात कहकर उसको और भी अधिक झकझोर दिया। वह बोला धीमी आवाज में—"गौरी दिनों का फेर कोई नया नहीं बहुत पुराना है। वह चलता आया है और चलता रहेगा। ये दिन भी नही रहेंगे जो आ गये हैं। किस्मत बदलती है तो देर नहीं लगती। सवेरे होने दो। देखूँ कहाँ क्या है। मुझे किसी से न भलाई लेनी है और न बुराई, मजदूरी करनी है। यहाँ नही तो दूसरे गाँव मे। गंगादेई के गाँव जाने वाली बात कुछ समझ मे आती नही।"

"मैं जानती हूँ कि तुम किसी का एहसान लेना पसन्द नही करते; लेकिन हमें तो मेहनत करनी है, मजदूरी से पेट भरना है। हम लोग किसी के सिर पर भार बनकर नही जा रहे हैं।"

गौरी के इस तर्क पर मँगरू हँस पडा और बोला—"गौरी अपना घर अपना ही होता है और पराया, पराया। जिस गाँव मे जनमा उसे

जन्मभूमि में जगह नहीं मिल रही है तो फिर ग़ैर से यह उम्मेद करना कि वह मुझे अपने घर में रख लेगा, अपने गांव में बसा लेगा ; सबसे बड़ी भूल है। हम यहीं रहेंगे, झोंपड़ी डालेंगे घर के सामने तब तो कोई नहीं कुछ कर पायेगा, न बोल पायेगा, न किसी को एतराज ही होगा।"

"एतराज की बात कहते हो। सवेरा होने दो अपनी आँखों देख लो, कानों सुन लो। जिस गांव से जलील करके निकाली गई, भगाई गई, वहीं फिर रह सकूंगी, मुझे यकीन नहीं होता।" यह कहकर गौरी ने एक दीर्घ उच्छ्वास ली और नीले अम्बर की ओर देखने लगी।

मँगरू देर तक गौरी को समझाता रहा। दोनों में बातें चलती रहीं। रात भींगती रही और धीरे-धीरे ढलने पर आ गई; किन्तु दोनों सोये नहीं. चिन्तन में ही खोये रहे। उनकी आंखें एक क्षण के लिये भी नहीं मुंदी, वे खुली रहीं।

: ४७ :

सवेरे जैसे ही सूरज ने आँखें खोलीं, एक छोटी-सी भीड़ ने आकर घेर लिया मँगरू और गौरी को। फिर धीरे-धीरे वह भीड़ बढ़ती गई। मुखिया, रामदयाल दादा, बिन्दो और जंगी आदि खास लोग सबसे आगे खड़े थे। मँगरू से पूछा जा रहा था कि आखिर गाँव किस लिये आया है। उसे गांव में घुसने भी नहीं दिया जायेगा। उसकी औरत बदचलन है। बस ! इसी दम ! इसी समय वह सबको लेकर यहां से चला जाये; भलाई इसी में है।

मँगरू और गौरी दोनों चित्र लिखे से खड़े थे। भीड़ में लोगों के मुँह चल रहे थे, गाल बज रहे थे और हाथ उठ रहे थे फूहड़पन से। वे जलील कर रहे थे दम्पति को। अच्छी खासी कांव-कांव मच रही थी। ऐसे में मँगरू ने कुछ बोलना और जवाब देना उचित न समझ, चुपचाप अपनी राह ली। आगे-आगे वह था उसके सिर पर गठरी थी। बीच में था रतन उसके हाथ में एक छोटा-सा झोला लटक रहा था और सबसे

पीछे चल रही थी गौरी। उसके सिर पर एक ट्रंक था, गोद में रूपा। लोग देख रहे थे। उनकी खुशी का पारावार न था और मंगरू का परिवार चला जा रहा था इस तरह जैसे कोई मुसाफिर सराय में आकर टिका और थोड़ी देर बाद चल दिया।

रास्ता चल रही गौरी पति से कह रही थी—"देखो वही हुआ जो मैंने कहा था। यहाँ के लोग आदमी नहीं, पत्थर हो गये हैं पत्थर। अब कहाँ चल रहे हो, वहीं गंगादेई के गाँव या और कहीं ?"

"जहाँ नसीब ले जाये वहीं पहुँचेंगे हम। अभी कुछ नहीं कह सकता गौरी कि हम लोग कहाँ चल रहे हैं।" मंगरू ने यह बात एक लम्बी साँस लेकर कही। ऐसा लगता था कि वह बहुत ऊब रहा है और बुरी तरह परेशान है। इस समय की परिस्थिति पर काबू पाना उसके वश की बात नहीं है।

दम्पति में इसी तरह की बातें चल रही थीं। वे चल रहे थे; लेकिन मंजिल अज्ञात थी। दोनों जब ढूहे पर पहुँचे तो पीछे घूमकर गाँव की ओर देखा। मंगरू की आँखों में आँसू आ गये और गौरी के भी नयन उमड़ आये। दोनों चल पड़े। तभी सामने आ रहे एक वृद्ध ने टोक दिया मंगरू को। वह बोला चौंकता हुआ—"अरे कहो मंगरू, कहाँ चले गये थे तुम ? मैं उन दिनों तीर्थ यात्रा पर गया था। लौटकर आया तो मालूम हुआ कि तुमको सजा हो गई है और तुम्हारी घरवाली को गाँव वालों ने गाँव से निकाल दिया है। यह भी सुना है मैंने मंगरू कि बिन्दो ने तुम्हारे घर में अपना ताला डाल दिया है। कब आये ? इधर कहाँ जा रहे हो ? गाँव चलो न।"

ये महाशय गाँव के पुराने रईस और उदार हृदय के व्यक्ति थे। इनका पूरा नाम गोपीचन्द पाठक था। इनके घर में एक ठाकुरद्वारा था, जिसमें कृष्ण की मूर्ति स्थापित थी। वे पूजा-पाठ में अधिक व्यस्त रहते। इसीलिये लोग इनको पुजारी पाठक कहते थे। उनकी सहृदयता भरी बातें सुनकर मंगरू रो दिया और वह सब बताने लगा जो उस पर अभी-

अभी बीती थी ।

सारी बातें सुनते ही पुजारी पाठक की देह में आग लग गई। वे बोले ताव में आकर—"यह हिम्मत है गाँव वालों की । ये सब लोग यहाँ तक नीचता पर आमादा हैं । तुम लोग चलो और रहो मेरे घर में। तुम्हें एक कोठरी दे दूंगा । वहीं रहो, घर में जानवरों का काम देखो। बाकी समय खेत सम्हालो । मेरे यहाँ रहो । मैं तुम दोनों को तनख्वाह दूंगा, फिर देखूं कौन भगाता है तुम्हें गाँव से ।"

गौरी और मँगरू पुजारी पाठक का मुँह देखने लगे । वे कुछ खोज नहीं पा रहे थे । तब तक पाठक फिर कहने लगे—"चलो मँगरू मैं तुम्हारे साथ हूँ । तुम्हारा कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता । आराम से मेरे घर में चलकर रहो । घर से लेकर बाहर तक का सब काम देखो । बस ! समझ लो कि तुम्हारी तरफ अब कोई आँख उठाकर भी नहीं देख सकता ।"

मँगरू ने बहुत कहा कि वह गाँव नहीं जायेगा । गाँव वाले उसे हैरान करेंगे और ऐसी ही भयपूर्ण बातें करती रही गौरी भी; लेकिन पुजारी पाठक नहीं माने । वे ले गये दम्पति को अपने साथ । उनका घर गाँव के बिल्कुल निकास पर था । लोगों को जब पता चला तो गाँव भर में चख-चख मच गई और चारों ओर चर्चा चलने लगी कि पुजारी पाठक मँगरू को अपने घर में लिवा लाये हैं । यह उन्होंने अच्छा काम नहीं किया; बल्कि सारे गांव से दुश्मनी मोल ले ली ।

इधर गांव में मँगरू और गौरी के खिलाफ़ ही नहीं पुजारी पाठक के विरुद्ध भी जहर फैलाया जा रहा था और उधर मँगरू तथा गौरी के असमंजस, भय और चिन्ता को अपनी मीठी-मीठी बातों से दूर कर रही थी चंदा । यह पुजारी पाठक की एकलौती बेटी थी, स्वभाव की बिल्कुल मोम, जैसा बाप था ।

: ४८ :

पुजारी पाठक की अवस्था लगभग पचास वर्ष की थी। परिवार में पुत्री चंदा के अतिरिक्त और कोई नही था। चार-पाँच साल पहले पत्नी का देहान्त हो गया। तब से वे कुछ विरक्त से हो गये थे। हर साल दो-तीन महीने के लिए पुत्री को साथ लेकर तीर्थाटन के लिए निकल जाते। गाँव में न तो उनका कोई दोस्त था और न कोई दुश्मन। वे सब के लिए एक जैसे थे।

पाठक के घर में खेती होती थी, एक जोड़ी बैल थे, एक गाय और एक भैंस। इसके अलावा निज की सवारी के लिए एक घोड़ी भी थी छोटी-सी। जानवरों के काम के लिए उन्होंने एक नौकर रख छोड़ा था। यह इस गाँव का रहने वाला नही, किसी तीर्थ पर से वे अपने साथ लिवा लाये थे। उसका नाम था गेंडू। वह जाति का गडरिया था। मँगरू और गौरी के पहुँच जाने से गेंडू को काफी सहारा मिल गया। वह और मँगरू दोनों मिलकर एक साथ हँसी-खुशी काम करते। गौरी चंदा को उठकर पानी भी नही पीने देती। उन दोनों की अच्छी निभती थी। पुजारी पाठक बहुत प्रसन्न थे कि एक उजड़े और तबाह परिवार को वे अपने घर में रखकर उनका कल्याण कर रहे हैं। परोपकार ही उनकी दृष्टि में सबसे बड़ा धर्म था। वे सत्य को पुण्य और पाप को मिथ्या के रूप में देखते थे। बहुत ही कुशल पारखी थे वे। एक ही दृष्टि में मनुष्य का अन्तर पढ़ लेते उसके मर्म को समझ जाते। सुना उन्होंने भी कि गाँव वाले उनकी खिलाफत कर रहे हैं जो उन्होंने मँगरू को शरण दी है। वे तनिक भी नही डरते किसी से, स्वयं अपने से डरते थे। इसीलिए उन्होंने इस बात को एक कान से सुना और दूसरे से निकाल दिया।

चंदा बढ़ रही थी उस लता की तरह जो अत्यन्त सुकुमार होती है और दिन-दूनी रात-चौगुनी अपने में निखार पाती चली जाती है। उस का रंग न गोरा था और न काला। गेहुँआ रंग में उसकी षोडशावस्था

निखरी पड़ रही थी । मध्यम कद, सुडौल देह और नखशिख देखते ही बनता था । डेल जैसी बड़ी-बड़ी आँखें उसके गोल चेहरे पर आकर्षण का केन्द्र बनकर रह जातीं । उसके पतले गुलाबी अधर इतने मासूम मालूम होते जैसे उनसे लार बह रही हो। लिबास उसका साधारण रहता । पूजन-भजन में बाप की ही तरह उसका भी मन लगता । हिन्दी और संस्कृत वह अच्छी तरह जानती थी; क्योंकि पुजारी पाठक इन दोनों भाषाओं के अच्छे-खासे विद्वान थे । वह गाँव में किसी के घर नहीं जाती और न किसी को बुलाती अपने ही यहाँ, वैसे जिससे मिलती हँस कर बोलती नमकर । कोई भी उसे बुरा कहने का साहस नहीं कर पाता । वह दूसरे में बुराइयाँ ढूंढ़ने की अपेक्षा अच्छाई ही खोजती । यह उसका जन्मजात सिद्धान्त था ।

गौरी और चंदा दोनों एक दूसरे के साथ ही साथ रहतीं । गौरी उसे चंदा रानी कहकर पुकारती और वह हँस कर कहती गौरी भाभी। मँगरू, पुजारी पाठक और गंजू ये लोग जब दोनों के सम्बोधन सुनते तो मन ही मन प्रसन्नता से भरकर रह जाते । इस तरह अब पुजारी पाठक को ही नहीं; बल्कि सब लोगों को ऐसा लग रहा था कि उनका घर स्वर्ग बन गया है । चंदा इस निष्कर्ष पर पहुँच रही थी कि सहयोग ही जीवन का सच्चा साथी है और पुजारी पाठक यह सोचकर अपने पर सन्तोष पा रहे थे कि सन्मार्ग पर चलना ही जिन्दगी की गति है । गंजू अपनी मोटी बुद्धि के अनुसार थाह लगा रहा था कि आदमी वही भला कहा जाता है जो अपने साथ दूसरों को भी लेकर चलता है ।

मँगरू की विचारधारा भी साधारण थी कि दुःख में साथ देने वाला भगवान से भी बड़ा होता है । पुजारी पाठक आदमी नहीं, देवता हैं । दुखियों के लिए उनके मन में दया है । दम्पत्ति सुख चैन की जिन्दगी बिता रहे थे । अब वे दुनिया भर के झंझटों से मुक्त थे । वे भूल गये थे कि पिछले दिनों में उन पर मुसीबतें किस तरह पहाड़ बन कर टूटीं और वे कितना हैरान हुए ।

: ४९ :

एक ओर स्वर्ग बस रहा था और दूसरी ओर नर्क की सृष्टि हो रही थी। गाँव में रोज जगह-जगह दो-चार लोग इकट्ठे होकर इसी बात पर विचार करते कि पुजारी पाठक ने अपने घर में मंगरू को बसा लिया है इसके लिये क्या होगा ? क्या किया जायेगा ? लोग सोचते लेकिन करते कुछ नहीं। किसी की हिम्मत नहीं पड़ती कि पाठक के सामने जायें। मुखिया, रामदयाल दादा और अन्य व्यक्ति सभी हैरान थे। किसी की भी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें।

एक दिन कई लोगों का जमाव जुड़ा बिन्दो के चबूतरे पर। उसमें यह तय हुआ कि सब लोग मिलकर एक साथ पुजारी पाठक के घर चलें और उनसे कहें कि आपने अपने घर में नापाक मंगरू को रखा है। आप के लोटे का कोई पानी नहीं पियेगा। दोनों को घर से निकाल दीजिये हम सब लोग आपसे यही कहने आये हैं।

दूसरे दिन उक्त प्रस्ताव पर थोड़ी-बहुत बहस हुई जिसमें मुखिया आदि ने भी भाग लिया और तीसरे दिन योजना कार्य रूप में परिणित हो गई। गाँव के दस-बारह बड़े-बूढ़े लोग पुजारी पाठक के घर पहुँचे। उनके सामने अपना प्रस्ताव रख जवाब माँगने लगे। इन सदस्यों में बिन्दो भी थी जो पीछे खड़े जंगी को आँख के इशारे से डाँट रही थी जिसका मतलब यह था कि चले जाओ यहाँ से नहीं तो पुजारी पाठक अभी बिगड़ने लगेंगे।

पुजारी पाठक सबकी बातें चुपचाप सुनते रहे। वे देर तक मौन बैठे रहे। फिर बहुत को थोड़े में कहते हुए बोले—"मैंने जो किया है अपनी मर्जी से और सोच-समझकर। मेरी आदत है कि जिसके सिर पर हाथ रख देता हूँ उसे फिर उसी हाथ से धक्का नहीं देता और न लगाता हूँ। मंगरू और गौरी कहीं नहीं जायेंगे। बेहतर यही होगा कि आप लोग इस मामले को तूल-अर्ज न दें। बस ! मैं इतना ही कहूँगा। तर्क, बहस हुज्जत करने की मेरी आदत नहीं है।"

पुजारी पाठक की बातें सुनकर एकदम सब लोग सन्नाटे में आ गये। वे एक दूसरे का मुँह देखने लगे। चोपार में इस तीसरे पहर के समय भी लग रहा था कि रात जैसा सन्नाटा है। मंगरू, गंजू दोनों पाठक के पास खड़े थे। अन्दर किवाड़ों की ओट से झांक रही थी चन्दा और गौरी। दोनों राह देख रही थी कि पाठक की बातों का लोग क्या जवाब देते हैं।

देर तक सन्नाटा रहा, कोई नहीं बोला। फिर उस सन्नाटे के आलम को तोड़ा मुखिया ने। वह साहस बटोर कर पाठक से बोला—"पुजारी जी नाराज न हों, मेरी बात सुनो और समझने की कोशिश करो। जहाँ पर बहुमत होता है वहाँ झुकना ही पड़ता है। जब पूरे गाँव भर की राय एक है तो फिर आप मान क्यों नहीं लेते बात। मंगरू और गौरी दोनों से सारा गाँव खिलाफ है। सब लोग तो यहाँ तक आगे बढ़ आये हैं कि अगर आपने इन दोनों को अपने घर से न निकाला तो फिर कोई आप का छुआ पानी तक नहीं पीयेगा। आपको जिद छोड़ देनी चाहिए। उस का नतीजा अच्छा नहीं होगा।"

"क्या अच्छा नहीं होता है मुखिया? मुझे किसी का डर नहीं है। मैंने जो सोचा है वही करूँगा।" यह कहकर पुजारी पाठक खड़े हो गये और वहाँ से जाते हुए बोले—"बस कुछ और कहना है किसी को ?"

इस पर धीरे-धीरे सबके मुँह चलने लगे। किसी ने कोई भी बात स्पष्ट नहीं कही।

पुजारी पाठक के वहाँ से हटते ही सब लोग चल दिये। रास्ते में सबकी खिचड़ी पकती रही। सब का मतलब यही था कि पाठक कभी नहीं मानेंगे। उन्हें जाती बिरादरी से अलग कर दिया जाये। सयानी लड़की घर में बैठी है जब उसका ब्याह करने किसी के दरवाजे जायेंगे तो आटा-दाल का भाव उन्हें खुद मालूम हो जायेगा। गाँव वाला कोई साथ नहीं देगा। देखना है कि पुजारी जी बारात सम्हालने के लिए जनाती कहाँ से लायेंगे।

इधर जब पुजारी पाठक घर के आंगन में आये तो घबड़ाई हुई चंदा उनके सामने आ, भयग्रस्त स्वर में कहने लगी—"बापू गाँव वाले नाराज होकर गये हैं, कहीं कोई गुल न खिला बैठें। बड़ा मुश्किल है किसी के साथ भलाई करो वह भी लोग नहीं करने देते। आखिर यह संसार चलेगा कैसे ?"

पुजारी पाठक हँस पड़े और स्नेहपूर्वक पुत्री के सिर हाथ फेरते हुए बोले—"तू चिन्ता क्यों करती है पगली। मैंने बाल धूप में सफेद नहीं किये हैं। अब तक जो कुछ ऊपर पड़ा उसे हँसकर सहा। कभी उफ् नहीं की और न कभी घबराया। आगे जो आयेगा देखा जायेगा। यूँ तो बरसात में मेढकों की टर्र-टर्र मचती ही रहती है। बारह मासी मेढक बहुत कम होते हैं।"

पुजारी पाठक चन्दा को समझा रहे थे कि गौरी उनके सामने आ आँसू भरी दृष्टि उनके मुख पर स्थापित कर धीरे-धीरे कहने लगी—"पाठक दादा ! हम लोगों को घर में रखकर आप चैन से नहीं रह पायेंगे। यह मैं अच्छी तरह जानती हूँ। अच्छा होगा हम लोग यहाँ से चले जायें, फिर न कोई झगड़ा रहेगा और न कोई झंझट। आप खुशी-खुशी इबादत कीजिए।"

"हाँ दादा ! गौरी ठीक कहती है। हम लोगों को जाने दीजिए। हमारे यहाँ रहने से आप के लिए खतरा है।" मंगरू पत्नी के समर्थन में यह कहकर पाठक का मुँह देखने लगा। उनकी मुद्रा गम्भीर थी; लेकिन फिर भी वे मुस्करा रहे थे।

पाठक ने गौरी और मंगरू दोनों को समझाया, सान्त्वना दी और ढाढस बँधाया। देर तक वे उन से बातें करते रहे। फिर वे जब रात को चारपाई पर लेटे तो नींद उनसे दूर भागने लगी। वे सोचते रहे कि भलाई का नाम जरूर शेष रह गया है इस युग में, बाकी ऐसा लगता है कि जैसे इसमें स्वार्थों का शोर हो गया है। दूसरे को सताना न जाने क्यों अच्छा लगता है लोगों को। गाँव वालों को कैसे समझाऊँ

मँगरू और गौरी दोनों को घर से हटा दूं यह मुझसे नहीं होगा। आखिर यह समस्या सुलझेगी किस तरह ?

जब तक पुजारी जी की आँखें नहीं लगीं वे उधेड़ बुन में व्यस्त रहे। स्वप्न में भी उन्हें संघर्ष के दर्शन होते रहे और सवेरे जब उठे तो उनका मन मलिन था। वे गम्भीर चिन्तन में डूबे न जाने क्या सोच रहे थे। चित्त उनका इतना खिन्न था कि पूजा में भी मन नहीं लगा। सारे दिन वे उदास ही रहे।

: ५० :

जिस दिन गांव के प्रमुख व्यक्ति पुजारी पाठक से मिलने आये। उस के दूसरे दिन तक तो केवल गाँव भर में चख-चख ही रही; लेकिन तीसरे दिन एक पंचायत बैठी मुखिया के दरवाजे पर। सरपंच की जगह एक मोढे पर बैठे थे रामदयाल दादा। उनके चारों ओर जमात जुड़ी थी। पंचों के अलावा जो लोग पंचायत सुनने आये थे उन तमाशाइयों की भीड़ बहुत बड़ी थी।

पंच लोग बैठे आपस में तर्क-वितर्क कर रहे थे। सरपंच सुन रहा था। पीछे खड़े तमाशाई सभा पर आँखें बिछाये और कान लगाये खड़े थे। बिन्दो मुखिया के निकट ही बैठी थी। वह कह रही थी—"हाँ यह सही है। गांव में अधर्म नहीं होने पायेगा। पुजारी पाठक को अपने घर से मँगरू और गौरी को निकालना ही पड़ेगा। गांव में रहकर सबसे अलग होकर चलेंगे तो उनका बहिष्कार कर दिया जायेगा। गांव और जाति दोनों से।"

इसी तरह मुखिया भी अपनी दलील पेश कर रहा था—"आदमी को पहले समझाया जाता है, उसके बाद जब वह नहीं मानता तो फिर कायदे की कार्यवाही जरूर की जाती है। पुजारी पाठक को पाप का प्रायश्चित अवश्य करना होगा।"

सब लोग अपनी-अपनी कह रहे थे। रामदयाल दादा ने कई बार

आदमी भेजा पुजारी पाठक को बुलाने के लिए कि वे भी पंचायत में आकर बैठें। मगर पुजारी जी ने इन्कार कर दिया वे नहीं आये। तब मजबूर हो सरपंच की हैसियत से खड़े होकर रामदयाल को साफ-साफ बोलना पड़ा। वे बोले—"सभी पंचों की एक राय है तो मैं भी सहमत हुए बिना कैसे रह सकता हूँ। अगर मंगरू अपनी औरत को छोड़ दे, वह गाँव से चली जाय तो वह गाँव में रह सकता है। इसके लिए उसे सारी बिरादरी को भोज देना होगा और पुजारी पाठक, उनके लिए ऐसा है जो एन उन्होंने समेटी है उसके बदले वे प्रयाग जाकर त्रिवेणी स्नान करें, फिर गाँव में आ सत्यनारायण की कथा सुनें और एक-सौ-एक ब्राह्मणों को भोजन करायें तब वे अपनी जाति में मिल सकते हैं और अगर मंगरू तथा गौरी को वे घर से नहीं निकालते हैं तो इसके लिये जबरदस्ती की जायेगी और दोनों को यहाँ से हटा दिया जायेगा।"

अभी रामदयाल दादा इतना ही कह पाये थे कि सहसा उनके सामने आकर दहाड़ने लगे पुजारी पाठक। वह बोले छाती पर दोनों हाथ पटक कर—"गाँव वालों की यह मजाल कि वे मेरे साथ जबरदस्ती करेंगे। मैं सबसे निपट लूँगा। देखूँ कौन निकालता है मेरे घर से मंगरू और गौरी को।"

पंचायत में सन्नाटा छाकर रह गया। लोग हक्का-बक्का हो पुजारी पाठक की ओर देखने लगे। सभी लोग चौंक गये कि वे तो कई बार बुलाने पर भी नहीं आये और एकाएक अचानक आकर खड़े हो गये। सब लोग इसी पसो-पेश में पड़े थे, हैरान थे और सोच रहे थे कि देखो क्या होता है ? पुजारी पाठक कह रहे थे—"किसी को भी कोई हक नहीं है मेरे मामले में बोलने और दखल देने का। मेरे घर से मंगरू और गौरी कहीं नहीं जायेंगे यह मैं पहले भी कह चुका हूँ और न छोड़ेगा ᅳ अपनी औरत को ही। क्या वह अपनी कच्ची गृहस्थी बरबाद कर अच्छा फैसला किया है आपने रामदयाल दादा कि मैं त्रिवेणी नहाने जाऊँ, एक-सौ-एक ब्राह्मणों को खिलाऊँ, सत्यनारायण की कथा

सुनूं । मैं पूछता हूं कि आखिर मैं यह सब किस लिए करूँ । मैंने कोई पाप नहीं किया, भलाई की है । आप सब लोगों को पाप नजर आता है तो आया करे इसकी मुझे चिन्ता नहीं है । आप लोग अपने गाँव की अदालत में वेसिर पैर का फैसला करने वैठे हैं । मैं हाईकोर्ट तक मुकदमेबाजी कर सकता हूँ । आप लोग मेरा कुछ नहीं विगाड़ सकते । वस ! कान खोलकर सुन लो अगर किसी ने मेरे या मँगरू और गौरी के साथ कोई हरकत की तो मैं उपद्रव मचा दूंगा । मैं किसी को छेड़ता नहीं । जो मुझे छेड़ेगा उसके हक में भलाई नहीं होगी । अब मैं जाता हूँ । आप लोग अपनी पंचायत कीजिये ।"

पुजारी पाठक जैसे आँधी की तरह आये थे वैसे ही तूफान की भाँति चले गये । पंच, सरपंच और अन्य सभी लोग खामोश थे और भीड़ के नाम पर अब इने-गिने आदमी ही रह गये थे वहाँ । उनमें से कुछ तो मुखिया की चौपार में चले गये । वहाँ जाकर गुफ्तगू करने लगे और शेष अपनी-अपनी राह लगे ।

: ५१ :

जिस दिन गाँव में पंचायत वैठी थी । उसी दिन रात को मुखिया की चौपार में गाँव के खास-खास आदमियों की एक वैठक हुई । बिन्दो उसमें सबसे आगे थी । पुजारी पाठक के विरोध में सबकी वार्ता चल रही थी । रामदयाल दादा गम्भीर वैठे थे । वे सबकी सुन रहे थे; लेकिन बोल कुछ भी नहीं रहे थे । उनकी खामोशी सबको खलने लगी । आखिर मुखिया ने टोक ही तो दिया । वह बोला—"दादा ! पंचायत वैठाने का मतलब कुछ भी नहीं निकला । आप क्या सोच रहे हैं ? क्या जो फैसला आपने किया है वह नहीं रहेगा ? आपने कुछ भी जवाब नहीं दिया पुजारी पाठक को, वे गोली-सी मारकर चले गये । आप चुप क्यों हैं, बोलते क्यों नहीं ? किस सोच-विचार में पड़े हैं ?"

इस पर कई लोगों ने समर्थन किया मुखिया का कि हाँ दादा कुछ

तो चाहिए। आप तो एक दम खामोश हैं। बिन्दो ने भी मजबूर किया दादा को बोलने के लिए। तब वे धीरे-धीरे कहने लगे—"सोच यही रहा हूँ कि पुजारी पाठक के साथ किस तरह पेश आया जाये। वे बड़े नगा आदमी हैं, तिल का ताड़ बनाते हैं। जाति-बिरादरी वाले उनका बहिष्कार करें, उनके लोटे का पानी न पियें, उनका छुआ न खायें, इस की उन्हें तनिक भी परवाह नहीं है। उन्हें समझा-बुझाकर ही रास्ते पर लाया जा सकता है। अकड़ से काम नहीं चलेगा। मैं जाऊँगा और अकेले में दो पर दो उनसे बात करूँगा। वे जरूर मान जायेंगे।"

यह सुनते ही एक साथ ही कई लोग बोल उठे—"नहीं दादा नहीं। यह नहीं होगा। यह तो एक तरह की खुशामद हुई। हम लोग आपको नहीं जाने देंगे। जब यह नहीं रहा कि पंचायत के फैसले पर अमल होता तो हम लोग दूसरी तरकीबें सोचेंगे, उन्हें काम में लायेंगे। वे मानेंगे कैसे नहीं। हम जबरदस्ती उनको मनाकर रहेंगे। उन्हें प्रायश्चित करना पड़ेगा अपने पाप का। इसके अलावा मँगरू और गोपी को खड़े-खड़े घर से निकलना होगा।"

"तरकीब का मतलब तुम लोग कहीं तिकड़म से तो नहीं लगा रहे हो? यह मैं पसन्द नहीं करूँगा। आदमी को आगाह करके ही उस पर हमला करना चाहिये, धोखे से नहीं।"

रामदयाल दादा की इस बात पर कोई नहीं बोला। सब लोग खामोश रहे और जब उन्होंने बहुत पूछा तो लोग लल्लो-चप्पो करने लगे।

थोड़ी देर बाद जब रामदयाल दादा चले गये तो [illegible] बैठे रहे। उनमें आपस में गुप-चुप बातें होती रहीं। [illegible] राह छोड़कर अँधेरे में भटक रहे थे। सुधार [illegible] नीति अपना रहे थे। वे अहिंसा को भूलकर [illegible]

× × ×

पंचायत के फैसले ने मँगरू और [illegible]
दोनों घबड़ा गये थे बुरी तरह। वे [illegible]

जाने वाली बात कहने लगे। दोनों ने बहुत कहा; मगर पाठक अपनी ही बात कहते रहे कि तुम लोग पागल तो नहीं हुए हो। तुम्हें कहीं भी जाने की जरूरत नहीं। एक नहीं दस पंचायतें बैठें मेरा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकतीं। मैं आदमी को मशीन, मजदूर और जानवर नहीं समझता। यह जानता हूँ कि मेरी ही तरह तुम लोग भी हाड़-मांस के बने हो। मैं कहता हूँ कि तुम चिन्ता करते ही क्यों हो। मैं तो मौजूद हूँ।

इस तरह पुजारी पाठक ने दम्पति को बहुत समझाया। उसी बीच वहाँ आ गई चंदा। बातचीत के सिलसिले में वह बाप की ओर उन्मुख होकर बोल उठी—"हाँ, यह तो ठीक है बापू ! और मैं भी जानती हूँ कि काले के आगे दिया नहीं जलता; लेकिन जब कपट जाल फैलाता है और कूटनीति चलती है तो धोखा खाना पड़ता है काले नाग और दिया दोनों को। गाँव वालों से रंजिश तो हो ही गई है। वे सामने न बोलें; लेकिन छिपी शरारतें जरूर करेंगे।"

पुत्री की बुजुर्गों जैसी उपदेश भरी बातें सुनकर पुजारी पाठक मन ही मन बहुत प्रसन्न हुए कि उनकी पुत्री बहुत योग्य है; लेकिन उसके तर्कों को भी काटना जरूरी था। इसीलिये वे सान्त्वना भरी गम्भीर वाणी में बोले—"जो सामने आकर लड़ता है वह वीर कहा जाता है। जो छिपकर दाँव करता है वह कायर और बुजदिल ही नहीं; बल्कि नीच और चोर समझा जाता है। चोर की हिम्मत कितनी होती है। मैं किसी भी अनिष्ट से नहीं डरता; क्योंकि आदमी, आदमी का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता। भाग्य और भगवान ये ही दोनों प्रमुख हैं और सबसे पहले हैं। व्यर्थ की बातों की चिन्ता तुम न करो चन्दा ! यह लोक रीति है और दुनिया के दस्तूर को कभी बदला नहीं जा सकता। उतार-चढ़ाव, दाँव पेंच ये चलते ही रहते हैं, मनुष्य जीता रहता है। तुम इत्मीनान रखो कि जब तक मैं जिन्दा हूँ मँगरू और गौरी को कोई उँगली से छू तक नहीं सकता। मैंने दुनिया देखी है जिसमें चोरी का बाजार लगता है और शाह खरीदते हैं। जो दूसरे का भला नहीं चाहते उन्हें इन्सान कहलाने

का कोई हक नहीं है।"

इसी तरह पुजारी पाठक देर तक सबको समझाते रहे और अकेले में वे स्वयं उलझकर रह गये कि गाँव वाले देखना है कि मेरे खिलाफ कोई कदम उठाते हैं या नहीं। अगर खिलाफत करनी होती तो उसी समय कोई न कोई जरूर बोलता जब मैं पंचायत में गया था। भविष्य को कोई नहीं जानता। जो आयेगा देखा जायेगा। पहले से ही उसकी चिन्ता क्यों करूँ।

: ५२ :

पंचायत बैठने के कई दिन बाद सवेरे पुजारी पाठक को उनका एक बैल मरा मिला। उसकी जबान बाहर निकलकर रह गई थी और ऐंठ गई थी लकड़ी की तरह। मुँह से तमाम झाग गिरा था जो अब तक पड़ा था। वे उस मृतक बैल की ओर देखकर रह गये और सोचने लगे कि रात को जब दोनों बैल खलिहान से वापस आये तो अच्छे भले थे। दोनों ने भर पेट चारा खाया और जुगाली करते रहे। आखिर यह मर कैसे गया। कुछ बीमार भी तो नहीं था। कहीं किसी साँप ने तो नहीं काट लिया और आखिर कारण क्या हो सकता है इसकी मौत का।

थोड़ी देर बाद घर में खल-बल मच गई। गेंदू और मँगरू दोनों दुखी हो अफसोस जाहिर करने लगे। वे देखने लगे बैल की देह छू-छू कर कि आखिर यह किस तरह मरा। गौरी चन्दा से कहने लगी कि हो न हो यह गाँव वालों की ही शरारत है। बैल को किसी ने कुछ [illegible] दिया। चन्दा चुप बनी रही थी उसकी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था।

थोड़ी देर बाद वहाँ और भी कई आदमी इकट्ठे [illegible] एक बूढ़े बुजुर्ग भी थे। वे बैल के शव का निरीक्षण [illegible] ज़हर दिया गया है। संखिया, धतूरा और कुचिला [illegible] में से कोई चीज दी गई है।

पुजारी पाठक को भी यकीन हो गया कि उनके बैल को विष ही दिया गया है। वे समाई करके रह गये और लोगों से बोले—"आदमी की दुश्मनी का बदला आदमी से लेना चाहिये। बेजबान जानवरों ने क्या बिगाड़ा है। मैं तो उसे मूर्ख ही कहूँगा जिसने मेरे बैल को जहर दिया है।"

मँगरू का खून खोल उठा। वह गरम पड़ गया और पाठक से बोला—"पाठक दादा! अगर तनिक भी पता चल जाये कि किसने जहर दिया हैं मैं उसका खून पी जाऊँ। चाहे फिर मुझे फाँसी पर ही चढ़ना पड़े। यह बिल्कुल सच है कि अब इस गाँव में लोगों के इन्सानियत नहीं रह गई। लोग आदमियों का बदला जानवरों से लेने लगे हैं।"

मँगरू के बढ़ते हुए रोष को किसी तरह पुजारी पाठक शान्त कर पाये। तब गंजू अपनी बात कहने लगा। वह बोला—"मैं जानता हूँ दादा! कि यह नीच काम कौन कर सकता है। वही जंगी बिन्दो का नौकर। पूरा कसाई है, कसाई वह। उसमें तनिक भी दया-मया नहीं छू गई है। जब कहो अँधेरे-उजेले उसे उठाकर पटक दें। उसके पेट में छुरी भोंक दूँ, आँतें बाहर निकल पड़ें। खूब मोटा हुआ है, देखते नहीं उस के चर्बी कितनी बढ़ गई है।"

पुजारी पाठक ने हँसकर, गंजू को भी टाला। गौरी और चंदा दोनों गमगीन थीं। उन्हें बैल की मृत्यु पर बहुत दुःख था।

: ५३ :

कुछ दिन और बीते। महुए चूने लगे। आम गदराने लगे और उन की डालपर बैठकर कोयल गाने लगी कुहू-कुहू। महीना वैशाख का था। ऐसे में सबेरे का समय बड़ा सुहावना लगता और साँझ भी सलोने होती। दोपहर को लू चलती तो उसके बदले रात में खूब ठंडी हवा बहती। गर्मी के मौसम का आनन्द तो इसी समय आता। लोग पैर पसार कर खुली छत, आँगन और चबूतरों पर सोते, बेखबरी की नींद आती। हवा चलती

रहती, लोग सोते रहते। सवेरे भी जल्दी आँखें नहीं खुलती। ऐसा मौसम चल रहा था। पुजारी पाठक के खेत कट चुके थे। खलिहानों से गल्ला और भूसा घर आ चुका था। मंझू, गौरी और मँगरू ये बाहर गोंड़े में सोते। चन्दा अकेली सोती आँगन में और पाठक स्वयं गुलाबचन्द लाठी चारपाई पर रख छत पर सोते थे।

इस पर भी एक रात को सेंध फूट गई पाठक के घर में। चोर घर के पीछे वाली दीवाल में नकब लगाकर अन्दर घुसे थे। रुपया और जेवर पाठक घर में नहीं रखते थे। वह शहर की बैंक के सेफ डिपाजिट में रहता। इसीलिए चोरों के हाथ नहीं लगा। हाँ! बरतन और कपड़े वे सब उठा ले गये। गल्ला भी जितना ढो सकते थे, ले गये।

सवेरे पाठक ने जब यह देखा कि उनके घर में चोरी हो गई है तो वे माथा पकड़कर रह गये और सोचने लगे कि बैल को जहर देने की तरह ही इस काम में साजिश गाँव वालों की ही है। घर के सब लोग हाय-हाय करने लगे। मँगरू और मंझू दोनों का कहना था कि यह नीच काम गाँव वालों ने ही किया है और किसी की हिम्मत नहीं पड़ सकती कि दूसरे गाँव में जाकर सेंध फोड़े। आप थाने जाइए, रपट (रिपोर्ट) लिखवाइये। एक-एक घर की तलाशी होगी सब सामान बरामद हो जायेगा और यही कह रही थी चन्दा तथा गौरी भी कि हाँ, अब बिना अदालत और कचहरी के काम नहीं चलेगा। गाँववाले बदमाशी पर आमादा हैं। उन्हें सजा जरूर मिलनी चाहिए।

पुजारी पाठक सबकी सुनते रहे और मन ही मन सोचते रहे कि मुझे क्या करना चाहिये। गाँव में पास-पड़ोस तक में उन्होंने यह जाहिर नहीं होने दिया कि रात को उनके घर में नकब लग गई और चोरी हो गई है। अन्त में वे इस निश्चय पर पहुँचे कि अभी कस्बे के थाने जायें और वहाँ जाकर रिपोर्ट लिखवायें।

और यही किया पुजारी पाठक ने। उनका प्रभाव व्यक्ति पर ऐसा पड़ता कि वह उनके किसी काम के लिए भी इंकार नहीं कर पाता।

पुलिस जब चाहती तब आती तहकीकात करने; लेकिन उनके साथ उसी समय एक दरोगा और छः कानिस्टिविल आये। उनके घर की सबसे पहले देखभाल हुई फिर तहकीकात की जाने लगी पूरी तौर से। बिन्दो, रामदयाल दादा और मुखिया आदि सबको वहाँ दरोगा ने बुलवाया। उन सबसे पूछा गया तो सबने यही कहा कि साहब! चोर को तो पाठक ने अपने घर में ही बसा रखा है। मँगरू जेल जा चुका है, सजा काट चुका है। वह नामी बदमाश है गाँव का। कुछ दिन शहर में भी चार-सौ बीस करता रहा। इस चोरी में उसी की साजिश है। उसी को आप बाँधकर ले जाइये। जहाँ पीठ पर हन्टर पड़े सब कबूल देगा।

इस पर पुजारी पाठक बहुत बिगड़ गये। वे सब पर झल्लाते हुए दरोगा से बोले—"यह सब गलत है, यह कभी नहीं हो सकता। मँगरू पर मुझे पाई भर भी सन्देह नहीं है। मैं जानता हूँ कि वह भूखों मर लेगा; मगर चोरी नहीं करेगा। वह बेगुनाह है। अगर आप उसे चोर समझते हैं तो सबसे पहले मेरे हथकड़ी डालिये। आप गाँववालों की बातों पर न जाइये। मैं खुल्लम-खुल्ला कहता हूँ कि जो लोग यहाँ बैठे हैं मुझे इन्हीं पर शक है। यों आप अपनी कायदे की कार्यवाही कीजिये। मुझे दखल देने का कोई हक नहीं है।"

पुजारी पाठक के बयान दरोगा ने नोट कर लिये। फिर वह सिपाहियों को लेकर गाँव के कई घरों में घुसा। तलाशी ली गई। दो-एक घरों में कुछ सामान मिला भी जिसको पाठक ने पहचाना, उन्हीं का था। बस! इसी आधार पर छः-सात आदमी गिरफ्तार हुए। पुलिस उनको लेकर चली गई। तब गाँववाले बहुत ही खैरू हो गये पुजारी पाठक पर। कुछ लोग तो यहाँ तक कहने लगे कि इस पाठक को मिट्टी में न मिला दिया तो हमरा नाम नहीं। बेगुनाह लोगों को इसने पकड़वाया है।

किन्तु पुजारी पाठक को इसकी तनिक भी चिन्ता नहीं थी। वे दूसरे दिन शहर गये, बैंक से रुपया निकाल बरतन और जरूरी कपड़े खरीद लाये।

: ५४ :

आठ-दस दिन तक मंगरू और गौरी पुजारी पाठक से कुछ नहीं बोले; क्योंकि उनका दुःख ताजा था। एक दिन दम्पति उनके पास गये, तब रात थी। वे छत पर लेटे भगवद्-भजन कर रहे थे। निकट ही चटाई पर लेटी चदा आकाश की ओर देख रही थी। वह भी कुछ सोच रही थी। दोनों बाप-बेटी मौन थे जैसे रात सूनी थी। सन्नाटा सांय-सांय कर रहा था और चांदनी छिटकी थी। कँटीला चांद तैर रहा था नीले आकाश में। तारे झिलमिला रहे थे और बह रही थी पवन शीतल सुगन्धि भरी। वातावरण मौन था। रात आगे बढ़ रही थी। पहला पहर बीतकर अब दूसरा भी आधा हो रहा था।

"पाठक दादा!" सहसा गौरी ने उस सन्नाटे को तोड़ा। वह बोली धीमी आवाज़ में—"बड़ी हिम्मत करके मैं आयी हूँ आपके पास। बस! अब हम लोगों को जाने दीजिये। दुनिया बड़ी बेरहम है। उसे सताने में ही आनन्द आता है। आपके खिलाफ पंचायत बैठी। हम लोगों के ही कारण बैल को जहर दिया गया, घर में सेंध फूटी और चोरी हुई। यह सब भी रंजिश के ही कारण। हम लोग कहीं भी जाकर दूसरे गांव में बस जायेंगे। आपका आशीर्वाद चाहिये। हम गरीब जंगल में ही मंगल मना लेंगे। हम ···।"

अभी गौरी इतना ही कह पायी थी कि उसके समर्थन में मंगरू बोल उठा—"हां दादा! मैं सोचते-सोचते इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि हम लोग अगर यहां रहेंगे तो गांववाले आपको और भी अधिक परेशान करेंगे। बस हम लोग चले जायेंगे, आप न रोकिये। आखिर आप कहां तक अपना नुकसान उठायेंगे। मैंने और गौरी ने सलाह की है कि आपको मनाकर ही रहेंगे और यहां से चले जायेंगे।

पास लेटी चदा अब उठकर बैठ गई थी। वह देख रही थी मंगरू और गौरी की तरफ। उनकी बातें सुनकर उसे दुःख हो रहा था; लेकिन फिर भी खामोश थी और पुजारी पाठक, उन्होंने धीरे से करवट बदली,

फिर उठकर बैठे। दम्पत्ति को लक्ष्य कर वे कहने लगे—"तुम लोग बार-बार यही कहते हो, एक ही बात दोहराते हो कि हम लोग चले जायेंगे; लेकिन क्यों ? यह मेरी समझ में नहीं आता। कथरी में जुएँ पड़ जाते है। वे काटते हैं। खून चूसते हैं तो उनके डर से कथरी नहीं छोड़ दी जाती। वह इस्तेमाल होती रहती है। आदमी को अपना काम करना चाहिये। दुनिया को नहीं देखना चाहिये कि वह किधर जा रही है। आखिर कितनी शरारतें करेंगे गाँववाले। एक दिन वे हथियार डाल देंगे और चुपचाप बैठ जायेंगे। तुम लोग कहीं नहीं जाओगे और न मैं जाने दूँगा। जाओ आराम करो ? ऐसी बातें मन में भी न लाया करो।"

"लेकिन दादा—।"

मँगरू के मुँह से इतना ही निकला था कि पुजारी पाठक एकदम बिगड़ उठे। वे बोले—"लेकिन-वेकिन कुछ नहीं मँगरू जाओ अपना काम करो मैं जानता हूँ कि गाँववाले कितने पानी में हैं, उनमें किसी में हिम्मत नहीं जो मेरा मुकाबला करे। इसीलिये छिपकर दाँव करते हैं और मुँह की खाते हैं।"

"मगर एक बात तो सुन लीजिये। मैं···।" गौरी ने अपना पूरा साहस बटोर कर मुँह खोला था कि पुजारी पाठक ने बात काट दी वे जिद में आकर बोले—"नहीं गौरी ! नहीं ! मैं कुछ भी नहीं सुनूँगा। मेरा माथा खाली न करो। मुझे उलझन-सी हो रही है। कैसा डर और कैसा खतरा, मैं गोली मार दूँगा जो तुम लोगों की ओर आँख उठा कर भी देखे।"

यह कहकर पुजारी पाठक लेट गये। चंदा ज्यों की त्यों वहीं पर बुत बनी बैठी थी। मंगरू और गौरी देर तक स्तब्ध रहे। रात भींगती रही। पुजारी पाठक की पलकें खुलतीं, मुँदती और कभी देर तक खुली की खुली ही रह जातीं। सीधे लेटे-लेटे उन्होंने ऊबकर करवट बदली तो देखा मँगरू और गौरी दोनों वहाँ से जा रहे थे।

: ५५ :

मंगरू और गौरी की स्थिति अजीब थी। दोनों परेशान थे, कुछ भी सोच नहीं पा रहे थे। पुजारी पाठक से उन्हें बहुत श्रद्धा थी। वे उनका नुकसान नहीं देख सकते, अपने पीछे उन्हें परेशानी और उलझन में नहीं डालना चाहते थे। मगर रास्ता कोई नजर नहीं आ रहा था। दोनों हैरान थे।

बातों ही बातों में एक दिन मंगरू ने गौरी से कहा—"ऐसा नहीं हो सकता गौरी कि हम लोग यहाँ से चुपचाप बिना बताये ही चल दें; क्योंकि यह तुम अच्छी तरह समझ लो कि पाठक दादा हम लोगों को कभी नहीं जाने देंगे। बेचारे कितनी चोटें सह रहे हैं हमारे पीछे। हम लोग चले जायेंगे बस ! कांटा निकल जायेगा। फिर गाँववालों को उन से कोई शिकायत नहीं रह जायेगी।"

गौरी यह सुनकर सोच में पड़ गई। फिर ठुड्डी पर हाथ रख देर बाद धीरे-धीरे यह कहने लगी—"यह तो चोरों की तरह जाना हुआ। पता नहीं पाठक दादा मानते क्यों नहीं। जान-बूझकर गैरों के लिये आग में कूद रहे हैं, अपना फायदा और नुकसान नहीं देखते। बहुत तो कह चुके हम लोग लेकिन वे जाने ही नहीं देते हैं। मैंने अकेले में चंदा को बहुत समझाने की कोशिश की। मगर उस पर भी बाप का जादू सिर पर चढ़कर बोल रहा है। जो समझो सो करो। मैं क्या बताऊं। मैं तो पहले ही कहती थी कि गगादेई के गाँव चलो लेकिन तुम नहीं माने। यहाँ आकर चक्कर में पड़ गये। चक्कर घूमा डालता है। वह आदमी की सुधबुध सब हर लेता है। अच्छा ! आज मैं फिर कहूँगी पाठक दादा से। जहाँ तक होगा उन्हें मना कर रहूँगी।

मंगरू के पास अधिक समय नहीं था। उसने तयकर रखा था कि कल आने वाली रात को वह घर छोड़ देगा। अपनी औरत और बच्चों को लेकर कहीं दूर चला जायेगा। वह जोर देकर बोला—"ऐसी बातें

करती हो गौरी। भला चंदा और पाठक दादा कब पसीजने लगे। वे हमें नहीं जाने देंगे। मेरी बात मानो और कल रात को यहाँ से चल दो।

गौरी एकदम कुछ घबड़ा-सी गई। वह भीत स्वर में बोली—"इतनी जल्दी! आखिर आगे का भी कुछ सोचा है। कहाँ चलोगे? क्या करोगे? अगर हम पुजारी पाठक को राजी कर लें। वे हमें चला जाने दें तो कितनी खूबसूरती रहेगी। तुम मानो या न मानो ऐसे चलने में एक बात तो होगी ही। हम लोग पाठक दादा की निगाहों से गिर जायेंगे। उनका विश्वास हम पर से उठ जायेगा।"

"तो कौन हमें यहाँ फिर लौटकर आना है गौरी। गाँव से बाहर दादा जहाँ भी कहीं मिलेंगे हम उनके पैरों पर लोट जायेंगे। बस! हमारे सारे अपराध वे क्षमा कर देंगे। बात मानों और कल चलने की तैयारी पक्की रखो।"

पति के मुंह से यह सुनकर गौरी चुप हो रही और उसका मुंह देखने लगी। वह लगातार अपनी ही बात पर जोर डालता रहा। गौरी ने बीच में थोड़े-बहुत तर्क किये लेकिन वे कट गये। तब उसे मजबूरी के आगे झुकना पड़ा और वह पति के विचारों से सहमत हो गई।

× × ×

प्रातःकाल सबसे पहले पुजारी पाठक ही उठते थे। वे गोंड़े में आये, आवाज दी। गंजू अभी सो रहा था। तब वे पुकारने लगे 'मंगरू-मंगरू, गौरी-गौरी।' नित्य ऐसा होता था कि मंगरू चाहे सोता रहे; मगर गौरी 'फौरन ही जवाब देती—पालागन दादा'। किन्तु आज कोई नहीं बोला तो वे हंसने लगे और आँगन में जा आँखें खोले लेटी चंदा से बोले—"गंजू तो घोड़े बेचकर सोता ही है। आज गौरी भी सो गई। अभी तक नहीं उठी।"

उत्तर में चंदा मुस्करा दी। फिर दोनों बाप-बेटी मंगरू और गौरी की बातें करने लगे।

लेकिन थोड़ी देर बाद जब अंधेरा पयान कर गया और सूरज चम-

केने गया तो पुजारी पाठक दंग रह गये यह देखकर कि मंगरू और गौरी की कोठरी खाली पड़ी है। वे लोग कहीं चले गये, अपना सामान भी ले गये। चंदा अवाक् खड़ी थी। पुजारी पाठक भी मौन थे कि सहसा गेंदू ने टोक दिया। वह बोला—"दादा! दोनों प्राणी चले गये। वे डर गये। वे आपका नुकसान होते नहीं देख सकते थे। अब शायद इधर कभी नहीं आयेंगे। बहुत कहा आप से लेकिन आपने नहीं जाने दिया। इसीलिए चुपचाप चले गये। देखो बेचारों पर आगे कैसी बीते।"

इस पर पुजारी पाठक ने एक लम्बी साँस ली और धीरे-धीरे कहने लगे—"दोनों कहीं भी रहें सुखी रहें। मंगरू का परिवार बढ़े। गौरी का सुहाग अमर रहे। दोनों बड़े डरपोक निकले, बिना बताये ही चले गये।"

इसी समय चंदा के मुँह से भी निकल गया—"जाने वाले को कोई रोक नहीं पाता है बापू। मंगरू और गौरी दोनों ने इस में अपनी भलाई सोची होगी। उनका धर्म और ईमान उनके साथ है। वही उनका गिरे समय में साथ देगा। वे कहीं भी जायेंगे सिर आँखों पर लिए जायेंगे।

सबकी निगाहें मंगरू की कोठरी में टिकी थीं। ऐसा लग रहा था कि गौरी अब बाहर निकली, तब बाहर निकली। सवेरा हो गया था अच्छी तरह। अब धूप चढ़ रही थी अपने में तिलकन लिये क्योंकि जेठ का महीना था। पुजारी पाठक सोच रहे थे कि मंगरू का परिवार कहीं न कहीं की राह तय कर रहा होगा। ईश्वर उन पर रहम करे। यह धूप बदली में बदल जाये। उन दुखियारों की अनजान राह हँसते-बोलते पूरी हो जाये। वे कहीं अपना डेरा डाल लें और सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करें।

: ५६ :

घर छोड़ते समय तक मंगरू कुछ भी तय नहीं कर पाया था कि वह अपने परिवार को कहाँ लिये जा रहा है; लेकिन बाहर आते ही एकदम उसके मन में न जाने यह बात कैसे आ गई। गाँव से बाहर निकलते ही

वह गौरी से कहने लगा—"तुम पूछ रही थीं न गौरी कि कहाँ चलोगे ? और क्या करोगे ? उसके लिये मैंने सोच लिया है कि हम लोग शहर फिर चलेंगे।"

शहर का नाम सुनते ही गौरी चौंक गई। वह तत्क्षण ही बोल उठी —"क्या कहा ? शहर चलोगे ? वहीं जहाँ इज्जत-आबरू तक दिन दहाड़े लूट ली जाती है। चलो, गंगादेई के गाँव चलो। हम लोगों की नई जिन्दगी वहीं से शुरू होगी।"

"नहीं ! गौरी नहीं ! तुम मानती क्यों नहीं। गाँव का दिन शहर की रात है और शहर के दिन गाँव तो कभी पा नहीं सकता। गाँव ह में भटकेंगे, भूखों मरेंगे, कोई सीधे मुँह बात भी नहीं करेगा। शहर चलेंगे, दूर नई बस्तियों में कहीं न कहीं कोई जगह किराये पर ले लेंगे वहाँ धूपचन्द की छाया भी नहीं पहुँच पायेगी। मैं जो कहता जाऊँ कर जाओ गौरी ! इसी में भलाई है। मुझे अपनी बिगड़ी फिर से बना है; क्योंकि मैं बाल बच्चेदार आदमी हूँ।" यह कह कर मँगरू ने लम्बी साँस ली। गौरी उसकी ओर देखती ही रह गई। वह चलती मँगरू बोलता रहा। राय तय होती रही। जब रतन ने कहा— बापू तुम कानपुर ही चलो। वहाँ अच्छा लगता है। यहाँ गाँव में मिट्टी बहुत है।' तब दम्पति मुस्करा दिये।

सवेरे का सुहावना समय मुखरित हो रहा था। मँगरू और चले जा रहे थे। रतन भी पैर बढ़ा रहा था यह उमंग लिये कि शहर जा रहा है। सामने अमराई थी। गदराये आमो की डार बैठी कोयल कूक रही थी—'कुहू-कुहू'। मोर बोल रहे थे 'पीहू- मँगरू और गौरी दोनों प्रसन्न थे। वे देखने लगे एक नाचते हुए म ओर, तभी उस वीराने में सामने से दौड़ती हुई हिरणों की एक निकल गई। उनकी निगाह उन पर अटकी और फिर भटक गई।

× × ×

इस बार शहर आकर मँगरू तथा गौरी ने हैलट नगर में एक छोटा-सा कमरा किराये पर लिया। उधर नई बस्तियों में उन्हें मजदूरी का काम मिल गया। उन दिनों नारायण पुरवा और अशोक नगर आदि बस्तियों में मकान बनने का काम खूब तेजी से चल रहा था। दम्पति एक महीने में ही खुशहाल हो गये और वे धीरे-धीरे अपने बीते दिन भूलने लगे।

रतन का नाम स्कूल में लिखवा दिया गया। वह पढ़ने जाने लगा। अब वह तीसरी कक्षा का छात्र था, लगभग दस वर्ष का हो रहा था। वह पढ़ने में मन खूब लगाता। रूपा भी चार साल की हो गई थी। मँगरू को ऐसा लगता कि वह मौत के मुँह से बचकर निकल आया है। गाँव पर मुसीबत उठाते-उठाते उसकी तो हिम्मत ही टूट गई थी।

नित्य सवेरे गौरी जब उठती तो लपसी (हलुवा) बनाती गेहूँ के आटे की। वह थोड़ा-सा दूध भी लाती। पति और पुत्र को दूध-लपसी खिला, पढ़ने और काम पर भेजती। फिर स्वयं भी जाती, दिन भर मेहनत करती। शाम को आती तो ऐसा लगता कि वह बिल्कुल थकी ही नहीं है। आते ही वह खाना बनाने में जुट जाती, फिर खा-पी चौका छटपटे फुरसत पा पति के पैर दबाती। वह कहता ही रहता कि बहुत थक गई हो गौरी जाओ आराम करो, किन्तु वह तभी मानती जब मँगरू नींद की गोद में चला जाता।

ऐसी जिन्दगी बीत रही थी मँगरू और गौरी की। उनका श्रम सार्थक हो रहा था। रतन भी खिल रहा था उस फूल की तरह जो सरोवर के बीचों बीच में होता है। जिसे लोग देखते हैं और देखकर रह जाते हैं। वह गहरे में होता है। इसीलिए पहुँच नहीं पाते। वह मुस्कराता रहता है और लोग देखते रहते हैं।

वह गौरी से कहने लगा—"तुम पूछ रही थीं न गौरी कि कहाँ चलोगे ? और क्या करोगे ? उसके लिये मैंने सोच लिया है कि हम लोग शहर फिर चलेंगे।"

शहर का नाम सुनते ही गौरी चौंक गई। वह तत्क्षण ही बोल उठी —"क्या कहा ? शहर चलोगे ? वहीं जहाँ इज्जत-आबरू तक दिन दहाड़े लूट ली जाती है। चलो, गंगादेई के गाँव चलो। हम लोगों की नई जिन्दगी वहीं से शुरू होगी।"

"नहीं ! गौरी नहीं ! तुम मानती क्यों नहीं। गाँव का दिन शहर की रात है और शहर के दिन गाँव तो कभी पा नहीं सकता। गाँव ही में भटकेंगे, भूखों मरेंगे, कोई सीधे मुँह बात भी नहीं करेगा। शहर में चलेंगे, दूर नई बस्तियों में कहीं न कहीं कोई जगह किराये पर ले लेंगे। वहाँ धूपचन्द की छाया भी नहीं पहुँच पायेगी। मैं जो कहता जाऊँ करती जाओ गौरी ! इसी में भलाई है। मुझे अपनी बिगड़ी फिर से बनानी है; क्योंकि मैं बाल बच्चेदार आदमी हूँ।" यह कह कर मंगरू ने एक लम्बी साँस ली। गौरी उसकी ओर देखती ही रह गई। वह चलती रही मंगरू बोलता रहा। राय तय होती रही। जब रतन ने कहा—"हाँ बापू तुम कानपुर ही चलो। वहाँ अच्छा लगता है। यहाँ गाँव में धूल मिट्टी बहुत है।' तब दम्पति मुस्करा दिये।

सवेरे का सुहावना समय मुखरित हो रहा था। मंगरू और गौरी चले जा रहे थे। रतन भी पैर बढ़ा रहा था यह उमंग लिये कि वह शहर जा रहा है। सामने अमराई थी। गदराये आमो की डाली पर बैठी कोयल कूक रही थी—'कुहू-कुहू'। मोर बोल रहे थे 'पीहू-पीहू'। मंगरू और गौरी दोनों प्रसन्न थे। वे देखने लगे एक नाचते हुए मोर की ओर, तभी उस वीराने में सामने से दौड़ती हुई हिरणों की एक टोली निकल गई। उनकी निगाह उन पर अटकी और फिर भटक कर रह गई।

× × ×

इस बार शहर आकर मंगरू तथा गोरी ने हैलट नगर में एक छोटा-सा कमरा किराये पर लिया। उधर नई बस्तियों में उन्हें मजदूरी का काम मिल गया। उन दिनों नारायण पुरवा और अशोक नगर आदि बस्तियों के मकान बनने का काम खूब तेजी से चल रहा था। दम्पति एक महीने में ही खुशहाल हो गये और वे धीरे-धीरे अपने बीते दिन भूलने लगे।

रतन का नाम स्कूल में लिखवा दिया गया। वह पढ़ने जाने लगा। अब वह तीसरी कक्षा का छात्र था, लगभग दस वर्ष का हो रहा था। वह पढ़ने में मन खूब लगाता। रूपा भी चार साल की हो गई थी। मंगरू को ऐसा लगता कि वह मौत के मुँह से बचकर निकल आया है। गाँदिया पर गाँदिया उठाते-उठाते उसकी तो हिम्मत ही टूट गई थी।

नित्य सवेरे गोरी जब उठती तो लपसी (हलुवा) बनाती गेहूँ के आटे की। वह थोड़ा-सा दूध भी लाती। पति और पुत्र को दूध-लपसी खिला, पढ़ने और काम पर भेजती। फिर स्वयं भी जाती, दिन भर मेह-नत करती। शाम को आती तो ऐसा लगता कि वह बिल्कुल थकी ही नहीं है। आते ही वह खाना बनाने में जुट जाती, फिर खा-पी चौका टहलती फुरसत पा पति के पैर दबाती। वह कहता ही रहता कि बहुत थक गई हो गोरी जाओ आराम करो, किन्तु वह तभी सोती जब मंगरू नींद की गोद में चला जाता।

ऐसी जिन्दगी बीत रही थी मंगरू और गोरी की। उनका श्रम सार्थक हो रहा था। रतन भी खिल रहा था उस फूल की तरह जो सरोवर के बीचों बीच में होता है। जिसे लोग देखते हैं और देखकर रह जाते हैं। वह गहरे में होता है। इसीलिये पहुँच नहीं पाते। फूल मुस्क-राता रहता है और लोग देखते रहते हैं।

: ५७ :

गोरी को दूर की बस्तियों में जाने में कठिनाई होती थी। इसीलिये

वह हमेशा यही प्रयत्न करती कि कहीं नजदीक ही काम मिल जाये। भाग्य उसके अनुकूल था। उसे वहीं हैलट नगर में ही एक मकान में मजदूरी मिल गई।

कुछ दिन बाद गौरी ने कोशिश करके मँगरू को भी वहीं काम दिलवा दिया। करीब तीन-चार महीने तक का काम था। दम्पति बहुत खुश थे कि बरसात के महीने उनके अच्छे बीतेंगे। उन्हें पैसे-कौड़ी की तकलीफ नहीं होगी।

जब सुख के दिन बीतने लगते हैं तो आदमी सोच भी नहीं पाता है कि उसका भविष्य कहीं दुःखमय तो नहीं बन जायेगा। वह वर्तमान परिस्थितियों में फँसा रहता है वही उसे रुचिकर प्रतीत होता है और वह शान्ति के साथ अपना जीवन व्यतीत करता रहता है। गौरी और मँगरू दोनों निश्चित थे। वे गाँव की हवा से कोसों दूर थे और थे दूर शहर की गन्दगी से भी जहाँ धूपचन्द जैसे व्यक्ति रहते हैं। वे सुख की सरिता में बह रहे थे। उनकी गृहस्थी फिर एक बार सज रही थी सुन्दर ढंग से। परिवार में सभी के चेहरे खिले रहते। एक माँ थी दूसरा बाप। एक खिलौना था और एक छोटी-सी गुड़िया, जिसका नाम था रूपा।

ऐसे में ही एक दिन अचानक सुख के आसमान पर काले बादल घिर आये। वे छाकर रह गये। उजाले की जगह अँधेरा लेने लगा। गौरी काँप गई। उसने देखा कि जिस जीने पर सिर पर ईंटें लादे वह चढ़ रही है उसी से धूपचन्द मकान मालिक के साथ नीचे उतर रहा है। दोनों की आँखें चार हुईं। धूपचन्द मुस्कराया और गौरी की भौंहें तन गईं। उसे लगने लगा कि ईंटें उसके सिर पर से गिर जायेंगी; क्योंकि उसके हाथ और पैर सब काँप रहे हैं। उसका कलेजा धड़कने लगा इतनी तेजी से कि वह हैरान हो गई। न जाने कैसे और किस तरह उसने अपने को सम्हाला, साहस को बांधने की कोशिश की।

तब दोपहर ढल रही थी। तीन बजने जा रहा था और चार बजे तक गौरी को काम करना था। उसके मन में दुनिया भर के प्रश्न उठने

लगे कि धूपचन्द यहाँ क्यों आया, किस सिलसिले में आया ? उसने मुझे देख लिया, यह अच्छा नहीं हुआ । वह आदमी नहीं आफत की पुड़िया है, किसी समय खुल सकती है ।

इतने में गौरी ने सुना । एक मजदूर और दूसरी मजदूरनी आपस में बतला रहे थे कि अभी जो मकान देखने आये थे वे मालिक के रिश्तेदार हैं । शाह कोठी में रहते हैं । शायद ये भी अब यहीं रहेंगे; क्योंकि बातचीत हो रही थी । इनका चालचलन अच्छा नहीं है बहुत बदनाम आदमी है ।

गौरी के कान खड़े हो गये । कब छुट्टी हुई और कब वह घर आई, इसका उसे बोध ही नहीं हुआ । वह उधेड़बुन में लगी रही । उसके हाथ और पैर मशीन की तरह काम करते रहे । खाना बना सबको खिला और चौका टहल से फुरसत पा जब वह लेटी तो उसे नींद नहीं आई । वह बराबर सोचती रही धूपचन्द की समस्या पर कि धूपचन्द मेरा दुश्मन है । मुझे उससे बचकर रहना चाहिए । देखो क्या करता है ? उनको (मंगरू) बताऊँ या न बताऊँ । सोचती हूँ कि सौ बातों की एक बात, न साँप मरे और न लाठी टूटे । मैं काम छोड़ दूँ, वे करते रहें । मैं कहीं दूसरी जगह लग जाऊँगी । क्या करूँ ? सबेरे जाऊँ या घर में रहूँ ?

गौरी उलझन में व्यस्त रही । रात ढलते-ढलते उसकी आँखें झपकी और फिर थोड़ी देर बाद ही खुल गई तब सवेरा हो चुका था ।

नित्य कर्म से निवृत हो मंगरू बोला - "आओ गौरी चलें । आठ बजने वाले हैं ।"

गौरी तनिक ठिठकी । वह कुछ बोल नहीं पाई और अनायास ही उसके पैर पति के पीछे-पीछे उठने लगे । जब दम्पत्ति काम पर पहुँचे तो वहाँ ठेकेदार मिस्त्री ने उन्हें देखते ही जवाब दे दिया और कहने लगा कि तुम लोग बदचलन, आवारा किस्म के हो, तुम्हें काम पर नहीं रखा जायेगा । मकान मालिक की सख्त हिदायत है कि तुम्हारा हिसाब अभी चुका दिया जाये । यह कहने के साथ उसने जेब से उनके हिसाब के रुपये

निकाले और दोनों को दे दिये।

मँगरू और गोरी दोनों एक दूसरे की तरफ देखने लगे। मँगरू के समझ में नहीं आ रहा था कि आखिर बात क्या है? उन लोगों की शिकायत यहाँ किसने की? लेकिन गोरी सब समझ रही थी कि यह धूपचन्द का ही काम है। उसने ही जवाब दिलवाया है।

दोनों जब घर को लौट रहे थे तो गोरी के मुँह तक आता कि वह धूपचन्द वाली बात पति को बता दे; लेकिन उसका मन कह रहा था कि नहीं, उसके मन में चिन्ता घर कर लेगी। अभी वे खुश हैं। उनकी खुशी छिन जायेगी धूपचन्द का नाम सुनते ही।

दोनों मौन थे। उनके कदम उठ रहे थे भारी-भारी। जब वे दरवाजे के निकट पहुँचे तो भोला रतन पूछने लगा—"अरे माँ! तुम लौट कैसे आयीं और बापू तुम भी?"

गोरी उदास थी। वह कुछ बोल नहीं पाई और मँगरू ने स्नेहपूर्वक पुत्र के सिर पर हाथ फेरते हुए यह कह दिया कि आज काम बन्द है। इसलिए तुम्हारे इतवार की तरह आज हम लोगों की भी छुट्टी है।

: ५८ :

नारी नदी है और पुरुष सागर। वह बहती है और सागर में समा जाती है। गोरी अपने प्रति ईमानदार थी। अनीति और असत्य उसे कभी नहीं रुचते। वह दोनों से बैर रखती थी। आखिर उसने कह ही तो दिया पति से कि उस दिन धूपचन्द मकान मालिक के साथ आया था। उसने मुझे देखा था। यह सब लगाई-बुझाई उसी की है जो हम लोगों का काम छूटा।

मँगरू चिंतित हो उठा। वह कहने लगा—"गोरी! दुश्मन हमारा घर देख गया है, यह अच्छा नहीं हुआ। धूपचन्द से हमेशा खतरा है। अब क्या करना चाहिए? तुमने क्या सोचा है?"

गोरी कुछ सोचती हुई धीरे से बोली—"क्या बताऊँ? नटों का

लेकिन गोरी को विशेष उत्सुकता नहीं हुई। उसने केवल हाँ द्योतक सिर हिला दिया और मँगरू बतलाने लगा कि यहाँ से दूर नारायण पुरवा में एक बहुत बड़ा मकान बन रहा है। कई महीनों तक उसमें काम चलेगा।

और जब सवेरा हुआ। दम्पति काम पर जाने की तैयारी करने लगे तो सहसा गोरी ने देखा कि सामने धूपचन्द चला आ रहा है। उसके साथ चार आदमी और हैं। वे सब तेज़ी से उसके घर की ओर लपके आ रहे हैं। वह एकदम चीख पड़ी और उसी घबराहट में उसके मुँह से निकल गया—"धूपचन्द आ गया। रतन के बापू देखो उससे बोलना मत। अगर कोई बात पूछेगा तो जबाब मैं दे दूँगी।"

मँगरू यह सब देख-सुनकर दंग रह गया। वह चौखट पर आ खड़ा हो गया। अब धूपचन्द उससे थोड़ी ही दूर रह गया था।

: ५६ :

आते ही धूपचन्द मँगरू को ललकार कर बोला—"आज चोर पकड़ा गया। मुझसे सौ रुपये लिए थे, वे देने तो दूर रहे ब्याज भी नहीं दिया और उल्टे चोरी-चोरी मकान छोड़कर भाग आया। लाओ मँगरू रख दो सौ रुपये और उनका दो साल का ब्याज। नहीं तो मैं बहुत सख्ती से पेश आऊँगा। इसीलिए अपने साथ ये आदमी लेकर आया हूँ।"

गोरी और मँगरू दोनों चौखट पर खड़े थे। गोरी क्रोध से दाँत पीस रही थी और मँगरू गुस्से में आ मुट्ठियाँ भींच रहा था। धूपचन्द सामने खड़ा था यमराज जैसा। और उसके साथी, वे भी तैयार खड़े थे कि कब धूपचन्द के मुँह से निकले और वे सब के सब मँगरू पर टूट पड़ें।

मँगरू ने आक्रोश भरे स्वर में धूपचन्द से कहा—"क्या स्वाँग लेकर आये हो। जाओ अपने घर में बैठो। वे दिन बीत गये जब तुम हमको सता ले गये थे। बैठी बर्रें न हुसकाओ ! नहीं तो वे काट खायेंगी।"

"क्या कहा ! बर्रें मुझे काटेंगी। मँगरू मिती न पढ़ाओ ? मैं यह

तय करके आया हूँ कि रुपये और ब्याज लेकर ही आऊँगा। बहुत दिन तक तो छिपे रहे अब देखना है कि आज कहाँ बच कर जाते हो।" यह कहकर धूपचन्द हुमका और एक आगे कदम बढ़ आया।

मँगरू तो बोलते ही बोलते रह गया, अब सामने आ गई गौरी। वह दोनों हाथ नचा धूपचन्द से पूछने लगी—"कैसे रुपये! कब दिये थे तुमने? कोई कागज या पुरनोट लिखवाया था? शर्म नहीं आती लाला। डूब मरो जाकर चुल्लूभर पानी में। मैं कहती हूँ कि तुम हम लोगों के पीछे हाथ धोकर क्यों पड़े हो? आखिर चाहते क्या हो? जाओ, चले जाओ हमारे दरवाजे से। बस इसी में भलाई है।"

"क्या कमाल करती है औरत, जबान ऐसे चलाती है जैसे कतरनी। चल हट दूर हो यहाँ से। मर्दों के बीच बोलते तुझे तनिक भी कायली नहीं मालूम होती।"

धूपचन्द के मुँह से यह सुनते ही गौरी प्रचंड हो उठी आग की तरह। वह उसके मुँह पर दोनों हाथ मारती हुई तेज गले से बोली—"कायली के बच्चे! आग लगा दूँगी तेरे मुँह में। तुझे जिन्दा जला डालूँगी। तेरे लिये गौरी अब औरत नहीं रही, नाहर बन गई है। तेरा खून पीकर ही मुझे शान्ति मिलेगी। तू आ गया फिर गड़े मुर्दे उखाड़ने। जा, चला जा नहीं तो अभी तेरा सिर फोड़ दूँगी।"

गौरी क्रोध से कांप रही थी। उसका चेहरा लाल हो गया। नथुने जोर-जोर से चलने लगे। धूपचन्द ने एक धक्का दिया। वह पीछे जाकर गिरी। धूपचन्द फिर मँगरू से बोला—"मँगरू! सम्हालो अपनी औरत को नहीं तो मैं अभी उसकी हड्डी-पसली तोड़ दूँगा। यह बदजात, बद-जबान हो रही है, कैसा बोल रही है।"

मँगरू तैश में भरा खड़ा था, वह बाज सा टूट पड़ा धूपचन्द पर। बस! फिर क्या था। धूपचन्द के चारों साथियों ने उसे दबा लिया और मरम्मत करने लगे। गौरी को कुछ नहीं सूझा तो वह अन्दर के एक डंडा उठा लाई। उसका डंडा बजने लगा आदमियों की पीठों पर। भीड़ इकट्ठा

बाहर निकाला। आगन्तुक युवक खड़ा था लाल-लाल आँखें किये और उस भीड़ में सन्नाटा छाकर रह गया था।

: ६० :

आगन्तुक युवक का नाम कौशल था। वह मँगरू के पड़ोस में ही रहता था। उसका निज का घर था। माँ-बाप का अकेला था वह। उसने अभी हाल में ही एम० ए०, एल० टी० किया था और आजकल स्थानीय एक कालेज में लेकचरर था। वह स्वभाव का इतना साधु था कि घर पर विद्यार्थियों को पढ़ा देता। शुल्क के रूप में उनसे एक पैसा भी नहीं लेता। वह अन्याय को देखकर आँखें नहीं मूँदता; बल्कि उसका विरोध करता था। उसे अहिंसा प्यारी थी और हिंसा को समूल नष्ट कर देने की उसकी हाबी थी उसका कहना था कि अन्याय से दबना नहीं, उससे लड़ना चाहिये; नहीं तो आदमी बुजदिल हो जाता है। उसने सारी परिस्थिति समझी, लोगों की बातें सुनी; फिर उसने गौरपूर्वक चेहरा देखा धूपचन्द का। देर तक उसकी ओर देखते रहने के बाद वह बोला, "लालाजी आप झूठ बोलते हैं। आपने मँगरू को रुपये नहीं दिये। जाइये उसे व्यर्थ के लिए हैरान न कीजिये। वह गरीब आदमी है।"

अब धूपचन्द कौशल के सिर हो गया। वह बोला मुँह बिचकाकर—"आप कौन होते हैं जी मेरे बीच में बोलने वाले? पक्षपात करते हो तो लाओ रुपये आप ही दे दो। मैं चला जाऊँ। आप मुझे झूठा बनाने वाले कौन होते हैं?"

इस पर लोग भी धूपचन्द की तरफदारी करने लगे। वे कहने लगे—"कौशल यह रुपये-पैसे का मामला है। तुम बीच में क्यों पड़ते हो। लेने वाला लेगा और देने वाला देगा।"

"कोई जबरदस्ती ले लेगा, अच्छा गदर मचा रखा है। इन लोगों ने, आखिर अदालत किस लिए बनाई गई है। घर जानी मनमानी का जमाना नहीं है। धूपचन्द का चेहरा साफ बतला रहा है कि उसने मँगरू को रुपये

नहीं दिए हैं। वह···।"

अभी कौशल इतना ही कह पाया था कि चारों तरफ से आवाजें उठने लगीं कि क्या सबूत है तुम्हारे पास कौशल ? जो धूपचन्द को झूठा ठहरा रहे हो। यह सब गलत है मंगरू कर्जदार है, उसे रुपये देने पड़ेंगे।

कौशल फिर गरजा एक बार जोर से। वह बोला—"अच्छा तमाशा है। सबूत यही है कि धूपचन्द ने जो कसम खाई है वह झूठी है।" इतना कहकर कौशल उन्मुख हुआ मंगरू और गौरी की ओर। वह बोला दोनों से—"तुम लोग अपने बच्चों की सौगन्ध खा सकते हो।"

"क्यों नहीं ?" मंगरू और गौरी दोनों के स्वर एक साथ ही निकले।

अब कौशल का साहस दूना हो गया। वह बोला—"तो आओ और रखो सबके सामने अपने बच्चों के सिर पर हाथ कि तुम लोगों ने धूपचद से रुपये उधार नहीं लिये हैं।"

जैसा कौशल कहता गया मंगरू और गौरी वही करते गये। तब एक बार फिर भीड़ में सन्नाटा छा गया। धूपचन्द के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगीं और कौशल दोनों हाथ फैला चिल्ला-चिल्लाकर भीड़ में खड़े लोगों से कहने लगा—"अब आप लोग ही फैसला कीजिये कि कौन झूठा है और कौन सच्चा ? मंगरू और गौरी अपने बच्चों की कसम खाते हैं कि उनको धूपचन्द ने रुपये नहीं दिये और ये महाशय धूपचन्द तो भरी गंगाजली उठा ही चुके हैं, गीता तथा रामायण की कसम भी खा चुके हैं कि इन्होंने मंगरू को रुपये दिए हैं। आप लोगों का तो कहना है कि कोई झूठी कसम नहीं खाता। दूध और पानी एक में मिल गया है। दोनों को अलग-अलग कीजिये।"

उस भीड़ के बीच सन्नाटे का ऐसा आलम था कि लोगों की फूलती-हुयी साँसें स्पष्ट सुनाई दे रही थीं। कौशल गरज रहा था सिंह की तरह गला फाड़-फाड़कर—"आप लोग बोलते क्यों नहीं, खामोश क्यों हैं ? कीजिये न फैसला कि कौन झूठा है और कौन सच्चा। वादी-प्रतिवादी दोनों कसम के बन्धन में बंध रहे हैं। मैं आप लोगों से ही पूछता

हूँ कि कौन माँ-बाप ऐसा होगा जो कि अपनी औलाद की कसम नाहक खायेगा। सब लोग मुँह क्यों बन्द किए हैं। धूपचन्द की कसम को आप लोग बहुत महत्व दे रहे थे और मँगरू की कसम इतनी सस्ती है कि आप के होंठ पर से होंठ नहीं उठते।

अब भी सन्नाटा था। लोग जैसे गूंगे बन गये थे, लेकिन बेहरे नहीं। क्योंकि कौशल की बातें सुन-सुनकर वे हैरान हो रहे थे।

और धूपचन्द मन ही मन बड़बड़ा रहा था। उसके साथी उत्तेजित हो रहे थे। वे हिंसक दृष्टि से देख रहे थे मँगरू को जो सहम रहा था और घबराया हुआ-सा था कि यह सब क्या हो रहा है ?

गौरी चित्र-लिखी-सी खड़ी थी। वह एकटक देख रही थी कौशल की ओर। जिसकी आवाज़ भीड़ में बुलन्द हो रही थी।

: ६१ :

कौशल के प्रश्न का उत्तर कोई नहीं दे रहा था। समस्या अजीब थी। उसका सुलझाव किसी की भी समझ में नहीं आ रहा था। रंगत बिगड़ते देखकर धूपचन्द के साथी धीरे-धीरे वहाँ से खिसकने लगे। रह गया धूपचन्द, वह अब धीरे-धीरे बड़बड़ाने लगा। कौशल के टोकने से पहले ही कुछ लोगों ने उसे डाँट दिया। वह खिसिया गया और मन ही मन कौशल को गालियाँ देने लगा।

कुछ देर बाद भीड़ के दो-तीन बुजुर्ग बीच में आ गए। वे कौशल की बातों का समर्थन करने लगे कि धूपचन्द झूठा है। गौरी और मँगरू ने सच्ची कसम खाई है। धूपचन्द की कसम एक ढोंग है, निरा पाखंड। वह जबरदस्ती मँगरू को दबाना चाहता है।

धीरे-धीरे बहुमत बढ़ा, फिर सबके मुँह से यही आवाज निकलने लगी कि ज्यादती धूपचन्द की है। वह झूठ बोलता है। अगर आगे से उसने मँगरू को हैरान किया या उसे सताने की कोशिश की तो इस मुहल्ले में हम लोग उसे घुसने भी नहीं देगें।

अब मंगरू और गौरी के चेहरे खिल उठे। उन्हें लगा कि जैसे उन पर गिरने वाला मुसीबत का पहाड़ पत्ता हो गया है। धूरचन्द ने बुराई की इसीलिए उसको बदले बेइज्जती मिली, अपमान मिला।

और धूरचन्द अब सारी शेखी भूल गया था। उसके भी कदम पीछे हटे। वह मुड़ गया और जाते-जाते मंगरू तथा गौरी से कहता गया—"जाता तो हूँ मंगरू लेकिन याद रखना कि अगर रुपए वसूल न कर लिए तो मेरा नाम धूरचन्द नहीं। मुझसे बचकर तुम जाओगे कहाँ ? पैसे में बहुत बड़ी ताकत होती है। मैं चाहूँ तो आदमी खरीद लूँ। तुम दो कौड़ी के आदमी दरवाजे पर बुलाकर मेरी बेइज्जती कराते हो। इसका बदला तुम्हें जरूर दूँगा।"

धूरचन्द चला जा रहा था। लोगों के चेहरों पर व्यंग्यात्मक मुस्कान दौड़ रही थी और हँस रहे थे मंगरू, गौरी। वे दोनों बहुत प्रसन्न थे।

और कौशल वह एकदम शान्त खड़ा न जाने क्या सोच रहा था।

: ६२ :

शिक्षा का सदुपयोग ही सार्थकता है और यही निर्माण की कुंजी है। आदमी ऊँचा उठता है जब वह नम्र होकर चलना सीख जाता है। कौशल अपने अध्ययनकाल से ही सोच-समझकर चलता था और अध्यापन कार्य को भी वह एक बहुत बड़ा उत्तरदायित्व समझता। समाज के साथ मिल-जुलकर चलने वाली नीति उसको प्रिय थी। उसकी सादगी पर लोग मुग्ध हो जाते। वह हर दुखिया का साथी था। उसमें क्रोध के तो कभी दर्शन ही नहीं होते, आकर्षण की आभा चेहरे पर कान्ति बनकर दमकती रहती। उदार और कोमल हृदय वाला कौशल दूसरे के दुःख को उतना ही महत्त्व देता जितना अपनी पीर को। उस समय झगड़ा शान्त हो गया था। सब लोग अपने-अपने घर चले गए थे। तब से देर रात तक कौशल के सामने मंगरू और गौरी के चित्र नाचते रहे। उनकी आकृतियाँ स्पष्ट होतीं, अदृश्य हो जातीं। सबे

हूँ कि कौन माँ-बाप ऐसा होगा जो कि अपनी औलाद की कसम नाहक खायेगा। सब लोग मुँह क्यों बन्द किए हैं। धूपचन्द की कसम को आप लोग बहुत महत्व दे रहे थे और मँगरू की कसम इतनी सस्ती है कि आप के होंठ पर से होंठ नहीं उठते।

अब भी सन्नाटा था। लोग जैसे गूँगे बन गये थे, लेकिन बहरे नहीं। क्योंकि कौशल की बातें सुन-सुनकर वे हैरान हो रहे थे।

और धूपचन्द मन ही मन बड़बड़ा रहा था। उसके साथी उत्तेजित हो रहे थे। वे हिंसक दृष्टि से देख रहे थे मँगरू को जो सहम रहा था और घबराया हुआ-सा था कि यह सब क्या हो रहा है?

गौरी चित्र-लिखी-सी खड़ी थी। वह एकटक देख रही थी कौशल की ओर। जिसकी आवाज़ भीड़ में बुलन्द हो रही थी।

: ६१ :

कौशल के प्रश्न का उत्तर कोई नहीं दे रहा था। समस्या अजीब थी। उसका सुलझाव किसी की भी समझ में नहीं आ रहा था। रंगत बिगड़ते देखकर धूपचन्द के साथी धीरे-धीरे वहाँ से खिसकने लगे। रह गया धूपचन्द, वह अब धीरे-धीरे बड़बड़ाने लगा। कौशल के टोकने से पहले ही कुछ लोगों ने उसे डाँट दिया। वह खिसिया गया और मन ही मन कौशल को गालियाँ देने लगा।

कुछ देर बाद भीड़ के दो-तीन बुजुर्ग बीच में आ गए। वे कौशल की बातों का समर्थन करने लगे कि धूपचन्द झूठा है। गौरी और मँगरू ने सच्ची कसम खाई है। धूपचन्द की कसम एक ढोंग है, निरा पाखंड। वह जबरदस्ती मँगरू को दबाना चाहता है।

धीरे-धीरे बहुमत बढ़ा, फिर सबके मुँह से यही आवाज निकलने लगी कि ज्यादती धूपचन्द की है। वह झूठ बोलता है। अगर आगे से उसने मँगरू को हैरान किया या उसे सताने की कोशिश की तो इस मुहल्ले में हम लोग उसे घुसने भी नहीं देंगे।

अब मंगरू और गोरी के चेहरे खिल उठे। उन्हें लगा कि जैसे उन पर गिरने वाला मुसीबत का पहाड़ चूरा हो गया है। धूपचन्द ने बुराई की इसीलिए उसको बदले बेइज्जती मिली, अपमान मिला।

और धूपचन्द अब सारी शेखी भूल गया था। उसके भी कदम पीछे हटे। वह मुड़ गया और जाते-जाते मंगरू तथा गोरी से कहता गया—"जाता तो हूँ मंगरू लेकिन याद रखना कि अगर रुपए वसूल न कर लिए तो मेरा नाम धूपचन्द नहीं। मुझसे बचकर तुम जाओगे कहाँ? पैसे में बहुत बड़ी ताकत होती है। मैं चाहूँ तो आदमी खरीद लूँ। तुम दो कौड़ी के आदमी दरवाजे पर बुलाकर मेरी बेइज्जती कराते हो। इसका बदला तुम्हें जरूर दूँगा।"

धूपचन्द चला जा रहा था। लोगों के चेहरों पर व्यंग्यात्मक मुस्कान दौड़ रही थी और हँस रहे थे मंगरू, गोरी। वे दोनों बहुत प्रसन्न थे।

और कौशल वह एकदम शान्त खड़ा न जाने क्या सोच रहा था।

: ६२ :

शिक्षा का सदुपयोग ही सार्थकता है और वही निर्माण की कुंजी है। आदमी ऊँचा उठता है जब वह नत होकर चलना सीख जाता है। कौशल अपने अध्ययनकाल में ही सोच-समझकर चलता था और अध्यापन कार्य को भी वह एक बहुत बड़ा उत्तरदायित्व समझता। समाज के साथ मिल-जुलकर चलने वाली नीति उसको प्रिय थी। उसकी वाक्शैली पर लोग मुग्ध हो जाते। वह हर दुनिया का साथी था। उसमें स्वप्न के ही कहीं दर्शन ही नहीं होते, जागरण की आभा चेहरे पर कान्ति बनकर दमकती रहती। उदार और कोमल हृदय वाला कौशल दूसरे के दुःख को उतना ही महत्व देता जितना अपनी पीर को। उस समय सारा शान्त हो गया था। सब लोग अपने-अपने घर चले गए थे। तब से लेकर रात तक कौशल के सामने मंगरू और गोरी के चित्र नाचते रहे। उनकी आकृतियाँ स्पष्ट होतीं, अदृश्य हो जातीं। सवेरे वह आ

हूँ कि कौन माँ-बाप ऐसा होगा जो कि अपनी औलाद की कसम नाहक खायेगा। सब लोग मुँह क्यों बन्द किए हैं। धूपचन्द की कसम को आप लोग बहुत महत्व दे रहे थे और मँगरू की कसम इतनी सस्ती है कि आप के होंठ पर से होंठ नहीं उठते।

अब भी सन्नाटा था। लोग जैसे गूंगे बन गये थे, लेकिन बेहरे नहीं। क्योंकि कौशल की बातें सुन-सुनकर वे हैरान हो रहे थे।

और धूपचन्द मन ही मन बड़बड़ा रहा था। उसके साथी उत्तेजित हो रहे थे। वे हिंसक दृष्टि से देख रहे थे मँगरू को जो सहम रहा था और घबराया हुआ-सा था कि यह सब क्या हो रहा है ?

गौरी चित्र-लिखी-सी खड़ी थी। वह एकटक देख रही थी कौशल की ओर। जिसकी आवाज़ भीड़ में बुलन्द हो रही थी।

: ६१ :

कौशल के प्रश्न का उत्तर कोई नहीं दे रहा था। समस्या अजीब थी। उसका सुलझाव किसी की भी समझ में नहीं आ रहा था। रंगत बिगड़ते देखकर धूपचन्द के साथी धीरे-धीरे वहाँ से खिसकने लगे। रह गया धूपचन्द, वह अब धीरे-धीरे बड़बड़ाने लगा। कौशल के टोकने से पहले ही कुछ लोगों ने उसे डाँट दिया। वह खिसिया गया और मन ही मन कौशल को गालियाँ देने लगा।

कुछ देर बाद भीड़ के दो-तीन बुजुर्ग बीच में आ गए। वे कौशल की बातों का समर्थन करने लगे कि धूपचन्द झूठा है। गौरी और मँगरू ने सच्ची कसम खाई है। धूपचन्द की कसम एक ढोंग है, निरा पाखंड। वह जबरदस्ती मँगरू को दबाना चाहता है।

धीरे-धीरे बहुमत बढ़ा, फिर सबके मुँह से यही आवाज निकलने लगी कि ज्यादती धूपचन्द की है। वह झूठ बोलता है। अगर आगे से उसने मँगरू को हैरान किया या उसे सताने की कोशिश की तो इस मुहल्ले में हम लोग उसे घुसने भी नहीं देगें।

अब मंगरू और गौरी के चेहरे खिल उठे। उन्हें लगा कि जैसे उन पर गिरने वाला मुसीबत का पहाड़ हल्का हो गया है। धूपचन्द ने बुराई की इसीलिए उसको बदले में बेइज्जती मिली, अपमान मिला।

और धूपचन्द अब सारी शेखी भूल गया था। उसके तो कदम पीछे हटे। वह मुड़ गया और जाते-जाते मंगरू तथा गौरी से कहता गया—"जाता तो हूँ मंगरू लेकिन याद रखना कि अगर इसका बदला न ले लिया, तो मेरा नाम धूपचन्द नहीं। मुझसे बचकर तुम जाओगे कहाँ? पैसे में बहुत बड़ी ताकत होती है। मैं चाहूँ तो आदमी खरीद लूँ। तुम दो कौड़ी के आदमी दरवाज़े पर बुलाकर मेरी बेइज्जती करते हो। इसका बदला तुम्हें ज़रूर दूँगा।"

धूपचन्द चला जा रहा था। लोगों के चेहरों पर व्यंग्यात्मक मुस्कान तैर रही थी और हँस रहे थे मंगरू, गौरी। वे दोनों बहुत प्रसन्न थे।

और कौशल वह एकदम शान्त खड़ा न जाने क्या सोच रहा था।

पहुँचा उनके घर, कि दोनों कैसे हैं।

लेकिन मँगरू के घर में जो कुछ आकर कौशल ने देखा वह चौंक गया और व्यस्त गले से पूछने लगा—"यह सामान क्यों बाँधा जा रहा है। तुम लोग कहीं जा रहे हो क्या ?"

इस पर मँगरू तो बोलते-बोलते ही रह गया; पर वाक्पटु गौरी फौरन ही कहने लगी—"क्या करें भइया, गरीब कहीं रहने ही नहीं पाता। जहाँ जाना है मारा जाता है। हम लोग इस मुहल्ले से जा रहे हैं। अभी धर्मशाला में दो-चार दिन ठहरेंगे। इस बीच किसी दूसरे मुहल्ले में कोई कमरा मिल ही जायेगा।"

"लेकिन मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि ऐसा क्यों ? आखिर तुम लोग डरते क्यों हो ? हम कहीं चले जायेंगे क्या ? धूपचन्द आदमी है कोई हौआ नहीं। कहीं जाने की जरूरत नहीं। मैं···।"

कौशल की बात में बाधा देता हुआ मँगरू कहने लगा—"कौशल भइया एक चुप में हजार बलायें टल जाती हैं। मैं जानता हूँ कि धूपचन्द आदमी अच्छा नहीं है। इसीलिये यह मुहल्ला छोड़ रहा हूँ और कोई बात नहीं है। मैं तुम्हारा बहुत बड़ा एहसानमन्द हूँ भइया कि कल तुमने मेरी लाज रख ली। वरना क्या गति होती।"

कौशल दम्पति की बातें सुनकर हैरान हो गया। वह कुछ देर चुप रहा, फिर धीरे-धीरे कहने लगा—"अच्छा ! तो एक काम करो। मेरे मकान में नीचे जगह खाली है, तुम लोग चलकर वहीं रहो। वहाँ परिन्दा भी पर नहीं मार सकता है।"

कौशल की यह बात सुन गौरी और मँगरू एक दूसरे का मुँह देखने लगे। मौन भाषा में वे दोनों एक दूसरे से पूछ रहे थे कि क्या करना चाहिये ? और कौशल दोनों को असमंजस में पड़ा देख अपनी बात कह रहा था जोर देकर—"तुम लोग सोचते क्या हो ? इसमें सोचने-विचारने की कोई बात नहीं। तुम गरीब हो मैं तुमसे किराया नहीं लूँगा। हाँ ! और जरूरत पड़ने पर तुम्हारी मदद भी करूँगा। मेरा

स्वभाव है गिरे हुये को उठाना, दुखियों का दुःख दूर करना। मुझे इसमें बड़ा सुख मिलता है।"

इस तरह कौशल दम्पति को अपनी ओर मोड़ता चला गया। उसने खूब समझाया दोनों को। उनके तर्कों को शान्ति के अस्त्र से खण्डित करता चला गया। आखिर राजी हो गया मंगरू और दूसरे दिन वह सपरिवार कौशल के घर चला गया।

गौरी इस नये घर में आकर यह सोचने लगी थी कि उसको अभय वरदान मिल गया है। यहाँ उसका कोई कुछ अनिष्ट नहीं कर सकता। और मंगरू सोचता था कौशल के लिये कि वह आदमी नहीं देवता है। उसमें आदमी के गुण नहीं, दया ही दया भरी है और जिसमें दया होती है वही सबसे बड़ा धनी होता है। अब कौशल के संरक्षण में उसका कोई बाल भी बाँका नहीं कर सकता।

ऐसे ही कौशल को लग रहा था कि बया का जोड़ा उड़ा आ रहा था दूर देश अपना बसेरा छोड़कर; क्योंकि उनके घोंसले को साँप ने देख लिया था। मैं उनके काम आ सका। उन्हें नया घोंसला देने में समर्थ हो सका। यह सब उस ईश्वर की दया है जिसकी इच्छा के बिना एक पत्ता तक नहीं हिलता।

: ३० :

कौशल के पिता का नाम था आदित्य कुमार। वे भूतपूर्व तहसीलदार थे। उनके विचारों में हमेशा सादगी रही। सत्संग ही उनका सबसे बड़ा चाव रहा। उन्हीं के गुण प्रत्यक्ष विद्यमान थे पुत्र में। वे मंगरू को बहुत चाहते, उसे समझाते और तरक्की करने के लिये प्रोत्साहन देते। मंगरू भी उनकी सेवा करता। वह पाँव दबाता, नहलाता। इस तरह उसने सेवाभाव से उनके दिल में अपने लिये जगह बना ली थी।

कौशल की माँ भी थी बिल्कुल सरला। वे गौरी को ऐसे रखतीं जैसे वह उनकी स्वयं की बेटी हो। दोनों बूढ़े दम्पत्ति यह नहीं [illegible]

करते कि मँगरू और गौरी मजदूरी करें और न यह सुहाता था कौशल को भी। वह दोनों के सम्मुख नित्य नई-नई योजनाएं रखता। उनके क्रमिक विकास की कहानी वह इतने सुन्दर ढंग से सुनाता कि वे अब स्वयं भी इस बात के लिये ललकने लगे कि अपने पैरों पर खड़ा होना ही जिन्दगी का सच्चा सुख है। दासता मजबूरी का दूसरा नाम है। आदमी गुलाम रहते-रहते ऊब जाता है। हम लोगों को कोई मुस्तकिल काम करना चाहिये, जिसकी जड़ बुनियाद हो। भटकते-भटकते तंग आ गये हैं।

मँगरू और गौरी से अधिक रतन का ख्याल रखता था कौशल। उस ने उसको घर पर पढ़ाना आरम्भ कर दिया। वह उसे अच्छी-अच्छी पुस्तकें लाकर पढ़ने को देता, आदर्श कथायें सुनाता। वह उससे बहुत स्नेह करता था।

एक दिन कौशल ने मँगरू को कुछ रुपये दिये सहायतार्थ और बाजार जाकर कागज, दफ्ती और थोड़ा बाइडिंग क्लाथ खरीद लाया। उसने जिल्द साजी सिखलाई दम्पति को और यह कहा कि बैठक के बराबर वाले कमरे में तुम लोग दूकान खोल लो। काम यहीं आता जायेगा। मैं कोशिश करता रहूँगा। अच्छा-खासा प्रचार हो जायेगा।

कौशल की योजना कार्य रूप में परिणित हो गई। दूकान खुल गई, मँगरू और गौरी दोनों जिल्द बाँधने का काम करने लगे। काम आने लगा। साथ ही साथ दम्पति कागज के और भी सामान बनाते जैसे रंग बिरंगी पंखे, खिलौने और पतंगें आदि। उनकी बिक्री भी छुट-पुट होती रहती। इसके अतिरिक्त गौरी ने अपने लिये एक दूसरा काम भी निकाल लिया। उसने पति को बाजार भेजकर खजूर की डालें मँगवाई। उन्हें हरे, लाल और नीले आदि कई रंगों में रंगा। फिर पंखे, चटोले और चटाइयाँ आदि बुनने लगी। यह काम वह बहुत अच्छी तरह जानती थी।

मँगरू जब जिल्दें बाँधने या कागज का सामान बनाने बैठता तो गौरी बराबर उसका हाथ बटाती। और गौरी जब बैठती चटाइयाँ, पंखा

बुनने को मँगरू उसके साथ काम करता और यही नहीं रतन भी मौ-चार दोनों के साथ जुटता। सहयोग की भावनायें सब में प्रबल थीं। सभी मगन-मन थे और काम चल रहा था सुचारु रूप से।

कौशल की खुशी का पारावार न था। वह फूला नहीं समा रहा था अपने में कि गोरी और मँगरू की जिन्दगी ने कितना सुन्दर मोड़ लिया है। सच कहा जाता है कि मेहनत और लगन आदमी के लिये एक बहुत बड़ा खजाना सौंप देती है जिसको वह जिन्दगी भर खर्च करता रहता है और खजाना कभी खाली नहीं होता। दस्तकारी वह गुण है जिसे जानने वाला कभी भूखा नहीं रहता। मँगरू और गोरी बहुत भटके; लेकिन अब एक दुरुस्त राह पर आ गये हैं उनकी मंजिल आसान हो गई है। वे अब पीछे न हट आगे ही बढ़ते रहेंगे और उनकी जिन्दगी मुस्क-राती रहेगी फूल की तरह।

अच्छी-खासी दुकान सजी थी मँगरू की। चटाइयों के बण्डल दीवाल के सहारे टिके रखे थे। पंखों के गट्ठर कोने में लगे थे। अलमारियों में जिल्द बँधी हुई किताबें निखर रही थीं। पतंगें खिलौने और चटौने आदि सामान भी यथा स्थान लगा था। देखने में यह रंग-बिरंगी दुकान बहुत ही आकर्षक मालूम होती।

सब कुछ ऐसा था कि मन बहला रहे और किसी भी तरह की चिन्ता का जन्म न हो, लेकिन इस पर भी एक शूल खटक रहा था गोरी की आँखों में। कौशल के घर के सामने ही वह घर था जहाँ अक्सर धूप-चन्द आया करता। वह आता तो दूर से ही गोरी को घूरता, तब गोरी सोचने लगती कि अगर कहीं यह पापी इस घर में रहने लगा जैसा एक मजदूर कहता था तब तो फिर आये-दिन इससे टंटा होता रहेगा। यह आदमी ऐसा है कि झगड़ा मोल लेकर पड़ता है। भगवान बचाये इस बला से। न जाने कहाँ से आ गया।

: ६४ :

मनुष्य की प्रवृत्तियों में धर्म भी अपना अलग महत्व रखता है। कर्म की तरह वह धर्म को भी आवश्यक समझता है। यही लोक कल्याण की भावना कही जाती है। गौरी जहाँ एक ओर मुस्तैदी के साथ जुटकर काम करती। वहाँ वह थोड़ा-बहुत समय निकाल कर कौशल की माँ के पास बैठती, जब वे रामायण-पाठ कर रही होतीं अथवा किसी अन्य धार्मिक ग्रन्थ का। आठवें-दसवें दिन वह उसके साथ गंगा स्नान करने भी जाती। वह अपने में सम्पन्न थी शायद इसीलिए धर्म की ओर उसकी रुचि दिन पर दिन बढ़ती जा रही थी।

एक दिन गौरी जब गंगा की जल राशि में डुबकी लगा रही थी तो सहसा सामने उसकी दृष्टि गई। उसने देखा कि कमर तक जल में बिन्दो खड़ी है। वह दोनों हाथों से गंगाजल का अर्घ्य चढ़ा रही है भगवान सूरज को। गौरी का मन अपने में ही घुटने लगा कि यह बिन्दो कहां से आ गई। उसने जैसे ही चाहा कि अपना मुँह घुमा ले इतने में बिन्दो ने उसे देख लिया। मगर कुछ बोली नहीं, उसने मुँह बिचका लिया।

गौरी कौशल की माँ के साथ स्नान कर घर आई और गीले कपड़े फैलाने जब छत पर गई तो एक दूसरे आश्चर्य ने उसे चौंका दिया। बराबर वाले मकान की छत पर बिन्दो खड़ी थी। आखिर वही उसने गौरी को टोक ही तो दिया कि अरे गौरी तुम यहीं रहती हो इसी घर में ? मैं भी यहाँ आई हूँ रिश्ते में। मेरे भतीजे लगते हैं जिनका यह घर है। कितना किराया देती हो ?

"कुछ नहीं।" कहकर गौरी ने जल्दी-जल्दी नपी-तुली बातों में जवाब दिया बिन्दो को और द्रुतवेग से नीचे चली गई।

उस पूरे दिन और सारी रात गौरी की यह हालत रही कि उसे न तो नींद आई और न भूख लगी। किसी भी काम में उसका मन नहीं लगा। वह मुर्दा-सी पड़ी रही और सोचती रही कि ज्ञानचन्द एक बहुत

चढ़ा खतरा बनकर आया था। कौशल के कारण उसमे जान बची और अब लंका में आग लगाने वाली डाइन बिन्दो पड़ोस में आकर टिकी है। यह बहुत बुरा हुआ; क्योंकि बिन्दो की जबान मेरे लिए जहर ही उगलेगी। उसने अपनी जिन्दगी में कभी कोई अच्छा काम नहीं किया।

गौरी बिन्दो की ओर से भयभीत थी कि कहीं गाँववाले सुर्रे वह यहाँ भी न छोड़ने लगे। बदनामी चाहे झूठी ही हो; लेकिन यह फैलती बहुत जल्दी है। आदमी कायल होकर रह जाता है, उसका सिर झुक जाता है। वह कुछ नहीं कर पाता। जब लोगों की जबानें चलने लगती हैं। बस ! यही खतरा है बिन्दो से। बाकी तो वह औरत है जैसी मैं हूँ, मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकती।

अभी तक गौरी ने पति से नहीं कहा था कि बिन्दो उसके पड़ोस में ही आबाद है। मँगरू ने बिन्दो को देखा और उसने स्वयं आकर उससे कहा कि गौरी ताज्जुब की बात है, मैंने देखा बिन्दो पड़ोस वाले घर में खड़ी थी। न जाने वह यहाँ कैसे आ गई।

तब गौरी ने बतलाया कि वह उसे कल सवेरे ही सरसैया घाट पर मिली थी और दूसरी मुलाकात हुई थी उसकी छत पर। जब उसने मीठे ढंग से सब भेद लेने की कोशिश की थी।

मंगरू चौंक गया और दाँतों के बीच ऊँगली दाबता हुआ किसी गहरे सोच में पड़ गया।

दुष्ट प्रकृति के लोग कभी शान्तिपूर्वक नहीं बैठते। उन्हें दूसरे की बुराइयाँ ढूँढने और उनका प्रचार करने में ही आनन्द आता है। परहित की भावनायें तो उनके मन में कभी उठती ही नहीं। वे कलंक होते हैं समाज के लिए और फिर भी लोग उन्हें अच्छा समझते हैं, क्योंकि उनका बाह्य रूप बहुत सुन्दर होता है और अन्तर के काले पर्दे को कौन देखने बैठता है बिन्दो अपनी दूर की रिश्तेदारी में यहाँ कानपुर आई थी। उसने खूब कान भरे गौरी के खिलाफ और परिणामस्वरूप कौशल की माँ की पड़ोसिन एक दिन उनके पास आ गौरी के प्रति विष उगलने लगी।

उस पड़ोसिन ने बतलाया कि गौरी एक आवारा औरत है। वह कौशल पर डोरे डाल रही है, इसीलिए यहाँ टिकी है। उसका पाई भर भी विश्वास न करना कौशल की माँ। मेरी बिन्दो बुआ कहती हैं कि यह उन्हीं के गाँव की है, कई घर बसा और उजाड़ चुकी है। अगर यह बदचलन न होती तो गाँववाले इसे गाँव निकाल बाहर नहीं करते। कहावत है कि काला ब्राह्मण और गोरा शूद्र दोनों ही खतरनाक होते हैं। यह जाति की काछिन है और बन-ठन के ऐसे रहती है जैसे कोई सेठानी हो।

पहले तो कौशल की माँ को पड़ोसिन की बातों पर यकीन नहीं हुआ; लेकिन इतने में वहाँ बिन्दो आ गई। वह जँचाने लगी खूब अच्छी तरह। तब उनका माथा ठनका और वे गहरे सोच में पड़ गईं।

कौशल की माँ को अपने पुत्र पर गर्व था और वे अच्छी तरह जानती थीं कि उसका चरित्र आग में तपाये कुंदन की तरह है। वह हर कसौटी पर खरा उतरता है। समझ में नहीं आता कि आखिर उस पर मुलम्मे का पानी किस तरह चढ़ेगा। गौरी से उम्र में भी वह छोटा है। जो सुना है उसको मन में रखती हूँ; फिर मैं स्वयं देखूँगी कि हकीकत क्या है। जब तक खुद अपनी आँखों से न देख लूँ; अपने कानों से न सुन लूँ तब तक मैं भगवान का भी विश्वास नहीं कर सकती।

कौशल की माँ कभी-कभी यह भी सोचने लगती कि आखिर पड़ोसिन का इसमें क्या फायदा है जो वह व्यर्थ के लिए गौरी की बुराई करेगी। दाल में काला कुछ है जरूर। इसका पता भविष्य अपने आप कर लेगा। किसी से पूछने और समझने की जरूरत नहीं है।

इस भाँति कौशल की माँ अजीब उलझन में पड़ गई थीं। जिस गौरी को वे भोली-भाली ग्रामीणा समझती थीं, वही उनके लिए पहेली बन गई थी। जिसे बूझने का वे प्रयत्न करती परन्तु असफल रहतीं।

: ६५ :

फागुन की जवान धूप चबूतरे पर लोट रही थी। दूकान में बैठी गौरी चटाई बीन रही थी। उसके हाथ मशीन का तरह चल रहे थे। वह गुनगुना रही थी। इतने में कौशल आ गया और पूछने लगा—"मंगरू भइया कहाँ गये ? आज तो छुट्टी है रतन भी दिखलाई नहीं देता।" यह कहते-कहते वह उसके पास आकर बैठ गया और चटाई की उस रंगीन पट्टी को देखने लगा जिसके बुनने में गौरी अत्यधिक व्यस्त थी।

गौरी की लटें माथे पर झूल रही थी। वह हँसकर बोली—"आओ बैठो कौशल भइया, कहो ! कैसे आये ? वे (मंगरू) बाजार गये हैं और रतन यहीं-कहीं खेलता होगा।"

कौशल ध्यानपूर्वक चटाई को देख रहा था और उसकी निगाह दौड़ रही थी साथ ही साथ गौरी की फुर्ती से चल रही उँगलियों पर भी। सहसा उसने पूछ लिया—"सच बताओ भाभी, तुम कभी थकती भी हो? मैं तो देखता हूँ कि दिन-रात काम में लगी रहती हो। वाकई मेहनत का फल बहुत मीठा होता है।"

"इसमें क्या शक है भइया; लेकिन फिर भी जमाना चैन से नहीं बैठने देता। एक धूपचन्द था और एक तुम हो। वह काला नाग था और तुम देवता हो। आदमी की नहीं उसके गुणों की पूजा होती है। मुझे ऐसा लगता है कि तुम्हें पाकर मेरे जन्म-जन्म के भाग्य जग गये। सच कहती हूँ भइया कि मैं यहाँ रहकर बहुत सुखी हूँ।" यह कहकर गौरी तनिक रुकी और फिर तत्क्षण ही दूसरी बात कहने लगी। वह बोली—

"हाँ भइया, तुम ब्याह क्यों नहीं कर लेते। माँ अब बूढ़ी हुई हैं. उन्हें सहारे की जरूरत है। इस ओर तुम्हें ध्यान देना चाहिए।"

"तुम्हीं सारे घर का सहारा हो भाभी। जब समय आयेगा, होने वाले काम अपने आप ही हो जायेंगे। मैं बहुत प्रसन्न हूँ कि मुझको तुम जैसी भाभी मिली। बस···"

अभी कौशल इतना ही कह पाया था कि गौरी बीच में बोल उठी—"यह कालेज और स्कूल नहीं भइया, घर की अदालत है। तुम्हारे मुकदमे का फैसला मैं करके ही रहूँगी। यह मैंने तय कर लिया है।" बात समाप्त कर गौरी ने कौशल की ओर देखा। वह मुस्करा रहा था।

गौरी खिलखिलाकर हँस पड़ी और कौशल बनावटी ढंग से तनिक मुँह बिचका, नाक भौं सिकोड़कर कहने लगा—"बस रहने भी दो भाभी तुम तो मेरी हँसी उड़ा रही हो।"

"हँसी और वह भी तुम्हारी भइया। कमाल करते हो, खूब कहते हो।" यह कहकर गौरी एक बार फिर जोर से हँसी।

कौशल की माँ के मन में सन्देह का कीड़ा जब से रेंग रहा था जब से पड़ोसिन ने गौरी के खिलाफ विष वमन किया था। वे बराबर ताक में रहतीं। आज भी वे खड़ी थीं किवाड़ों की ओट में जब कौशल अन्दर आकर बैठा था। गौरी की हँसी उनको फूहड़ जैसी लगी। वे सामने आ गईं। उनका चेहरा क्रोध से तमतमा रहा था। वे गौरी को फटकार कर बोलीं—"कितनी बेशर्म हो तुम गौरी। गैर मर्दों के सामने ही-ही करके हँसती हो।" यह कहकर वे फिर उन्मुख हुई कौशल की ओर और उसे डांटने लगीं—"तुम यहाँ क्या कर रहे हो कौशल? जाओ अपना काम देखो। जानते नहीं कितने पापड़ बेलकर यह गौरी आई है यहाँ। तुम पर अपना जादू नहीं चलायेगी तो फिर इसका भजन कैसे बनेगा। मैं सुन चुकी हूँ इसकी सब काली करतूतें और साफ-साफ कहती हूँ कि इसे मैं अपने घर में एक मिनट भी नहीं रहने दूंगी। इसकी निगाहें तुम पर हैं। यह तुम्हें अपने जाल में फँसा हम लोगों को चौपट करना चाहती है"

कौशल उठकर खड़ा हो गया और आश्चर्य से चौंकता हुआ माँ से पूछने लगा— 'तुम्हें क्या हो गया है माँ? यह क्या कह रही हो? किस ने तुम्हें बहका दिया? किसकी बातों में आ गई?"

और गौरी, उसके तो पैरों के नीचे से जमीन निकल गई। वह चौंक गई बुरी तरह और आंखें फाड़-फाड़कर कौशल की माँ की ओर देखने

गी। वे बहुत चिढ़ी हुई थीं, कौशल को डाँटकर बोलीं—"तुम चुप रहो कौशल और गौरी बाँधो अपना बोरिया-बिस्तर। तुम चलते पुर्जा निक-लोगी यह मैं नहीं जानती थी। वाकई नीच आदमी को मुँह लगाना उसे सिर पर चढ़ाना होता है। शूद्र, शूद्र ही रहता है। कुकुर धोने से बछड़ा नहीं बन सकता। पड़ोसिन के यहाँ उनकी बिन्दो बुआ आई है। उन्होंने ही तो मारा भेद खोला। वैसे भला मैं क्या जानती और अब जान-बुझ कर गलती नहीं करूँगी। मँगरू आ जाये तुम लोग फौरन यहाँ से चले जाओ। मैं और कुछ नहीं जानती हूँ।"

अब गौरी की भी जबान खुली। वह बोली कम्पित स्वर में जल्दी-जल्दी—"मैंने क्या किया है माँ? कौन-सी बुराई कर दी जो आप बिगड़ रही हैं। भगवान जानता है जो मैंने कभी कौशल को बुरी निगाह से देखा हो। मैं···।"

"देखो गौरी चुप रहो। मेरे मुँह न लगो। मैं तुम्हें कुछ नहीं कहती। मेरा घर खाली कर दो। दूसरी जगह जाकर रहो। बस! इसी में भलाई है।" कौशल की माँ ने गौरी को आगे नहीं बोलने दिया। गौरी किंकर्तव्यविमूढ़-सी खड़ी थी और कौशल के चेहरे पर भी हवाइयाँ उड़ रही थीं कि माँ को क्या हो गया है। वे अनर्थ करने जा रही हैं। आखिर गौरी ने क्या बिगाड़ा है जो उस पर इतनी नाराज हो रही हैं। मालूम होता है कि किसी ने उनके कान खूब अच्छी तरह भरे हैं तभी बहक रही हैं। परिस्थिति को काबू में लाना बस से बाहर हो रहा है। आखिर उन को किस तरह समझाया जाये। बहुत कुछ सोचने-विचारने के बाद वह बोला—"मेरी बात तो सुनो माँ तुम तो अपनी ही कहती चली जा रही हो। बुलाओ अपनी पड़ोसिन और उसकी बिन्दो बुआ को। मैं भी सुनूँ कि वे क्या कहती हैं। आज तक मैंने दुनिया में यही देखा और पाया है कि दूसरे की बुराई लोग बड़ी जल्दी करने लगते हैं और अच्छाई के बोल-बोलना वे जानते ही नहीं।"

इस पर माँ बेटे को झाड़ बताकर बोलीं—"तुमसे कह दिया कौशल

कि मुझसे बात न करो। तुम गए नहीं यहां से। मैंने धूप में बाल सफेद नहीं किए हैं। जमाने की नस-नस पहचानती हूं। तुम अभी लड़के हो। तुमने दुनिया नहीं देखी। मैं कहती हूँ जाओ। मेरे सामने से हट जाओ? मैं···।" "क्या है कौशल की माँ? क्या हाय-हाय मचा रखी है?" यह कहते हुए कौशल के बाप भी वहाँ आ गये।

तब कौशल की माँ दूनी प्रचंड हो गई। वे ऊल-जलूल बकने लगीं। इतने में आ गया वहाँ मँगरू भी। वह विचित्र परिस्थिति देखकर घबड़ा गया और कौशल से पूछने लगा—" क्या हुआ कौशल? माँ बिगड़ क्यों रही हैं?"

कौशल तो बोलते-बोलते ही रह गया। माँ बरस पड़ीं मँगरू पर और कहने लगीं—"पूछते हो क्या हुआ जैसे मैं कुछ जानती ही नहीं। मैं बर्दाश्त नहीं कर सकती कि तुम्हारी औरत कौशल से हँस-हँसकर बातें करें, उसे खराब करे। तुम लोग नीच हो, तुम्हारे यहाँ बुरा-भला सब कुछ चल जाता है; लेकिन हमारे खानदान में बट्टा लग जाएगा। हम लोग बदनाम हो जायेंगे। आज ही मेरा घर खाली कर दो। तुम लोग और कहीं चले जाओ। मैं···।"

"आखिर बात क्या है माँ? मुझे बतलाओ। गौरी ने कुछ कहा है तुम से। उसकी क्या शिकायत है? वह···।"

अभी मँगरू इतना ही कह पाया था कि माँ दाँत पीसकर चिल्ला उठीं। वे बोलीं—"बात-आत कुछ नहीं। मैं जो कहती हूँ वह करो।"

परिस्थिति बिगड़ गई थी सब लोग हक्का-बक्का से खड़े थे। माँ का मुँह चल रहा था। मँगरू घबरा गया। वह सोच रहा था कि आखिर यह रंग में भंग कैसे हो गया। मालूम होता है कि बिन्दो ने मौका पाकर जादू का डंडा फेर दिया है माँ के सिर पर। तभी वे रीझ रही हैं और कोई कारण समझ में नहीं आता।

बाहर चबूतरे पर पड़ोसियों की भीड़ जुटने लगी। यह देख कौशल ने किवाड़े भेड़ लिए। उसके पिता समझाने लगे पत्नी को; लेकिन वे

किसी की न सुन अपनी कह रही थीं। गौरी को ऐसा लग रहा था कि उसका सिर चकरा रहा है। उसे गश आ जाएगा और वह अभी गिर पड़ेगी।

: ६६ :

किसी तरह कौशल के बाप ने पत्नी का मुँह बन्द किया। गौरी रो-रोकर उनके सामने अपनी सफाई देने लगी और जब बिन्दो का नाम सुना कि यह सब लगाई-बुझाई उसकी है तो मंगल कहने लगा अपनी कहानी आरम्भ से लेकर अब तक की। इसके बाद कौशल ने जैसे ही बोलने के लिए मुँह खोला वैसे ही बाप का आदेश मिला कि जाओ पड़ोस के घर से बिन्दो को बुला लाओ। देखूँ वह क्या कहती है।

कौशल जब बिन्दो को बुलाने गया तो वह सिटपिटा गई। वह आई पड़ोसिन के साथ। उसे देखते ही कौशल की माँ कहने लगी—"लो पूछ लो कि गौरी कैसी है। बिन्दो अभी बता देगी।"

लेकिन कौशल के बाप ने धीरज से काम लिया। उन्होंने चुपचाप सुन लिया जो कुछ बिन्दो ने कहा और फिर कुछ सोचते हुए बोले—"ठीक है तुम्हारा कहना कि गौरी बदचलन है, वह आवारा है; लेकिन इसका क्या सबूत है तुम्हारे पास कि उसकी निगाह कौशल पर है, वह उस पर डोरे डाल रही है?"

"सबूत। सबूत तो मेरे पास कुछ नहीं है। मैं यही जानती हूँ कि गौरी जहाँ रहेगी वहाँ आग लगायेगी, बसा हुआ घर उजाड़ देगी। अब आप जानें और आपका काम। मैं चली, मुझसे कोई मतलब नहीं है।" यह कहकर बिन्दो जाने को उद्यत हुई। इतने में उसका मार्ग रोककर खड़ा हो गया कौशल और तेज गले से बोला—"देखो बिन्दो हवा में गाँठें बाँधना छोड़ दो। लगाई-बुझाई की आदत बहुत-बुरी होती है, इसमें आदमी खतरा उठा जाता है। मैं तो यह कहूँगा कि सारे झगड़ों की जड़ तुम हो। क्या हक था तुम्हें जो तुमने मंगल के घर पर कब्जा कर लिया?

उसे गांव में नहीं टिकने दिया। गौरी को बदनाम किया। सब बुरे हैं एक तुम बहुत अच्छी हो।"

बिन्दो की देह में चीटियां-सी काटने लगीं। उसकी भतीज बहू बड़-बड़ाने लगी और वह स्वयं कहने लगी कौशल से—"देखो जी तुम जबान बन्द रखो। औरतों से गैर मर्द इस तरह बातें नहीं करते जैसे तुम गाल बजा रहे हो। मैं जानती हूं कि गौरी ने तुम्हें अपने मोहन जाल में फंसा रखा है। इसीलिए मुझे उपदेश दे रहे हो। जैसी वह हरजाई है मुझे तुम भी वैसे ही लफंगे मालूम होते हो।"

"मैं कहता हूं चुप हो जाओ बिन्दो। तुम बहुत आगे बढ़ रही हो। मुझे लफंगा बनाती हो और तुम्हें शर्म नहीं आती झूठ बोलते। पिछले जन्म में जो पाप किये थे उसके फलस्वरूप रँड़ापा भुगत रही हो और इस जन्म के पाप तो तुम्हारे ऐसे हैं कि नर्क में भी तुम्हे जगह नहीं मिलेगी। झूठ बोलने वाले के कीड़े पड़ते हैं। वह कोढ़ी हो जाता है। मैं चलूंगा तुम्हारे साथ गांव मँगरू और गौरी को लेकर। वहां तुम्हारा बही खाता देखूंगा और पूछूंगा गांव के मुखिया से, बात करूंगा सरपंच से। मैं पंचों की बोलती बन्द कर दूंगा। तुम लोग पैसे के आगे गरीब को आदमी भी नहीं समझते। कितने बड़े दुःख की बात है। खुद पाप करो और दोष दूसरों के लिए मढ़ो यह कहां की इन्सानियत है। एक शिगूफा बना लिया कि साहब गौरी बदचलन है।"

कौशल का जब मुंह खुला तो सब खामोश हो गये। किसी की हिम्मत नहीं पड़ी जो उससे तर्क करता। उसकी मां भी समझ गई कि बिन्दो भली स्त्री न होकर एक कुटनी है, वह पराये घर बिगाड़ती है।

कौशल के पिता भी तथ्य को समझ गये कि मँगरू को तबाह और परेशान करने में सबसे बड़ा हाथ बिन्दो का ही है। वे बोले—"कल सवेरे ही हम सब लोग पार्वतीपुर चलेंगे। वहां पता करेंगे कि मँगरू और गौरी गलत हैं अथवा गांव वाले; क्योंकि बिन्दो की बातों में कोई बल नहीं है। वे व्यर्थ जैसी मालूम हो रही हैं।"

इस पर मँगरू और गौरी के चेहरे तो खिल उठे; लेकिन बिन्दो तथा उसकी वह दोनों बड़बड़ाने लगी। उनका मुँह पाँच कोने का बन गया। वे तीर की भाँति वहाँ से चली गईं। ठीक उसी समय कौशल की माँ के मुँह से निकल पड़ा—"झूठ बोलने वाला पहले अपनी सफाई देता है और जब बात बनती नहीं बिगड़ जाती है तो वह तिनगने लगता है बिच्छू की तरह। आखिर बिन्दो से भागते ही तो बना। उसकी बात सच होती तो वह ईंट का जवाब पत्थर से देती। जब मुँह की खा गई तो चल दी जान बचाकर। मैं नहीं जानती थी कि यह जहर बुझी छुरी है। मैं यही समझे बैठी थी कि भले घर की बहू है और भले घर की बेटी। सीधी-सादी गाँव की एक भोली स्त्री है।"

इस पर कौशल मुस्करा पड़ा और हँसने लगे उसके पिता भी। मँगरू और गौरी दोनों शान्त खड़े थे। जैसे कुछ हुआ ही नहीं।

: ६७ :

जिस दिन कौशल के घर में हाय-हाय हुई। उसके चार-पाँच दिन बाद बिन्दो अपने गाँव गई। और कौशल का भी काफिला चला उसके पीछे-पीछे, जिसमें वह था, उसके माँ-बाप और मँगरू तथा गौरी।

गाँव पहुँचते ही मँगरू की भेंट सबसे पहले पुजारी पाठक से हुई। वह उनके पैरों पर गिर पड़ा और छिपकर चले जाने के लिए माफी माँगने लगा। पाठक ने उसे वक्ष से लगा लिया और समझाने लगे। सब लोगों ने वहीं पड़ाव किया। पुजारी पाठक, मंजू और चन्दा अतिथियों की सेवा सुश्रुषा में व्यस्त हो गये।

चन्दा ने बहुत शिकायत की और अपराधिनी ठहराया गौरी को। इस पर गौरी एक ठंडी साँस लेकर बोली कि चन्दा रानी तुम्हें कैसे समझाऊँ कि गरीबों को अपने से औकात में बड़े लोगों की इज्जत बहुत प्यारी होती है। वे उनको आदर की निगाह से देखते हैं, नफरत कभी नहीं करते। मैंने जो चोरी की तुमसे और पाठक दादा से उसका कारण

कुछ और नहीं सिर्फ मजबूरी थी। इसीलिए मैं चली गई। वरना तुम्हें शिकायत का मौका कभी नहीं मिलता।

इस तरह पुजारी पाठक बहुत खुश थे कि मँगरू और गौरी गाँव वापस आ गये हैं। और चन्दा की प्रसन्नता का तो पारावार ही नहीं था कि वह घर में अकेली थी। अब गौरी आ गई है उसका मन बहलाती रहेगी। उसके साथ रहकर वह फूल की तरह खिली रहेगी। ऐसे ही गंजू भी इतना मुदित था कि जिसका नाम नहीं। वह कहने लगा मँगरू से अपने मन की बात कि मँगरू भइया अब अगर तुम शहर जाना भी चाहोगे तो मैं नहीं जाने दूँगा। मुझसे अकेले नहीं रहा जायेगा। मुझे यही लगता है कि तुम मेरे बड़े भाई हो और मुझसे रूठकर चले गये थे। मनौतियाँ मनाने पर आये हो, अब कभी नहीं जा पायोगे।

उस दिन रात तक कौशल के बाप और पुजारी पाठक में खूब बातें हुईं। जिससे बाप-बेटे ने यह थाह पा ली कि वाकई गाँव में मँगरू के साथ ज्यादती हुई है।

सवेरा हुआ। कौशल के कहने से पुजारी पाठकों ने आदमी दौड़ाया। वह रामचरण महतो को अपने साथ लिवा लाया। वहीं मुखिया को भी बुलवाया गया और मजबूर कर दिया गया रामदयाल दादा को कि वे भी वहाँ आयें और कौशल की बातों का जवाब दें, क्योंकि वे गाँव के सरपंच हैं।

सब लोग आ गये। पुजारी पाठक के चबूतरे पर अच्छी खासी भीड़ इकट्ठी हो गई। सफेद जाजम बिछ रही थी, उस पर लोग बैठे थे। जो खड़े थे, वे चबूतरे से नीचे गली में इर्द-गिर्द; क्योंकि तमाशाई थे। एक बार नहीं दो और तीन बार कई आदमी भेजे गये; लेकिन बिन्दो वहाँ नहीं आई। तब कौशल और पुजारी पाठक दोनों उसके घर स्वयं गये।

बिन्दो आई। उसकी गरदन झुक रही थी और वैसे ही दुम दबाये एक ओर बैठा था जंगी। वह मन ही मन पुजारी पाठक और कौशल को

गालियाँ दे रहा था।

कौशल के बाप तथा पुजारी पाठक चुप थे और कौशल गरज रहा था सबके बीच में। वह कह रहा था—"वही खाने के नाम पर बिन्दो मुकर क्यों गई। वही कहती थी कि मेरे पास वही खाता है, उसमें मंगरू का हिसाब लिखा है और यहाँ दूसरी बोली बोल रही है कि मैं किसी को भी रुपया देती हूँ तो लिखती-पढ़ती नहीं। मेरे पास किसी किस्म का कोई हिसाब नहीं रहता। आप लोगों को मालूम होना चाहिए कि अदालत में जबानी जमा-खर्च का कोई मतलब नहीं निकलता। कागज की कार्यवाही के ऊपर ही मुकदमे मामले चलते, सुने जाते और फैसले होते हैं। मंगरू के मकान पर बिन्दो ने जो कब्जा जमा रखा है वह गैर कानूनी है। या तो वह अपना हिसाब सबके सामने लाये या मकान का ताला खोल दे; क्योंकि मंगरू का कहना है कि उसने जितना रुपया बिन्दो से उधार लिया था उसके चौगुने से भी अधिक ब्याज दे चुका है और रुपया फिर भी अदा नहीं हुआ। बड़े ताज्जुब की बात है!"

सब लोग सुन रहे थे। बिन्दो बीच-बीच में बोल उठती; लेकिन उस की कोई नहीं सुनता। लोग उससे चुप रहने की हिदायतें करने लगते।

रामचरण महतो बैठा था डिब्बा-सा मुंह फैलाये। उसके अचरज का कोई परिवार न था। वह सुन रहा था और देख रहा था कि सब लोग होंठ सिये बैठे हैं और कौशल ऐसे बोल रहा है जैसे शाही दरबार में शहन-शाह हुकूमत करता है, मौत और जिन्दगी की सजा देता है, बड़े-बड़े मामलों का फैसला करता है। जहां एक जबान और एक बात के आगे न दूसरी बात होती और न दूसरा मुंह खुलता है। यहाँ पुरानी बखिया उधेली जा रही है। अब मेरी समझ में आया कि मुझे इसीलिए बुलाया गया है। मैं तो जानता था कि पुजारी पाठक ने अपने किसी काम से बुलाया होगा, मगर यहाँ पंचायत जुड़ रही है फैसला हो रहा है। बिन्दो के बाद शायद अब मेरा ही नम्बर आने वाला है। चलूँ चुपके से यहाँ से खिसक जाऊँ। इसी में खैर है; क्योंकि जमात जुड़ने का मतलब यह होता

है कि सौ झूठ भी मिलकर एक झूठ को नहीं छिपा सकते। सच्चाई पर डाला गया पर्दा अपने आप ही फट जाता है।

अपने निश्चयानुसार रामचरण महतो वहाँ से बैठे ही बैठे धीरे-धीरे पीछे की ओर खिसकने लगा। यह देखा पुजारी पाठक ने। दोनों की निगाहें मिल गईं। महतो घबड़ा गया। उसने न आगे देखा और न पीछे। वह भीड़ को चीरता हुआ सिर पर पैर रखकर भागने लगा।

बस ! कौशल दौड़ पड़ा उसके पीछे और थोड़ी ही दूर पर पहुँचते-पहुँचते उसे पकड़ लिया। वह उसकी बाँह पकड़कर चबूतरे पर लाया और पीछे से उसके दोनों कन्धे पकड़ धीरे-धीरे चारों तरफ घुमाता हुआ लोगों से बोला—"आप लोग इसी को भला आदमी कहते हैं इसी का नाम है रामचरण महतो। गौरी इसे छेड़ती थी। वह इससे रुपया उधार लेकर फिर देती नहीं थी। यह बेचारा बड़ा शरीफ था; लेकिन हिम्मत वाले जवान मैदान से भागते नहीं, उनका सीना सामने ही रहता है। यह कायर भाग खड़ा हुआ, जब देखा कि इसकी भी बदमाशियों की पोल खुलने वाली है।"

रामचरण महतो की आँखें नीचे झुक रही थीं, मुँह धुँआ हो रहा था। उसकी सारी देह थर-थर काँप रही थी पत्ते की तरह और कलेजा उसकी धड़कन तो चौगुनी हो चली थी। वह कुछ बोल नहीं रहा था। सहसा कौशल ने उसके दोनों कन्धे घुमाकर उसका मुँह सामने किया। फिर बोला व्यंग्यात्मक लहजे में—"रामचरण, तुम तो मर्द हो आँख से आँख मिलाओ और बताओ कि गौरी बदचलन है या तुम ? तुमने उस पर झूठे इल्जाम लगाये या नहीं ? उसे बदनाम ही नहीं खूब परेशान भी किया। कहो कि अपनी औलाद की कसम खाता हूँ कि गौरी ने मुझसे छेड़खानी की, उसने मुझसे रुपये उधार लिये थे। कहो महतो कहो तुम तो चुप खड़े हो ? इस तरह काम नहीं चलेगा तुम्हें जवाब देना पड़ेगा।"

महतो की नानी मर गई। उसके चेहरे पर मुर्दनी छा रही थी, बोल नहीं निकल रहा था मुँह से। कौशल को आ रहा था क्रोध जिसे वह

चंदा, कौशल की माँ और गौरी आदि सभी बैठी थीं एक ओर जहाँ स्त्रियों का जमघट लग रहा था। अब कौशल भी खामोश था। मुखिया, पुजारी पाठक और कौशल के पिता रामदयाल दादा से कुछ परामर्श कर रहे थे। जिसका प्रभाव यह पड़ा कि पुजारी पाठक के कहने से रामदयाल दादा को खड़ा होना पड़ा सभा में और कहना पड़ा कि विन्दो ने मँगरू के घर पर कब्जा कर रखा है, वह नाजायज है। मँगरू का घर उसे मिलना चाहिए जैसा कि कौशल का कहना है कि कल सवेरे मँगरू के घर का ताला तोड़ दिया जायेगा। वह अपने घर में रहेगा, फिर वह चाहे शहर में रहे या गाँव में, घर उससे कोई नहीं ले सकता। उसका मालिक वही है।

अभी रामदयाल इतना ही कह पाये थे कि विन्दो उठकर खड़ी हो गई। वह अपनी दलील पेश करती हुई बोली—"यह क्या दादा! आप भी गलत फैसला करने लगे। मकान मँगरू कैसे ले सकता है। पहले मेरा कर्ज तो अदा करे।"

इस पर दादा तो बोलते ही रह गये। कौशल उठ खड़ा हुआ और आग्नेय नेत्रों से विन्दो की ओर देखता हुआ तेज गले से बोला—"कैसा रुपया। रुपया तो तुम ले चुकीं। जितना दिया था उसका चौगुना। मकान मँगरू को ही मिलेगा; अगर रोड़ा अटकायेगी तो मैं अदालती कार्यवाही करूँगा। सवेरे तुम्हारी मर्जी हो, घर का ताला खोल देना वरना वह तोड़ा तो जायेगा ही।"

विन्दो हाय-हाय करती रही। उसकी किसी ने नहीं सुनी। आखिर लोगों ने जबरदस्ती उसे बैठा दिया। जंगी टेढ़ी आँखों से घूरता रहा लोगों को और वह बड़बड़ाती रही। रामदयाल दादा और आगे अपनी बात कहने लगे—"गौरी के खिलाफ फैलाई गई उसकी बदनामी झूठी है। महतो अपने आप उसकी सफाई दे गया है। इसलिए गौरी और मँगरू दोनों गाँव में ही रहेंगे।"

इसके बाद रामदयाल दादा ने और भी कई बातें कहीं। किसी ने

पूँ तक नहीं किया। सब लोग देख रहे थे उस नये चेहरे को जिसका न
कौशल था, जो शहर से आया था और जिसकी बातों का प्रभाव लो
पर पड़ कर रह गया।

सभा समाप्त हुई। भीड़ छँट गई। और रात ने जब प्रभात का रू
बदला तो सबसे पहले कौशल ने मुखिया को भेजा बिन्दो के पास कि वह
मँगरू के घर की चाभी दे दे। मुखिया लौट आया। तब सब लोग साथ
गये और कौशल ने अपने हाथों से ताला तोड़ा। गौरी जब घर के
अन्दर प्रविष्ट हुई तो उसका कलेजा हाथ भर का हो गया था और मँगरू
ने आँगन में पहुँच सन्तोष की साँस ली। भोला-भाला रतन माँ की धोती
पकड़कर कहने लगा—"माँ! कितना अच्छा हुआ कि हम लोग फिर
अपने पुराने घर में आ गये। ये बिन्दो बुआ बड़ी खराब हैं। हमारे घर में
ताला डाल दिया था और कौशल चाचा बहुत अच्छे हैं। चाचा ने बिन्दो
को खूब डाँटा था। अब मैं यहीं रहूँगा मुझे यहीं बहुत अच्छा लगता है।"

इस पर गौरी हँस दी। उसका स्नेह भरा हाथ पहुँच गया पुत्र के
सिर पर और उँगलियाँ बालों पर दौड़ने लगीं। उसने ऊपर दृष्टि उठाई
तो देखा कि मँगरू भी मुस्करा रहा है और सब लोग खड़े हैं।

: ६८ :

कौशल को पार्वतीपुर आये पाँच दिन हो गये थे। वह जाना चाहता
था, लेकिन पुजारी पाठक ने उसे रोक रखा था। वे दो-चार दिन उन
लोगों को अपने यहाँ मेहमान बनाकर रखना चाहते थे। यह उनकी
इच्छा थी।

मँगरू और गौरी का प्रस्ताव कौशल के सामने था कि वे लोग शहर
जायेंगे या यहीं गाँव में रहेंगे। इसके लिए उसने यह निश्चय किया और
उनको सलाह दी कि तुम लोग फिलहाल अभी दस-पाँच दिन तो गाँव में
रहो, फिर शहर आ जाओ, अपना काम देखो। जब मर्जी हो गाँव में
रहो, जब इच्छा हो शहर में। काम हाथ का है ...

सकते हो। मेरी समझ में तो यही आता है और शायद यही ठीक भी रहेगा।

कौशल की बात दम्पति को बहुत पसंद आई। वे दोनों उसे दुआयें देने लगे। उसकी लम्बी जिन्दगी के लिए ईश्वर से भीख माँगने लगे।

पुजारी पाठक भी बहुत खुश थे कौशल से। वे उसके मुँह पर ही उसकी प्रसंसा करते नहीं थकते। कौशल के माँ-बाप को नाज़ था अपने पुत्र पर। वे उसकी तारीफ सुनते और मन ही मन गद्गद होकर रह जाते।

और एक थी चंदा जो कौशल को देखती और देखती ही रह जाती। वह उसकी बातें सुनती तो कान लगाकर रह जाती। उसे लगता था कि यह धरती पर कोई देवदूत उतर आया है शान्ति का संदेश लेकर। इसकी वाणी में जादू है। वाकई कौशल अनोखा है ऐसा मैने न कभी देखा और न सुना।

और कौशल वह चौंक जाता जब देखता कि दो आँखें हिरणी जैसी उसे एक टक निहार रही हैं। उसके मुँह से धीरे से निकल जाता—"चंदा तुम।"

उत्तर मिलता संकोच भरा शरमाया हुआ—"हाँ मैं। कौशल बाबू को वही मुखड़ा कौशल को हँसता हुआ चाँद-सा नजर आता, स्वर निकलता वीणा विनिन्दित-सा—"देखिये रुक गये न आप। मैं जानती थी कि बापू आपको अभी नहीं जाने देंगे।"

कौशल मंदस्मित बिखेर कर रह जाता और चंदा गड़ जाती लाज से। दोनों एक दूसरे के लिये आकर्षण बन रहे थे। वह उसके भोलेपन पर मुग्ध था और वह थी रीझी गुणों पर। मन का सोदा था, न कोई भाव था और न कोई मोल।

× × ×

आठवें दिन कौशल की जाने की पक्की तैयारी थी ठीक सवेरे ही। और रात को बातें हुईं उसकी पुजारी पाठक से जिसमें उसने पाया कि

पाठक की बहुत बड़ी अभिलाषा है कि उनके गाँव में जागरण की वेला आये सब लोग जागें। क्योंकि रात बीत गई है, सवेरा हो चुका है और सूरज ने भी आँखें खोल दी हैं। अब कोई पीछे नहीं रह सकता। गाँव की सारी समस्याओं को एक बृहत रूप देना ही अच्छा होगा। सुधार की योजनायें बनाना और उन पर चलना समझदारी होगी। उसने आश्वासन दिया और वचन बद्ध हो गया कि वह प्रति रविवार को पार्वतीपुर आयेगा। इसके अलावा अन्य छुट्टियाँ भी यहीं व्यतीत करेगा। उससे जो बन सकेगा पूरा-पूरा सहयोग देगा; क्योंकि विकास से उसे घना लगाव है, नव-निर्माण से विशेष प्रेम, और वह चाहता है जनजागरण। उत्थान का वह इच्छुक है, पतन से उसे उतना ही परहेज है जितना एक साधक को राग-रंग से।

सवेरे जब कौशल चला तो उसके माँ-बाप बैलगाड़ी पर आकर बैठ गये। वहाँ मँगरू और गोरी, पुजारी पाठक आदि लोग खड़े उनसे बातें कर रहे थे। चंदा खड़ी थी चौखट पर। वह निर्निमेष दृष्टि से देख रही थी कौशल को। उसका चेहरा उदास था। कौशल ने उस ओर देखा। वह आगे बढ़ने लगा। तभी चंदा ने धीरे से पुकार दिया—"कौशल बाबू बात तो सुनिये। आप···।"

कौशल घूम पड़ा। वह चंदा के सम्मुख आ खड़ा हो गया और चंदा कहने लगी—"आप जा रहे हैं फिर कब दर्शन होंगे। न जाने कैसा कैसा लग रहा है। मैं···।"

कौशल ने देखा चंदा की आँखें डबडबा आई हैं। वह बोला—"वह तो सुना चंदा कि हर इतवार को मैं तुम्हारे सामने होऊँगा। मुझ परदेसी से तुम्हें इतना लगाव हो जायेगा, यह मैंने कल्पना भी नहीं की थी। बस ! अब चला। मैं आऊँगा। मेरी राह देखना चंदा।" यह कहते-कहते कौशल जैसे ही मुड़ा वैसे ही चंदा की आँखों से दो बड़े-बड़े आँसू धरती पर चू पड़े। उसका कंठ भर आया और मुँह से निकल पड़ा—"रुकिये, बात सुनिये कौशल बाबू।"

कौशल घूमा। उसने देखा चंदा रो रही है। वह मुस्करा दिया और हँसमुख मुद्रा में बोला—"रोती हो चंदा। मैं तुम्हें हँसते हुए देखना चाहता हूँ। मैं तुम्हारी सुकुमार भावनाओं को पहचानता हूँ। रोकर नहीं हँसकर विदा दो चंदा, कौशल तभी जायेगा।

बात समाप्त करने के साथ कौशल मुस्करा दिया और फिर मुस्क-राता ही रहा। चंदा ने भरसक प्रयत्न किया अपने को संयत करने का। उसने आँचल से आँसू पोंछे, फिर कौशल की आँखों में झाँका। वह हँस रही थी। बस फिर मुस्करा पड़ी चंदा और कौशल वहाँ से विदा हो गया।

: ६९ :

मन जब किसी ओर आकर्षित होता है तो फिर डोर सम्हाले नहीं सम्हलती। आकर्षण बढ़ता चला जाता है, एक व्यक्ति दूसरे का हो जाता है। एक विश्वास दूसरे का विश्वास बन अपनी राह तय करने लगता है। यही मंजिल प्यार की होती है। प्रीति की रीति का हर ढंग नया होता है, अनोखा होता है। अमर बेल की भांति बिना मूल का यह पौधा पनपता है। उसकी ओर सारा जग आकर्षित होकर रह जाता है। चंदा कौशल को स्वप्न में देखती और जागरण की वेला में वह उसका स्मरण करते नहीं थकती। वह एक क्षण के लिये अपनी पलकें मूंद लेती। उसे लगता कि कौशल सामने खड़ा है और कह रहा है—"मेरी राह देखना चंदा, मैं आऊँगा। रोकर नहीं हँसकर विदा दो, कौशल तभी जायेगा।"

ऐसी स्थिति थी चंदा की। उसकी दृष्टि में कौशल का महत्व किसी देवता से कम नहीं था। वह मन ही मन उसको अर्घ्य चढ़ाया करती। वह याद करती उसके व्यक्तित्व को जिसने उसे प्रभावित किया और जीता था उसकी वाणी ने, चंदा के भोले मन को। तभी उसका सुकुमार हृदय फूल की तरह खिलकर रह गया था।

जब कौशल आया। वह अकेला था। पुजारी पाठक कहीं गये थे और गंजू जानवरों को पानी पिलाने तालाब पर ले गया था। चंदा आँगन

में खड़ी थी। वह खिल गई कौशल को देखते ही और अपनी दूधिया बत्तीसी बाहर निकालती हुई हँसोड़ मुद्रा में बोली—"आप आ गये कौशल बाबू। मै जानती थी कि जरूर आओगे। आप नही समझ सकते कि इस समय मैं कितनी खुश हूँ। आइये, बैठिये। मैं अभी आपके लिये नाश्ता तैयार करती हूँ। बापू खेतो पर गये हैं और गंड्डू देर हुई जानवरों को ले गया है. कहीं बैठा तम्बाकू पी रहा होगा। कैसे रहे आप? क्या···।"

सहसा चंदा बीच में रुक गई और कौशल के मुख पर अपनी दृष्टि टिका व्यस्त गले से कहने लगी—"अरे आप तो बोलते ही नही, बिलकुल चुप बैठे हैं। आप दुबले हो गये, एक ही हफ्ते मे। यह···।'

लेकिन कौशल फिर भी चुप रहा। तब चंदा कुछ चिढ़ गई, वह रूठे स्वर मे बोली—"आप तो बोलते ही नही।"

अब कौशल हँस पड़ा और हँसते-हँसते बोला—"यही राह देख रहा था कि तुम्हारे सवालों का तांता टूटे तब मैं जवाब दूँ। तुमने मुझे बोलने का मौका ही कहां दिया, फिर शिकायत कैसे करती हो। बोलो गलती है तुम्हारी या नही ?"

"नही! मेरी नही। आपकी गलती है कि आप देर से बोले।" यह कहते-कहते चंदा खुल-खुल करके हँस पड़ी। उसके गोरे माथे पर ठीक इसी समय एक नागिन-सी लट आकर झूलने लगी। हवा का एक मासूम झोंका आकर उसे स्पर्श कर गया। वह सकुची और सिमट कर रह गई; फिर कनखियों से देखने लगी कौशल को। वह मुस्करा रहा था।

"आप-आप सुनते-सुनते मैं तंग आ गया हूँ चंदा। मुझे आप न कह कर तुम कहा करो। मैं जानता हूँ कि तुम कवि की कविता हो। सुकुमार भावनायें और नूतन योजनायें तुमसे उत्पत्ति लेंगी। मेरे जनजागरण के कामो मे तुम सहयोग दोगी। खड़ी क्यों हो, बैठ जाओ। अब की बार मैं तैयार होकर आया हूँ। जैसी पाठक दादा की इच्छा है कि उनका गाँव एक खुशहाल गाँव के नाम से पुकारा जाये। यहाँ जितनी गरीबी, मुसी-

बन और गंदगी फैली है, वह सब साफ हो जाये। गाँव में ऐसा कोई न रहे जिसे तबाह कहा जाये। सहयोग, सहकारिता और शान्ति को लेकर ही मैं अपने इस उद्देश्य में सफल हो सकता हूँ और यही सोचता हूँ तुम्हारे लिये। तुम मेरी मंजिल आसान करोगी, मेरी समस्याओं का समाधान बनोगी। मुझे और कुछ नहीं चाहिए चंदा। मैंने तुम्हारा बहुत बड़ा विश्वास पा लिया है बस यही बहुत है।"

कौशल कह रहा था। चंदा उसके निकट बैठ गई। उसके हँसोड़ मुख पर अब गाम्भीर्य की छाप लग रही थी। दिन के दस बजे थे। आधे आँगन में धूप छा गई थी। चंदा निहार रही थी कौशल के आनन को। बहुत देर बाद धीरे से उसके मुँह से निकला—"तुमने मुझे जमीन से उठाकर आसमान पर पहुँचा दिया। इतना महत्व न दो। मैं किसी भी योग्य नहीं हूँ। हाँ, तुम्हारे विचारों से सहमत हूँ और उन्हीं से प्रभावित हूँ। क्योंकि तुम सन्मार्गी हो और ऐसा व्यक्ति कभी दूसरे का अहित नहीं कर सकता।"

कौशल और चंदा की दोनों की बातों का अन्त तब हुआ जब पुजारी पाठक ने आँगन में प्रवेश किया। आते ही कौशल ने उनके चरण स्पर्श किये। वे गदगद हो गए। उन्होंने दोनों हाथ बढ़ा कौशल को अपने वक्ष से लगा लिया। तब चंदा का केवल मन ही नहीं उसके हृदय का कोना-कोना हँस रहा था। वह समझ बैठी थी कौशल को देवता जो मनुष्य से बहुत ऊँचा होता है। उसके जीवन का स्तर मानवीय न होकर दैवी होता है।

× × ×

दोपहर को भोजन करने के बाद कौशल ने तनिक भी देर के लिए पीठ नहीं लगाई। वह बराबर व्यस्त रहा पुजारी पाठक के साथ बातों में। चंदा वहां बैठी रही। उसी समय गंजू को भेजकर पाठक ने मुखिया और रामदयाल दादा को बुलवाया। इसके अतिरिक्त दो-तीन वयोवृद्ध सज्जन और बुलाये गए जो गांव की तबाही को रोकने के लिए पूर्णतया

जागरूक थे। कौशल की सलाह सबको पसन्द आ रही थी। उसने कहा कि आज तीसरे पहर चार बजे गांव के बीचों-बीच जहां हाट लगती है वहां एक सभा होगी और गांव वालों से यह विनय की जाएगी कि वे गांव को खुशहाल बनाने के लिए मन, कर्म और वचन तीनों से जुट जायें। गरीबी ईश्वर की देन नहीं वह आदमी की कमजोरी है।

पूर्व योजना के अनुसार जहां पर हफ्ते में एक दिन हाट लगती थी उसी छोटे से मैदान में गांव वाले इकट्ठा हुए। दो तख्ते डाले गये बीचों-बीच में। गणमान्य व्यक्ति उन पर बैठे थे। सरपंच की हैसियत से थोड़ी-सी बातें कह रामदयाल दादा बैठ गये। कौशल खड़ा हुआ, लोग सुनने लगे और उसका भाषण चलने लगा—"आप लोग जानते होंगे कि शहर तरक्की पर रहते हैं और गांव पिछड़ जाते हैं सब बातों में। इसका कारण है बहुत छोटा-सा कि शहर में काम होता है और गांव वाले अक्सर बेकार रहते हैं। हालांकि आजकल शहरों में भी बेकारी बढ़ रही है; लेकिन इतनी नहीं जितनी गांवों में। गांव को नई जिन्दगी एक नये सिरे से नहीं दी जा सकती। उसकी बिगड़ी हुई राहों को सुधारा जा सकता है। इसके लिए आपको भेदभाव को छोड़ सबको जुटकर काम करना चाहिए। इससे लाभ यह होगा कि एक तो सबके मन में एकता की भावना घर कर जाएगी, किसी की किसी से दुश्मनी नहीं रहेगी और आप लोग बच जायेंगे बड़ी-बड़ी बाधाओं से। गांव में तनिक सी बात पर लाठी चल जाती है। अदालत, कचहरी में लोग घर फूंक तमाशा देखते हैं। वे बरबाद हो जाते हैं। जब सहयोग रहेगा सबको सफाई भी होगी और क्या बताएँ भाई मिलकर काम करने से आप लोग बच जायेंगे भयंकर बीमारियों से। गांव के तालाब और पोखरों में अगर गन्दगी न रहे तो मच्छरों को पनपने का मौका न मिले और न कभी मलेरिया फैले। होता यह है कि किसी का भी ध्यान इस ओर नहीं जाता। आप लोगों को चाहिए कि यह नियम बना लें कि गांव में प्रतिदिन सफाई का काम आठ-दस आदमी जुटकर जरूर करेंगे और हर आदमी का महीने में

सिर्फ एक दिन नम्बर आयेगा इस काम के लिए।"

यह कहकर कौशल तनिक रुका और फिर कहने लगा—"हाँ ! जो बात मैंने अभी कही थी उसके लिए सबसे पहले जरूरी है कि गरीबी अमीरी, ऊँच-नीच और छुआ-छूत के मामलों को बिल्कुल पीछे छोड़ देना होगा। जब हर आदमी काम करेगा तभी सुख की नदियाँ बहेंगी और अन्न उपजेगा इतना कि खाये नहीं चुकेगा। जैसे तालाब-पोखर के लिए मैंने कहा वैसे ही यह भी जरूरी है कि गाँव भर का कूड़ा सवेरे ही एक जगह इकट्ठा हो जाये और उसको फिर पहुँचा दिया जाये गाँव के बाहर। वहाँ वह खाद का काम देगा। वह कई जगहों में न बँटकर एक बहुत बड़ी राशि में होगा। उस खाद को हर ग्रामीण अपनी इच्छानुसार जरूरत पर अपने खेत में डाल सकता है। इस तरह हर आदमी खाद के खर्चे से बच जायेगा। एक पंथ दो काज होंगे। गाँवकी गंदगी दूर हो गई और फायदे का फायदा भी रहा।"

कौशल के समझाने का ढंग इतना सरल था कि प्रत्येक आदमी उस की बात आसानी से समझता जा रहा था। गाँवके बच्चे, बूढ़े और जवान सभी वहाँ इकट्ठे थे। सभी प्रसन्न थे। गोरी दूर खड़ी थी जहाँ कुछ स्त्रियाँ बैठी थी। वह मगन थी। उसके पास बैठी बिन्दो का मुँह तनिक-सा रह गया था। वह मन ही मन कुढ़ रही थी। ऐसे ही पुरुष वर्ग में जहाँ एक ओर मँगरू बहुत प्रसन्न था वहीं दूसरी ओर जंगी के मुँह पर मातम छा रहा था। वह मन ही मन कौशल को बुरा-भला कह रहा था।

और कौशल जादू-सा डाल रहा था लोगों पर। उसकी वाणी में आकर्षण था, वाक् शैली ओज-पूर्ण थी। लोग उसकी बातों से प्रभावित हो रहे थे और वह कह रहा था—"इसी तरह बीज के लिए जो कर्ज काढ़ना पड़ता है और उसके बदले में गरीबों को अपनी पैदावार का आधे से भी अधिक हिस्सा देना पड़ जाता है। उसकी राह एक है कि हर किसान अपनी-अपनी उपज में से फी मन सवा सेर गल्ला निकाले।

वह इकट्ठा ही एक जिम्मेदार आदमी के पास रहे जो गाँव का विश्वासपात्र हो। बस। बीज के समय सभी लोग गल्ला उसमें से लें और अपने खेत बोयें। फिर कोई जरूरत नहीं रह जाती है महाजन से कर्ज काढ़ने की। कपड़े और बरतनों के लिए गाँव वाले अपना गल्ला सस्ते दामों पर बेचते हैं। उसमें उन्हें घाटा रहता है। इसके लिए एक तरीका है कि खेती के अलावा प्रत्येक व्यक्ति को कुछ न कुछ दस्तकारी का भी काम जरूर करना चाहिये। आजकल हमारी सरकार हस्तकला उद्योग को बहुत बढ़ावा दे रही है। सोचिये तो आप लोग क्या नहीं कर सकते, सब कर सकते हैं। चर्खा चलाइये, कपास ओटिये, डलिया, झल्ली, डोल-चियाँ बुनिये, झाड़ और अरहट की लगों को। मिरकियो के पाल बनाइये। पंखे, चटाइयाँ और शहर में काम आने वाली चीजें बनाइये। बस! पैसा ही पैसा नजर आयेगा और गाँव का एक दाना अन्न कहीं नहीं जायेगा। इसके अलावा जब आप लोग इस बात पर कमर कसकर तैयार हो जायेंगे कि हमें आगे बढ़ना है और अपने गाँव को स्वर्ग बनाना है तो फिर मैं हाथ करघा उद्योग चलाऊँगा। आपके गाँव में पाठशाला है ही। हर आदमी को शिक्षित होना चाहिए। इसके लिए मेरी सबसे प्रार्थना है कि अपने बच्चों को स्कूल भेजना न भूलें, क्योंकि अशिक्षा ही हमारी गरीबी और तबाही का सबसे बड़ा कारण है।"

कौशल देर तक बोलता रहा। लोग मंत्र-मुग्ध से सुनते रहे। फिर जब सूरज डूब गया तब सभा विसर्जित हुई और यह तय हुआ कि अगले इतवार को एक कार्यकारिणी सभा होगी जिसके लिए आदमियों के नाम चुन लिए जायेंगे। लोग बहुत खुश थे। पुजारी पाठक की प्रसन्नता का तो कहना ही क्या था और चंदा का मन मयूर नाच रहा था मगन होकर; क्योंकि कौशल उसके समक्ष आषाढ़ बनकर बरस रहा था।

: ७० :

अगले इतवार को कौशल के माँ-बाप भी पार्वतीपुर आये। उस

दिन भी कौशल का एक महत्वपूर्ण भाषण हुआ। गाँव वालों पर उसका ऐसा प्रभाव पड़ा कि वे उसको अपना नेता मानने लगे। ग्राम पंचायत को एक वृहत रूप दिया गया। कार्यकारिणी सभा का भी चुनाव हो गया। उसके सदस्यों की सूची बना ली गई और गाँव में सफाई का कार्य आरम्भ हो गया।

अब गाँव में चमक आ रही थी धीरे-धीरे। गाँव वाले आपस में बातें करते कि कौशल ने हम लोगों को नई जिन्दगी देने की कोशिश की है। ईश्वर करे वह अपने इस काम में पूरी तरह सफल हो। सबसे जरूरी चीज यह थी कि गाँव की फूट को दूर किया जाये। जब तक सबके मन में ऐक्य की भावना नहीं होगी, तब तक न तो कोई आगे बढ़ सकता है और न कोई खुशहाल रह सकता है। कौशल अपनी हर बात में यही जोर देता रहता कि सहयोग और सहकारिता ही पिछड़े हुए लोगों को आगे लाकर खड़ा कर सकती है।

कुछ दिन बाद कौशल के माँ-बाप शहर चले गये। उनके साथ गये गौरी और मँगरू भी। कौशल गाँव में ही रह गया। वह जो भी योजना बनाता सर्वसम्मति से उस पर विचार किया जाता और फिर उसको कार्य रूप में परिणित करने के लिए रुपये पुजारी पाठक लगाते। गाँव के समर्थ लोग चन्दा देते और उस पर भी अगर आवश्यकता पूरी नहीं होती तो पूँजी लगती थी कौशल के पिता की। वह धनी बाप का बेटा था अतः उसके सामने अर्थ सम्बन्धी कठिनाइयाँ नहीं थीं।

अब कौशल प्रायः सप्ताह में चार दिन गाँव में ही रहता। दो-तीन दिन के लिए शहर जाता। यही स्थिति मँगरू और गौरी की भी थी। दोनों उसके साथ ही साथ डोलते थे। कौशल ने डिस्ट्रिक्ट बोर्ड से लिखा-पढ़ी करके एक छोटा-सा अस्पताल खुलवाया गाँव में। इससे वहाँ के लोगों को बड़ी सुविधा हो गई। वे उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे। इसी तरह एक पुस्तकालय खोला गया। उसमें दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक और मासिक पत्रों के मँगाने की व्यवस्था की गई।

गाँव के बदले हुए रूप को देखकर हर ग्रामीण खुश था और कौशल अपनी योजनाओं को लेकर आगे बढ़ रहा था। अध्यापन कार्य उसके मार्ग में बाधा उपस्थिति करता। अतः विवश होकर उसने नौकरी से त्याग-पत्र दे दिया और तन-मन-धन से जुट गया पार्वतीपुर में आकर नव-निर्माण की योजनाओं में।

अब गाँव में सफाई ऐसी रहती थी कि हर जगह देखने में भली प्रतीत होती। सारे गाँव का कूड़ा गाँव के बाहर डाला जाता। ढोरों को लोग तालाब और पोखर का गंदा पानी न पिलाकर कुएँ का पिलाते। इस तरह वे भी बीमारी का शिकार नहीं होते। गाँव के बाहर की पगडंडियाँ साफ, सुथरी और परिष्कृत कर दी गई थीं। कच्ची सड़क जो बिल्कुल खस्ता हालत में थी उसके लिए कौशल ने सबके सम्मुख श्रमदान योजना को रखा। गाँव के सब लोग जुट गये और सड़क की मरम्मत तीन-चार दिन में हो गई।

इन सब बातों को लेकर कौशल गाँव वालों की आँखों का तारा बन गया। लोग मुँह पर ही नहीं पीठ पीछे भी उसकी तारिफ के पुल बाँधते रहते। चन्दा जब यह सुनती तो उसका कलेजा हाथ भर का हो जाता और मन वही पुरानी बात दोहराने लगता कि वास्तव में कौशल मनुष्य नहीं देवता है।

: ७१ :

इर्द-गिर्द के गाँवों में पार्वतीपुर की चर्चा जोर पकड़ रही थी। लोग कौशल का नाम सुनने उससे मिलने आते और बहुत कुछ सीखकर चले जाते। इस तरह आस-पास के सभी गाँवों में जागरण का दौर चल रहा था।

और पार्वतीपुर में ट्यूबवेल (जमीन से पानी निकालने का नल)भी लग गया था। सरकार.की ओरसे सिंचाई को अत्यधिक सुलभ बना दिया गया। खरीफ की फसल के बाद रबी की भी पैदावार बहुत अच्छी हुई।

उत्तम खाद, समुचित व्यवस्था से उत्पन्न हुई। इस वर्ष की उपज संतोष-जनक थी। सभी लोग प्रसन्न थे।

बच्चों और वयस्कों के लिए खेल-कूद के समान भी जुटाये गये। व्यायामशाला का उद्घाटन पुजारी पाठक ने किया। ऐसे ही हथकरघे का प्रचार किया कौशल ने गाँव के घर-घर में। हस्तकला में लोग अलग दक्ष हो रहे थे। दो साल हो चुके थे। कौशल के प्रयत्न फल-फूल रहे थे। गौरी और मँगरू की गरीबी पता नहीं कहाँ पयान कर गई थी। दम्पति दिन-रात भूत की तरह जुटकर काम करते। वे कभी नहीं थकते, हमेशा मुस्कराते रहते। वही गाँव पार्वतीपुर जिसमें लोग रोते थे, झींखते थे, एक दूसरे के दुश्मन हो रहे थे, पूँजी कच्चा ही चबाये जा रही थी, श्रमिक को वहीं अब समृद्धि के प्रत्यक्ष दर्शन हो रहे थे।

रतन भी अब बड़ा हो गया था। उसकी उम्र बारह-तेरह वर्ष की थी। वह हमेशा कौशल के साथ रहता। वह अपने आग्रह पर कौशल चाचा को साथ लेकर अपने लिए अम्बर चरखा लाया। बस! फिर क्या था गाँव में उसका भी प्रचार हुआ खूब जोरों से। अब उस गाँव का आदमी गर्व के साथ कह सकता था कि यहाँ क्या नहीं है हमारे गाँव में और हम लोग क्या नहीं कर सकते हैं। पेट के लिए अन्न हम उपजाते ही हैं। अपनी जरूरत का कपड़ा खुद अपने आप तैयार करते हैं। रह गई जो चीजें हम शहर से खरीदते हैं नकद रुपये देकर उसके बदले शहर में ही जाकर बेच आते हैं। अपने यहाँ की वे चीजें जिन पर हमारा एक पैसा भी खर्च नहीं होता। खजूर, झाऊ, नरकुल, सेंठे और सिरकी इनसे शहर वालों की जरूरत की चीजें बनाकर हम उनसे पैसे वसूल करते हैं। इस तरह हमारे गाँव का एक भी पैसा बाहर न जाकर अपने में ही बढ़ता और पनपता है। हमारी खुशहाली का सबसे बड़ा यही कारण है।

× × ×

चंदा और कौशल का स्वाभाविक आकर्षण दिन पर दिन बढ़ता जा रहा था। पुजारी पाठक इससे बहुत प्रसन्न थे और यहाँ तक वे निश्चय

कर चुके थे कि चंदा का ब्याह कौशल के साथ कर देंगे; लेकिन अभी वे इस मामले में चुप थे। न कौशल से ही कुछ कह पाते और न उसके माँ-बाप से।

इधर डोर बढ़ रही थी। चंदा झूल रही थी हवाई झूले पर और हवा का देवता पवन बन कौशल पेंग बढ़ा रहा था। दोनों कन्धे से कन्धा मिलाकर काम करते। वे छोटे से छोटा काम करने में भी तनिक नहीं हिचकते। दोनों की आस्था एक दूसरे के प्रति इतनी दृढ़ अटूट थी कि सूरज बदल सकता था, चाँद बदल सकता था; किन्तु वे कभी बदलने के पक्ष में नहीं रहते। दोनों के चरित्र गाँववालों के लिए एक मिसाल थे, एक नमूना। सब लोग उनसे श्रद्धा करते और यही कहते थे कि ईश्वर करे कि चंदा और कौशल दोनों एक हो जायें तो यह युगल जोड़ी ऐसी लगेगी जैसे राधा और मोहन।

लेकिन जहाँ सब भले थे वहीं एक ओर बुराई भी पनप रही थी धीरे-धीरे। बिन्दो मिसरानी होना पुजारी पाठक की बुराई करती। चंदा के लिए बताती कि यह निर्लज्ज है, मर्दों के साथ घूमती है। गौरी के लिये कहती कि यह तो पक्की बेहया है। उसी ने तो खराब किया है चंदा को। कोई माने या न माने लेकिन मैं तो यह जानती हूँ कि चंदा और कौशल के बीच दाल में काला कुछ जरूर है। देख लेना एक न एक दिन कोई नया गुल जरूर खिलेगा।

लोग बिन्दो की बातों को सुनी-अनसुनी कर जाते। कोई कोई तो उसे मुँह पर ही फटकार देता और यही होता था नगी के साथ भी। वह जब बेसिर पैर की बातें करता लोगों से तो लोग उसे कुत्ता-सा दुत्कार देते। वह खिसिया कर रह जाता और मन ही मन कौशल को कोसने लगता जिसके कारण उसका और उसकी मालकिन का अपमान हो रहा था गाँव में। दोनों की मिट्टी पलीद थी।

: ७२ :

यद्यपि रानी कैकयी बहुत ही समझदार और विदुषी थी; लेकिन फिर भी दुष्ट प्रकृति की मंथरा ने उनके विचारों को एकदम पलट दिया। भलाई की जगह बुराई ने ले ली। जिसे राज्य मिलने वाला था वह वन को चला गया और जो पुत्र मोह में अंधा था वह स्वर्गवासी हुआ। ऐसे ही बिन्दो का गलत और झूठा प्रचार किसी-किसी पर अपना प्रभाव छोड़ने लगा और लोग यह संदेह करने लगे कि कौशल और चंदा दोनों में अनुचित सम्बन्ध है। जब भेद खुलेगा और छिपाये नहीं छिपेगा तब आखिर में वे ब्याह कर लेंगे।

बिन्दो की बातों के आधार पर जब कोई गाँववाला चंदा और कौशल को साथ-साथ देखता तो वह उनकी ओर देखकर रह जाता और देखता ही रहता। सबकी निगाहों में संदेह उतर आया था। लोगों में आपस में गुफ्तगू होती। जहाँ दस-पाँच आदमी जुड़ते वहाँ काना-फूसी चलती और चर्चा फैलती बड़े जोर की कि गौरी तो खराब थी ही उसने चंदा को भी बिगाड़ रखा है। कौशल शहर का आदमी है मनचला। वह चंदा से अपना मन बहला रहा है। दोनों एक दूसरे के हाथों की कठपुतली हो रहे हैं। ये लोग सुधार कर रहे हैं। पहले अपनी तरफ नहीं देखते कि उनका चाल-चलन कैसा है और पुजारी पाठक कितने बेहया हैं जो यह सब अपनी आँखों देखते रहते हैं। एक जवान लड़की जवान आदमी के साथ दिन-रात इधर-उधर घूमती फिरे। इसका मतलब साफ जाहिर हो जाता है कि दोनों की राह अच्छी नहीं दोनों ही बदचलन हैं।

गौरी जिसके मुँह से चंदा और कौशल के बारे में यह अफवाह सुनती तो उसे उसी समय मुँह पर ही फटकार देती और मंगरू ऐसी बातें सुनते ही आग-बबूला हो जाता। वह लोगों को पूरी बात भी नहीं कहने देता, बीच में ही काट देता कि जाओ तुम सब लोग बड़े परमहंस हो। चंदा बुरी है, कौशल खराब है और तुम सब लोग बड़े अच्छे हो। करो क्या, जिसके पास कोई काम नहीं होता है वह इधर की बातें उधर

करने की निन्दा किया करता है। मैं चंदा और कौशल के खिलाफ एक बात भी सुनना नहीं चाहता हूँ। जाओ, तुम लोग चले जाओ। मैं ऐसे लोगों का मुँह भी देखना पसन्द नहीं करता।

ऐसे ही रोड़ लड़ पड़ता था लोगों से। तब पुजारी पाठक उसे समझाते और कहते कि भई दुनिया को बकने दो, तुम अपना काम करो। मारने वाले का हाथ सब कोई पकड़ लेता है; लेकिन कहने वालों की ज़बानें कोई नहीं काट पाता, कोई नहीं बन्द कर पाता। कुत्ते भौंकते हैं, हाथी अपनी राह चलता है। दुनिया का यह दस्तूर जब से यह बनी, चला आ रहा है और चलता रहेगा। झूठी बदनामी की चिन्ता न कर आदमी को उसकी ओर से लापरवाह हो जाना चाहिये।

अकेले में भी पुजारी पाठक विचार करते तो यही पाते कि चंदा और कौशल की बदनामी के मामले में खामोश रहना ही अच्छा है। मैं जल्दी ही इस काम को कर डालूँगा। अगली सहालगी में दोनों का ब्याह हो जायेगा। तब सबके मुँह अपने आप ही बन्द हो जायेंगे। अभी बीच में टाँग डालने का मतलब यह निकलेगा कि मैं सिर से लेकर पाँव तक उसमें सन जाऊँगा और दुनिया मेरी हँसी उड़ायेगी।

एक तो पुजारी पाठक थे पके हुए पान। उन्हें दुनिया का कड़ुवा और मीठा अनुभव था। इसके अलावा दूसरी बात यह थी कि पुरुष बदनामी से उतना नहीं डरता है जितना नारी। चन्दा की आत्मा बिलबिला रही थी। वह नहीं सुन पाती थी अपनी बदनामी के बोल। इस सम्बन्ध में वह बाप से भी कुछ नहीं कह पाती और न कहती कौशल से ही कि मुझ से दूर-दूर रहा करो। लोग हमारे-तुम्हारे सम्बन्ध को अच्छा न कह कर बुरा बताते हैं। उसका ज्ञान साथी बनने से इन्कार कर रहा था, मन भटक रहा था कि किधर जाये। वह जब किसी के मुँह से कुछ भी सुनती तो अपने दोनों कानों पर हाथ रख लेती। उस समय उसका अन्तर छिन्न-भिन्न होकर रह जाता।

: ७३ :

यद्यपि रात चाँदनी थी; लेकिन वह भयानक लग रही थी। बरसात का महीना था। नदी, नाले, ताल, पोखर ऊपर तक भर रहे थे। धरती के भीतर रहने वाले विषैले जानवर बाहर निकल आये थे। उनके बिलों में पानी भर गया था। एक ओर झाबर से किनारे बैठे मेंढक टर्र-टें टर्र-टें की बोली बोल रहे थे और दूसरी ओर कोई तड़फ रहा था साँप के मुँह में। झिल्ली और झींगुरों की शहनाई जहाँ बज रही थी वहीं रो रहा था वन बिलाव। चमगादड़ चीं-चीं करते हुए उड़ रहे थे, सब कुछ मिलाकर झाबर पर बहुत भयानक लगता था। ऐसे में ही युवती घुटनों तक पानी मँझाती उतर पड़ी झाबर में। तब किनारे पर बैठे मेंढक झम्म-झम्म पानी में कूद पड़े।

ऊपर से उड़ती हुई चमगादड़ों की एक टोली निकल गई। युवती की दृष्टि सामने थी। वह कटि-पर्यन्त जल में पहुँच तनिक रुकी, ठिठकी; इधर-उधर चारों ओर दृष्टि दौड़ाई, फिर आगे बढ़ी और बढ़ती गई। पानी वक्षस्थल तक था। युवती खड़ी थी और सियार बोल रहे थे दूरी पर हुआ-हुआ।

युवती का साहस जैसे कुछ थकता फिर हिम्मत करता। वह खड़ी थी, उसकी गतिविधि यह बता रही थी कि वह बहुत परेशान है, अभी तक अपने निश्चय को दृढ़ नहीं कर पाई है।

सहसा तनिक देर में ही प्रकृति ने अपना रूप बदल दिया। आकाश पर जहाँ-तहाँ हलके-हलके रुई के पहल जैसे बादल थे। अब चांद छिप गया और आसमान पर काले बादलों का राज्य हो गया। पानी बरसने लगा, रात की भयंकरता बढ़ने लगी और युवती एक बार काँप उठी नीचे से लेकर ऊपर तक।

पानी की गति तीव्र हो गई। वह अरर बाँधकर बरस रहा था। रात काली हो गई थी। हाथ को हाथ देखना दुर्लभ हो रहा था। युवती की दृष्टि पथरा-सी गई। उसे कहीं कुछ भी नजर नहीं आ रहा था।

सहसा कोई जोर से चीखा, चिल्लाया; किन्तु पानी के शोर के सम्मुख वह कुछ भी समझ न पाई। तभी जोर से पीछे धमाके की आवाज हुई पानी में। उसने देखा और समझा कि कोई पानी में कूदा है, मेरे पास छप-छप करता आ रहा है। उसने एक हाथ से नथुने दाबे और हिम्मत करके तनिक आगे बढ़ गले-गले तक पानी में डुबकी लगाई।

इतने में पीछे आने वाला जोर से चिल्लाया—'चन्दा ! तुमने बहुत जल्दी की। मैं आ गया हूँ। मैं तुम्हें डूबने नहीं दूंगा चंदा; क्योंकि मैंने तुम्हें मौत नहीं जिन्दगी दी है।"

युवती एक डुबकी खाकर जैसे ही पानी के ऊपर आई वैसे ही जल पर तैर रहे उस युवक कौशल ने उसके बाल पकड़ लिए और हाथ का सहारा दे उससे कहने लगा—"चंदा यह पागलपन करने की तुमने कैसे सोच डाली। मैं तो जानता था कि तुम बहुत समझदार हो; लेकिन तुम नादान हो बच्चों की तरह तुममें तनिक भी बुद्धि नहीं है। आओ चलो बाहर।"

कौशल चंदा को किनारे तक ले आया। तब जाकर वह कुछ स्वस्थ हुई और बोली धीरे-धीरे—"कौशल बाबू आप नहीं जानते कि नारी को लाज कितनी प्यारी होती है। मैं अपनी बदनामी के भार से दबी जा रही हूँ। मेरे लिए एक यही रास्ता था, यही मैंने सोचा था।"

कौशल किनारे पर आकर खड़ा हो गया। चंदा अधमरी-सी हो गई थी। वह बैठ गई और हाँफने लगी। अब पानी धीमा पड़ गया था और लगता था कि रात पूरी हो गई है। थोड़ी देर बाद ही यह बीत जायेगी पानी बन्द हो जायेगा। सवेरा होगा और धरती पर नया सूरज चमकने लगेगा।

: ७४ :

समझा-बुझाकर कौशल चंदा को घर लाया। वहाँ पुजारी पाठक बैठे थे। क्योंकि सवेरा हो गया था। चंदा की चारपाई खाली थी।

इतने में कौशल ने उसके साथ घर में प्रवेश किया। उसने जब सारी बातें पाठक को बतलाई तो वे चौंक गये और जल्दी से घबराकर चंदा को वक्ष से लगा लिया। फिर उसके सिर पर हाथ फेरते हुए बोले—'पगली कहीं की, जान को बहुत सस्ता समझती है। भगवान ने मेरे बुढ़ापे की लाज रख ली। उसे तरस आ गया तभी कौशल भगवान बनकर वहाँ पहुँच गया और तुझे बचा लिया।"

चंदा मौन थी ओर कौशल भी मधुर भर्त्सना कर रहा था उसकी। गंजू यह सब देख और सुन अचरज में पड़ गया कि अरे चंदा बिटिया इतने कच्चे दिल की है कि जान पर खेलने चल दी। तनिक भी आगा-पीछा नहीं सोचा।

चंदा और कौशल दोनों ने गीले कपड़े बदले। फिर जब पाठक वहाँ आ देर तक चंदा को समझाकर चले गये तो कौशल ने पूछा—"चंदा तुम ऐसा दुस्साहस कर बैठोगी यह मैंने कल्पना तक नहीं की थी। तुम मृत्यु को इतना सस्ता समझती हो। आखिर क्यों ? कुछ मुझे भी तो बताया होता। झूठी बदनामी से डरना निरी कायरता है। तुमने अपने को सीमित और संकुचित ही क्यों समझा। समस्याओं से लड़ना ही जिन्दगी है, उनमे भागना बुज़दिली, एक नहीं हज़ार बदनामियाँ फैलें; लेकिन हमें डटकर उनका मुकाबिला करना चाहिए। विजय हमेशा सत्य की ही होनी है; क्योंकि झूठ के पीछे की जड़ नहीं होती।"

चंदा सुनती रही। उसने कौशल के चेहरे पर दृष्टि डाल धीरे-धीरे कहना आरम्भ किया—"न पूछो कौशल बाबू कि नारी जाति कितनी दीन, हीन और दुर्बल है। उसे चाँदनी रात में रुपहली चादर ओढ़ा दी जाती है और कहा जाता है कि यह रूप की अगरी है, सर्वगुण सम्पन्न, सुशीला सती और साध्वी। किन्तु जब अमावस की रात आती है तो उसे काली चादर से ढककर दुनिया यह कहती है कि यह कुलटा है, आचरण भ्रष्ट है। इसका रंग-रूप ही काला और भद्दा नहीं इसकी करतूतें भी काली हैं, मन तथा हृदय भी। बदनामी झूठी हो या सच्ची मुझसे नहीं

सही जाती। मैंने बहुत सोचा कोई रास्ता नहीं मिला तब आत्महत्या करने की सोची। जिसे दुनिया सबसे बड़ा पाप कहती है।"

नंदा की बातें सुन कौशल तनिक गम्भीर होकर बोला—"मानता हूँ नंदा कि तुमने जो कुछ किया वह मजबूरीवश, लेकिन फिर भी समझदार आदमी को एकदम किसी फैसले पर नहीं पहुँच जाना चाहिए। जो कदम सोच-समझकर उठाये जाते हैं, वे कभी गलत नहीं पड़ते। घबराहट से धैर्य खो जाता है। तभी मनुष्य पागलों जैसे कार्य कर बैठता है। मत डरो बदनामी से। दुनिया में अच्छाई के बोल बहुत कम बोले जाते हैं और बुराई तो जैसे सबके हाथ बिक चुकी है। मैं कहता हूँ कि हिम्मत से काम लो नंदा। एक दिन ये ही गाँववाले जो तुम्हारी बुराई करते हैं, तुम्हारे गुण गायेंगे और शर्मिंदा होंगे। अगर तुमने साहस न छोड़ा। आज माँ और पिता जी शहर से आ रहे हैं। मेरी इच्छा है कि कुछ दिनों के लिए तुम उनके साथ कानपुर चली जाओ। यहाँ तुम यों ही व्यर्थ हैरान होती रहोगी। मैं···।"

कौशल अभी इतना ही कह पाया था कि नंदा बीच में बोल उठी—"हाँ मैं जरूर जाऊँगी शहर। यह गाँव और घर जैसे मुझे काटने को दौड़ता है। लगता है कि यहाँ पर कोई अपना नहीं, सभी पराये हैं और निष्ठुर हैं।"

नंदा के मुँह से यह सुनकर कौशल को कुछ संतोष हुआ। वह उससे उसी प्रसंग पर न जाने कितनी देर तक बातें करता रहा।

दोपहर को जब नंदा ने भोजन बनाया। कौशल और पुजारी पाठक खाने बैठे तो दोनों ने पाया कि सब दिन की अपेक्षा नंदा आज बहुत प्रसन्न है। पुजारी पाठक यह समझ रहे थे कि कौशल के समझाने का ही यह प्रभाव है कि नंदा की मानसिक दुर्बलता दूर हो गई है। उसमें साहस का संचार हो गया है। तभी वह हँस रही है।

किन्तु कौशल समझ रहा था नंदा के मन में ये बातें कि वह शहर जायेगी। मेरे घर में रहेगी। इसीलिए उसकी खुशी का पारावार नहीं

है।

तीसरे पहर घर के दरवाजे पर एक बैलगाड़ी आकर रुकी। उस पर से कौशल के माँ-बाप उतरे। पुजारी पाठक ने दम्पति का स्वागत किया। वे लोग दो दिन पार्वतीपुर में रहे। फिर जब शहर लौटे तो उनके साथ कौशल ही नहीं चंदा भी थी। गाँववाले जाती हुई बैलगाड़ी को देख रहे थे। वे आपस में कानाफूसी कर रहे थे। पुजारी पाठक गाड़ी के पीछे-पीछे चल रहे थे। जब गाड़ी गाँव के घूरे पर पहुँची तो उनका सारे का सारा मोह केन्द्रित हो गया चंदा की ओर। वे जैसे ही पीछे की ओर घूमे उनकी आँखें भर आईं और मोह के बड़े-बड़े कीमती आँसू धरती पर चूने लगे, और चंदा, वह मुस्करा रही थी, उसमें नई उमंग थी और वह जा रही थी अपने कौशल के घर जो उसके लिये एक बहुत बड़ी विभूति था।

: ७५ :

कपड़े का मैल हम साबुन लगाकर साफ कर लेते हैं, तन का मैल नहा-धोकर; लेकिन मन का मैल सहज ही नहीं दूर होता। हर आदमी उसे नहीं धो पाता। जो मन में मैल नहीं रखते वे ही संयमी कहे जाते हैं और उन्हें महत्व का पात्र समझा जाता है। अक्सर लोग विचलित हो जाते हैं अपने में ही। वे स्वयं अपना निर्णय अपने आप नहीं कर पाते, भटक जाते हैं। तब मन का मैल बुराई का प्रतीक बन उन्हें पतन की ओर ले जाता है। ऐसे ही नीच प्रवृत्ति वाला अधम धूपचन्द बैठा था बदला लेने की ताक में कि कब मौका मिले और मैं कौशल को नीचा दिखाऊँ। वह कौशल से केवल असंतुष्ट ही नहीं था; बल्कि इस कदर चिढ़ा और खीझा था कि अगर उसका तनिक भी वश चल जाये तो वह उसका दुनिया से नाम-निशान ही मिटा दे।

समय गुजरता गया। धूपचन्द की खिसियाहट बढ़ती गई। वह कुछ नहीं कर पाया गौरी और मँगरू का; क्योंकि दम्पति कौशल के घर में

आकर आबाद हो गये थे। उसके बाद उसने पाया कि मँगरू और गौरी अब वहाँ भी नहीं दिखाई देते। मालूम हुआ कि वे गाँव चले गये और कौशल भी उनके साथ गया है। मन में मैल बढ़ने लगा और धूपचन्द सोचने लगा कि यह गौरी का ही जादू है। जो कौशल उसके गाँव गया। ठीक है, खूबसूरती दुनिया को अच्छी लगती है। गौरी सुन्दर है। तभी कौशल उसके पीछे-पीछे भागता है। अच्छा तो अब समझा कि यही बात थी। तभी कौशल मेरे और मँगरू के झगड़े में बीच में आकर कूदा था। यह बिल्कुल सही है कि इसके पहले ही उसकी गौरी से आँखें चार हो चुकी थी। मैं बदला लूँगा अपनी बेइज्जती का कौशल से। वह है किस हवा में। मैं उसे नेस्तनाबूद कर दूँगा।

इस तरह प्रतिशोध और प्रतिहिंसा की भावनायें धूपचन्द के मन में प्रबल होती चली गईं। वह एक बार नहीं, कई बार गया रात के अँधेरे में कौशल के घर; किन्तु कौशल नहीं मिला, वह लौट आया। वह जब जाता तो टेंट में बड़ा-सा चाकू खोंसकर, लेकिन जब वापस आता तो उस चाकू को इतनी उपेक्षा से फेंक देता जैसे वह बिल्कुल व्यर्थ-सा हो।

अवसर की ताक में रहने वाले हमेशा नहीं चूकते। कभी बाजी उनके हाथ भी लगती है। चाचंगीपुर से चला आई थी, कौशल और उसके माँ-बाप! सभी सो रहे थे गहरी निद्रा में। आसमान पर कालिमा पुत रही थी। पानी बरस रहा था नन्ही-नन्ही बूंदों में। दूसरी मंजिल पर एक कमरे में चन्दा लेटी थी, पास ही कौशल की माँ की चारपाई थी। सीलिंग फैन अपनी धीमी गति से चल रहा था। वे दोनों प्रगाढ़ नींद में सोन थीं और ऐसे ही बराबर के दूसरे कमरे से खर्राटों की आवाज आ रही थी, कौशल के पिता सो रहे थे बेखबर मुँह खोले। कौशल भी गहरी नींद में था। किसी ने भी तनिक आहट तक नहीं पाई और मुँह पर कपड़ा बाँधे, धोती कुरता पहने एक आदमी बाहर नल से चढ़कर ऊपर छज्जे पर आया। वहाँ आ उसने चारों तरफ देखा, कुछ चौकन्ना हुआ। सामने के कमरों में अन्धेरा था। पंखे चलने की आवाज साफ

सुनाई दे रही थी। वह आदमी धीरे-धीरे दबे पांव आगे बढ़ा और पहले वाले कमरे में घुसते ही उसने अचानक चाकू का एक भरपूर वार कर दिया चंदा पर। वह जोर से चीख पड़ी। चाकू उसके पेट में घुसा का घुसा ही रह गया। कौशल की मां हड़बड़ा कर उठ बैठीं और जब तक कौशल और उसके पिता उठे हत्यारा भाग गया। वह हत्या करने आया था कौशल की; लेकिन धोखे में चंदा उसका शिकार बन गई। तभी वह घबड़ा कर भागा कि यह मैंने क्या किया। यह कौशल नहीं था यह तो कोई स्त्री थी।

चंदा पर चाकू से वार करने वाला व्यक्ति धूपचन्द था। वह भाग रहा था सिर पर पाँव रखकर और उसके पीछे-पीछे दौड़ रहा था कौशल हल्ला मचाता हुआ—"चोर, कातिल, बदमाश अरे. पकड़ो यह चोर है, हत्यारा है।" तभी गश्त लगाते हुए दो कानिस्टिबिल उधर आ गये। एक ने सीटी बजाई और दूसरे ने भागते हुए उस कातिल को पकड़ लिया।

कौशल ने उजाले में जब उस अपराधी का चेहरा देखा तो वह एकदम सन्न रह गया और उसका मन चौंककर स्वयं अपने से ही प्रश्न करने लगा कि अरे ! यह तो धूपचन्द है। इसमें इतनी हिम्मत आ गई कि कत्ल करने चल दिया। ताज्जुब है गीदड़ भी सिंह की कोटि में आने लगे।

× × ×

पुलिस धूपचन्द को लेकर थाने गई और कौशल जब वापस लौटा तो देखा कि उसके दरवाजे पर भीड़ जुड़ रही है। क्या हुआ ? कहां गया ? किसका खून हो गया ? अरे ! यह चंदा कौन है ? आदि-आदि आवाजें उठतीं और अपने आप ही विलीन हो जातीं। वह भीड़ के बीच में पहुँचा। ज्ञात हुआ कि उसके माँ-बाप चंदा को लेकर अस्पताल गये हैं। उसने अन्दर जा जल्दी से साईकिल निकाली और चल पड़ा हैलट हास्पिटल की ओर।

यहाँ चंदा बेहोश थी। उसके घाव पर पट्टी बाँधी जा रही थी। कौशल घबराया हुआ था। उसका मन रो दिया, हृदय कचोट उठा और वह चंदा के शीघ्रातिशीघ्र स्वस्थ होने के लिए ईश्वर से दुआएँ माँगने लगा।

पेट से पर्याप्त मात्रा में खून निकल आने के कारण चंदा को होश आने में बहुत समय लग गया। वैसे ही डाक्टर ने सब लोगों को वहाँ से हटा दिया और मना कर दिया कि मरीज से बातें न करें। इससे उसे बेहोशी फिर आ सकती है। कौशल चला तो उसके पाँव आगे बढ़ते थे, दृष्टि पीछे घूमती। वह चंदा के मुरझाये चेहरे पर टिकती। रास्ते में आ वह सीधा वहीं से चला गया तार घर। माँ-बाप घर लौट आये।

कौशल ने पुजारी पाठक को जो तार दिया उसमें लिखा था चंदा के घायल होने का समाचार। गाँव में जब तार पहुँचा, लोगों को मालूम हुआ तो छूटते ही स्त्रियाँ सबसे कहने लगीं कि अरे! यह सब बहाना है, दाई से भला कभी पेट छिप सकता है। मैं तो पहले ही कहती थी कि कुछ दाल में काला है, तभी चंदा शहर गई है। वह दो जी से थी। गर्भ गिरवाने वहाँ गई है। यह झूठ है कि बदमाशों ने उसे चाकू से घायल कर दिया है।

पुजारी पाठक अपने दुःख में थे। उनके भी कानों में यह चर्चा पड़ी। वे सुनी-अनसुनी कर गये; क्योंकि ऊब गये थे वे गाँव के दूषित वातावरण से। यहाँ स्त्रियों ने इतनी अधिक विकृति फैला रखी थी कि कान नहीं दिये जाते। न अपनी कह सकती न दूसरे की सुन पड़ती। सभी दूध के धोये थे। अगर उनकी निगाह में दामन काला था तो वह पुजारी पाठक का। ग्रामीण समाज इस बात से ओतप्रोत होता है कि लोग दूसरे की कमियाँ ढूँढते हैं, उनकी खूबियाँ कभी नहीं देखते। पुजारी पाठक जैसे साधु प्रकृति के व्यक्ति थे वैसा ही उनका स्वभाव भी सरल था। उनकी नीति यह थी कि हाथी रास्ते पर चलता रहता है उसके गले में लटक रहा घण्टा निरन्तर बजता रहता है, कुत्ते भौंकते रहते हैं और मस्त

गयन्द बढ़ा चला जाता है ।

: ७६ :

पुजारी पाठक के साथ मंगरू और गौरी भी कानपुर आये । वे चंदा को देखने गये तब वह स्वस्थ थी, आँखें खोले लेटी थी । पाठक ने जाते ही उसकी बलायें लीं और सिर पर हाथ फेरते हुए कहने लगे—' मेरे बड़े भाग्य थे चंदा, जो तुम एक बार मौत के मुँह में जाकर फिर बच गई । अब कैसी तबियत है ?"

चंदा की आंखों में प्रसन्नता के आंसू भर आये । वह आर्द्र गले से तनिक मुस्कराकर बोली—"बापू ! भाग्य की बात तो दूसरी है; लेकिन में इतना जानती हूँ कि बिना मौत कोई नहीं मरता । मौत अपने निश्चित समय पर ही होती है उसके बहाने बन जाते हैं । अभी मुझे जिन्दा रहना है । अपने गाँव पार्वतीपुर की खुशहाली आँखों देखनी है। तुम आ गये बहुत अच्छा हुआ बापू ! अब मैं जल्दी ही अच्छी हो जाऊँगी । घाव ज्यादा नहीं सिर्फ दो इंच गहरा है ।"

"दो इंच लम्बा घाव !" पुजारी पाठक एकदम चौंक गये । उनकी दृष्टि कौशल का मुँह निहारने लगी ।

कौशल पाठक का आशय समझ गया था । वह तत्क्षण ही बोल उठा—"चिन्ता की कोई बात नहीं दादा ? जख्म जल्दी ही भर जायेगा । इंजेक्शन लग रहे हैं, इसके अलावा खाने की दवाई भी । मैं तो शुक्र मनाता हूँ भगवान का कि चंदा को नई जिन्दगी मिली । वह बाल-बाल बच गई ।'

अब गौरी की बातें चल रही थीं चंदा से । मँगरू भी अपनी कह रहा था कौशल से । तब तक कौशल के माँ-बाप भी वहाँ आ गये । अब मरीज की चारपाई के पास अच्छा खासा जमाव लग रहा था । नर्स बार-बार 'धीरे बोलिये' 'मरीज से बात कम कीजिए' 'भीड़ न लगाइये' कहतीं; लेकिन ये सब उस पर अमल नहीं कर पाते ।

लगभग दो घंटे बाद सब लोग अस्पताल से घर आये। जब भोज-नादि से निवृत्त हो पुजारी पाठक बैठे तो कौशल का बतलाया कि बिन्दो सिंग नई जहर उगल रही है। सविस्तार सारी बातें सुन कौशल प्रचंड हो उठा। उसे लगने लगा कि उसका अंग-प्रत्यंग क्रोधाग्नि में जला जा रहा है। आवेश उसके नथुनों पर सवार था, वे जोर-जोर से चलने लगे। वह बोला कठोर शब्दों में—"दादा ! मैंडकी की यह जुर्रत कि वह सवार जायेगी। बिन्दो ने यह अच्छा नहीं किया जो झूठा इल्जाम लगाया है चंदा पर। मैंने बहुत सफाई की उसकी हर बात की; लेकिन अब तय कर लिया है कि उसकी जबान बन्द करके ही रहूँगा। और धिक्कारूँगा उन गाँववालों को जो उसकी झूठी बातों पर विश्वास कर लेते हैं। आप यहीं रहिये। मैं कल सवेरे ही पायतीपुर जाऊँगा और कहूँगा बिन्दो से कि चलो मेरे साथ शहर। वहाँ देखो कि चंदा गर्भपात करवाने आई है या उसके पाहू लगा है।"

पुजारी पाठक घबड़ा गये। वे मना करने लगे कौशल को कि नहीं अभी कोई जल्दी नहीं है। चार-पाँच दिन बाद चलना मेरे साथ। उल-झन में झगड़ा बढ़ा हो सकता है और फिर तुम तो समझदार हो।

इसी तरह मैंसम्ब और बाप भी समझाने लगे कौशल को। तब जा कर कहीं बड़ी मुश्किल से वह शान्त हुआ।

× × ×

इधर गौरी रात को जब अस्पताल गई तो वह वहीं रह गयी चन्दा के पास। उसने बिन्दो के झूठे प्रचार की कहानी बतलाई चन्दा को। जिसे सुनते ही वह भी कौशल की भाँति उग्र हो उठी। उसने कौशल से कहा। पुजारी पाठक से पूछा; लेकिन बुजुर्ग अपनी क्षमता भर वयस्कों को बहकने नहीं देते। उन्हें सीख देनी पड़ती है, समझाना पड़ता है अपनी सन्तान को कि दौड़कर न चलो, नहीं तो मुँह के बल गिर जाओगे। चंदा को भी शान्त हो जाना पड़ा।

चंदा धीरे-धीरे स्वास्थ्य लाभ कर रही थी। गौरी को वहीं स्नेह

मंगल, कौशल और पुजारी पाठक के साथ पांच-छः दिन बाद गाँव गया। वहाँ हर आदमी का मुँह टेढ़ा हो रहा था। ऐसा लगता था कि जैसे शहर से आने वाले इन तीनों व्यक्तियों ने गौ-हत्या की है। इसलिए गाँववाले उनका मुँह तक नहीं देखना चाहते।

उसी दिन तीसरे पहर कौशल बिन्दो के घर पहुँचा। तब वह आँगन में बैठी जंगी को कुछ आदेश दे रही थी। शायद किसी आसामी के घर उसे तगादे जाना था। अचानक कौशल को घर में आते देख वह चौंक उठीं। उसके चेहरे की रंगत बदलने लगी। वह कुछ सिट-पिटा-सी गई। तब तक कौशल ने पूछ दिया—"बिन्दो तुमने क्या अफवाह फैला रखी है गांव में कि चंदा गर्भ गिरवाने शहर गई है। क्या यह सही है ?"

यद्यपि बिन्दो घबड़ाई हुई थी; लेकिन फिर भी उसने अपने को सम्हाला और उठकर खड़ी हो दोनों हाथ नचा, तेज गले से जल्दी-जल्दी कहने लगी—"मैं क्या जानूं। मैंने किसी से कुछ नहीं कहा। सारा गाँव कहता है। तुम जाकर सबके मुँह बन्द करो। मुझ पर लाल-पीले होने आये हो यह तुम्हारी भूल है। जाओ अपना काम देखो। मेरे मुँह न लगो।"

कौशल को क्रोध तो बहुत आया; लेकिन वह उसे पी गया। उसने एक क्षण में ही निश्चय कर लिया कि औरत के मुँह लगना अच्छा नहीं होता और फिर झूठे से तर्क करना भी निरी मूर्खता है। उससे कुछ और न कह शान्तिपूर्वक यह बतलाने लगा—"कहते तो गाँववाले ऐसा ही हैं कि यह बात तुम्हारे मुँह से निकली है। वहीं से सब जगह फैली है। बुरा न मानो तो कहूँ ? मैं···।"

"मैं कुछ नहीं जानती बुरा-भला। तुम जाते क्यों नहीं ?' ऊबकर बिन्दो ने यह कहा और फिर जंगी से बोली—"अरे जंगी खड़े क्यों हो। मेरा मुँह देखते हो। कौशल को समझाओ, कहो अपने घर जाये। मुझसे उलझने से कोई लाभ नहीं।"

लेकिन जंगी की हिम्मत नहीं पड़ी कि वह कौशल के आगे एक शब्द

भी बोले। कौशल फिर कहने लगा—"कहना यह चाहता था कि बिन्दो तुम शहर चलो, गाँवके दो-चार आदमियों को साथ ले चलो और चलकर अपनी आँखों से देखो कि चंदा के चाकू का घाव लगा है या नहीं। आखिर झूठ की हद होती है। किसी की बदनामी फैलाना कोई अच्छी बात नहीं। आखिर हम लोगों ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? तुम····।"

"मैं कहती हूँ कौशल कि चले जाओ मेरे घर से। मैंने तुम्हें बुलाया नहीं, तुम मेरे पीछे क्यों पड़े हो। मैं क्या जानूँ चंदा के चोट लगी है या गिरवाने गई। यह तुम जानते होगे या वह। मुझे हैरान न करो। मैंने कोई कसूर नहीं किया है जो सब जगह मारी-मारी फिरूँ। तुम्हें बुरा लगता है भइया, तो जाओ गाँव में और भी लोग हैं उनके मुँह पर हाथ रखो, उनकी जबानें पकड़ो और कहो तुम लोग झूठी बदनामी उड़ाते हो। कमजोर समझकर मुझे दबाने चले आये। किसी और से कहोगे तो वह तुम्हारा मुँह नोच लेगा।"

बिन्दो की ये बातें सुन कौशल क्रोध से काँपने लगा। उसके मन में आया कि ऐसा तीखा जवाब दे जो बिन्दो पर बर्छी-सा वार करे लेकिन न जाने उसकी क्षमता ने उसे ऐसा क्यों नहीं करने दिया। वह घूमकर चल दिया और चलते-चलते कहता गया—"जाता तो हूँ बिन्दो लेकिन याद रखना झूठ से बढ़कर कोई दूसरा पाप दुनिया में नहीं है और झूठ बोलने वाला ही लोग कहते हैं कि कोढ़ी होता है। तुम्हें अपनी करतूतों पर एक दिन स्वयं ही शर्मिन्दा होना पड़ेगा। तब कोई तुम्हारा साथ नहीं देगा। पाप करने वाला भी कभी चैन से बैठा है, उसे कभी शान्ति मिली है।"

कौशल दरवाजे से बाहर निकल गया। तब बिन्दो बड़बड़ाने लगी, "अरे जा-जा, आया है बड़ा ऋषि दुर्वासा बनकर, जो मुझे श्राप (शाप) दे देगा और मैं भस्म ही जाऊँगी।"

यह कहकर बिन्दो फिर सम्मुख हुई जगी की ओर और कहने लगी—"अरे जगी तुम तो कुछ बोले ही नहीं, खड़े रहे। मुआ ····· जाने

कितनी बातें सुना गया मुझे। तुम तनिक भी छेड़ देते, फिर मैं अच्छी तरह खबर लेती उस मुँहझौंसे की, कलजुगहा, किरिस्तान, न कोई धर्म और न कोई ईमान, वह तो बिल्कुल भ्रष्ट है।"

किन्तु जंगी अब भी कुछ नहीं बोल पाया। वह सोचने लगा कि कैसा भी हो कौशल है दिलेर, सौ जवानों के बीच अकेले अखाड़े में उतर सकता है।

× × ×

दूसरे दिन सवेरे गांव में एक वृहत सभा हुई। कौशल ने दलीलों पर दलीलें पेश की और इस बात को सिद्ध करके ही रहा कि चंदा पर लगाया गया लांछन सरासर झूठा है। उसने कहा कि बड़े अफसोस की बात है, गांव के लोग बनने वाली बातों की ओर ध्यान न देकर व्यर्थ के पचड़ों में पड़ जाते हैं। इस समय सबका फर्ज यह होना चाहिए कि हमारा गांव खूब तरक्की करे। उसका जो नया रूप बन रहा है उसमें विकास हो। सबको कटुता, दुश्मनी, जलन और डाह, इन सबकी ओर से मुँह मोड़ लेना चाहिये। हम सब एक हैं की नीति पर चलने से ही गति मिल सकती है। तभी हम खुशहाल हो सकते हैं और सबसे बड़ी बात तो यह है कि हमें उथली बातों पर न जा गहराई से सोच-समझकर कदम उठाना चाहिए। रास्ते में झाड़ होते हैं, झंखाड़ मिलते हैं और कांटे बिछे रहते हैं; लेकिन आदमी वही है जो अपनी जिन्दगी की मंजिल तय करता रहता है, थकता नहीं यही उसकी हिम्मत होती है; डरता नहीं यह उसकी दिलेरी है और कभी बहकता नहीं, यही उसकी इन्सानियत है।

कौशल का भाषण चल रहा था। लोग मंत्र मुग्ध से सुन रहे थे, थी मौजूद बिन्दो भी उस सभा में। उसे बहुत बुरा लग रहा था और लोगों की श्रद्धा, उनकी आस्था कौशल के प्रति बढ़ती जा रही थी। वह कह रहा था कि बुराई से उतनी ही दूर रहो जैसे धरती और आसमान। भलाई की ही बात सोचो वही सबसे बड़ा सुख है। उससे लोक-परलोक दोनों बनते हैं। जिस दिन हमारे देश में एकता की भावना सब में जाग्रत हो

जायेगी उस दिन खेतों में सोना पैदा होगा। बादल अमृत बरसायेंगे और हम भारतवासी संसार के किसी भी देश से पीछे नहीं रहेंगे। कितने गर्व की बात है कि पुराने जमाने में हमारे देश हिन्दुस्तान को लोग सोने की चिड़िया कहते थे। तब क्या था। बस; तीन बातें—सचाई का बोल बाला था, सहयोग की भावना सबके अन्दर थी, भलाई के अलावा लोग बुराई को जानते भी नहीं थे। तभी सब जगह शान्ति का अटल साम्राज्य था। युग आदमी को बदलता है, आदमी को युग नहीं। जो जैसा करता है उसे वैसा मिलता है। परिश्रम का पौधा बड़ी मुश्किल से पनपता है उस का हर फल मीठा होता है।

जब सभा विसर्जित हुई तो दोपहर हो आई थी। सबके मन का भ्रम दूर हो रहा था। लोग पीठ पीछे कौशल की प्रशंसा कर रहे थे और कह रहे थे बिन्दो को बुरा-भला कि यह स्त्री गाँव के लिए एक बहुत बड़ी बला है। सबको इससे बचना चाहिए। हर आदमी उसकी निगाह में बुरा है। जब कौशल ने कहा कि वह उसके झूठ को अपनी सफाई का सबूत देकर काटेगा तो बोली नहीं, चुपचाप बैठी रही। कौशल हीरा है, चंदा उसकी कनी है और यह बिन्दो है भैंस का गोबर न लीपने में और न पोतने में।

और बिन्दो जब घर आई तो नाक-भौं सिकोड़कर जंगी से बोली—"देखा जंगी कौशल अपने मुँह की कालिख कैसे धो रहा था। कुछ भी करे वह, मैं उसके सामने झुकने की नहीं। मैं तो उसे बुरा ही कहूँगी। अरे! बड़ा मक्कार है वह। शहर में रहता है चार सौ बीस करना है। गाँववाले ठहरे मूर्ख और मूर्ख को मूर्ख बनाने में कितनी देर लगती है।"

जंगी ने कुछ भी नहीं जवाब दिया। हाँ! उसके चेहरे के भाव अलबत्ता बदल गये और गम्भीर होकर न जाने क्या सोचने लगा।

७७ .

भादों की काली रात थी। यद्यपि शुक्ल पक्ष था; लेकिन चाँद को

काले बादलों ने ढक रखा था। हल्की-हल्की बूँदें गिर रही थीं। गांव की बस्ती के बीचों-बीच कभी-कभी कुत्तों के भौंकने की आवाज आ जाती। जिससे वातावरण और भी भयानक हो जाता। सर्वत्र सांय-सांय हो रही थी। सारा गांव सो रहा था। चौकीदार की आवाज कभी-कभी सुनाई पड़ जाती। 'जागते रहो', 'जागते रहो' कहकर वह चुप हो जाता और फिर थोड़ी देर बाद उसकी वही आवाज एकाएक फिर बुलन्द हो उठती।

बिन्दो को नींद नहीं आ रही थी। वह बिस्तर पर पड़ी सोच रही थी कि सत्यानाश हो इस कौशल का। न जाने कहां से गाँव में आ गया। इसने तो मेरी नाक में दम कर रखा है। गांववालों को क्या कहूँ। वे सब उसकी बातों में आ जाते हैं, तनिक भी नहीं सोचते हैं। रामदयाल दादा जो सरपंच है गांव के सभापति वे सब उसी की ओर मुड़ते जा रहे हैं। पुजारी पाठक पर उसने जादू का डंडा फेर रखा है। सभी बड़े-बूढ़े उसका मुँह देखते हैं जैसे वह आदमी नहीं भगवान हो। मैं अकेली क्या कर सकती हूँ। एक आवाज दब जाती है जब कई आवाजें उस पर हमला करती हैं। खैर कुछ भी हो मैं तो कहूँगी कौशल को बुरा ही और अगर मेरा वश चला तो उसे जड़-मूल से नष्ट कर दूंगी। वह है किस खेत की मूली। मुझे जंगी पर बड़ा घमंड था। मैं उसके बल-बूते पर सारे गाँव में इतराती फिरती थी। उसको भी मैंने देख लिया। ऐसा लगता है कि उसके जोश की जवानी ढल चुकी है। वह कायर हो गया हैं, निरा बुज़दिल। शायद वह कौशल से डरता है।

इधर बिन्दो सोच-विचार में लीन थी और उधर बरोठे में चारपाई पर लेटा बेखबर सो रहा था जंगी, सपना देख रहा था कि उसके घर में डाकू घुस आये हैं। वह घबड़ाकर उठ बैठा। सहसा उसकी नींद टूट गई। उसने देखा कि उसकी आंखों के सामने टार्च चमक रही है। एक आदमी मुँह पर कपड़ा बांधे एक हाथ में बैटरी और दूसरे में पिस्तौल लिए खड़ा है। वह कह रहा है—"खबरदार जो उठने की कोशिश की तो घोड़ा दाब दूंगा।"

जंगी की हक्की-बक्की भूल गई। वह सिटपिटा गया बुरी तरह। उसके माथे पर पसीना आ गया। उसके सिरहाने रखा बल्लम बिल्कुल बेकार साबित हो गया और वह काँपने लगा कमजोर पत्ते की तरह थर-थर।

इधर जंगी डाकू के अधीन हो चुका था और उधर बिन्दो को घेरे खड़े चार डाकू अपनी-अपनी पिस्तौलें दिखा उससे कह रहे थे—"जल्दी बता कि रकम कहाँ-कहाँ गड़ी है ? अगर तनिक भी छिपाने की कोशिश की तो जान से मार डाली जाओगी। गोली तुम्हारे सीने से पार हो जायेगी।"

बिन्दो की घिग्घी बँध गई। उसके मुँह से बोल नहीं निकल रहा था। वह इतना डर गई कि उसे गश आ गया और वह बेहोश होकर चारपाई पर गिर पड़ी। चार डाकू फिर भी वहाँ पहरा देते रहे। वे पिस्तौलों से लैस थे।

बिन्दो के घर की बड़ी लालटेन जलाई गई। खूब तलाशी हुई। रुपया, जेवर और कपड़ा डाकुओं ने अपने कब्जे में किया। इसी तरह छोड़ा उन्होंने बर्तनों को भी नहीं। कहाँ तक कहा जाए वे बैलों की जोड़ी और भैंस भी खोल ले गये और जाते-जाते एक कौतुक और कर गए। जंगी तथा बिन्दो के हाथ-पैर कस कर बाँध दिए गए चारपाई में। उनके मुँह में कपड़ा ठूँस दिया। वे विवश और मजबूर होकर रह गये।

सवेरे लोगों ने देखा कि बिन्दो के घर के किवाड़े खुले पड़े हैं, लेकिन देर हो गई अब तक कोई बाहर नहीं निकला। दिन चढ़ता गया। पहला पहर बीता, दोपहर होने को आ गई। अब पड़ोसियों की शंका उछलने-कूदने लगी कि जरूर कोई कारण है। आज बिन्दो के दरवाजे पर सन्नाटा छाया है। न कोई आता और न कोई जाता। आज बाहर, चन्नी पर बैल भी नहीं बाँधे गये। आखिर मामला क्या है ?

एकाएक किसी की हिम्मत घर में जाने की नहीं पड़ती। लोग बाहर से ही आवाज देते। वे जंगी और बिन्दो को पुकारते; लेकिन उन्हें कुछ भी जवाब नहीं मिलता। धीरे-धीरे बात पहुँची मुखिया और रामदयाल

दादा तक। वे सब लोग आये और बिन्दो के घर में प्रविष्ट हुए तो वहाँ का दृश्य देखकर दंग रह गए। दोनों खोले गये। बिन्दो ने रो-रोकर सब को हाल बताया और साथ ही यह भी कहने लगी कि मैं अच्छी तरह जानती हूँ कि यह किसकी शरारत है। यह काम कौशल का है उसी ने मेरे घर में डाका डलवाया है; क्योंकि उसे पैसे की जरूरत है। मैं अभी जाती हूँ, पुलिस थाने में रिपोर्ट लिखवाती हूँ। डाकू घर में एक कटोरी भी नहीं छोड़ गये।

कौशल का नाम सुनते ही लोगों के तन-बदन में आग लग गई; लेकिन बिन्दो से उस समय किसी ने कुछ नहीं कहा; क्योंकि वह दुःख में थीं। यह सभी जानते थे कि बिन्दो कौशल से चिढ़ी है इसीलिए उस पर झूठा दोष लगा रही है।

और जंगी उसने बतलाया सब लोगों को कि मैं किसी को भी नहीं पहचान पाया कि डाकू लोग कौन थे, किस गाँव के थे। उन्होंने डाका डाला है पिस्तौल की नली गले से अड़ा कर। मैं नहीं कह सकता कि किसकी साजिश थी और किसकी शरारत।

अन्य लोगों को तो जंगी की बातें सही और दुरुस्त मालूम हुईं; लेकिन बिन्दो को अच्छी नहीं लगीं; क्योंकि वे उसके पक्ष का पूरा-पूरा समर्थन नहीं कर रहा था। लोग देर तक वहाँ पर रुके, सहानुभूति और समवेदना प्रकट करते रहे, फिर जब चले तो चलते-चलते बिन्दो को समझाते गये कि समाई करो बिन्दो। धीरज रखो, संतोष तो करना ही पड़ेगा। बहुत बुरा हुआ तुम्हें डाकुओं ने कहीं का नहीं रखा।

लेकिन बिन्दो को इस सहानुभूति से तनिक भी शान्ति नहीं मिली। वह उलझन में पड़ गई और उसी समय जंगी से बोली—"चलो घर में ताला बन्द करो। हम लोग अभी थाने चलेंगे।"

जंगी बिन्दो का मुँह देखने लगा तो वह बिगड़ पड़ी और रुष्ट हो कर बोली—"मुँह क्या देखते हो, जल्दी करो ? मुझे चींटियाँ-सी काट रही हैं और तुम···।"

× × ×

बिन्दो के साथ ही तहकीकात के लिए पुलिस गाँव आई। आते ही सब से पहले पुजारी पाठक के घर की तलाशी हुई। कौशल संदेह में गिरफ्तार कर लिया गया; क्योंकि बिन्दो ने रिपोर्ट में यही लिखवाया था कि उनका पूरा-पूरा शक कौशल पर है। उसी ने उसके घर में डाका डलवाया है।

इसके बाद मँगरू के घर में पुलिस घुसी। उसका कोना-कोना छान मारा, कहीं कुछ नहीं मिला। दरोगा ने उसे बहुत मारा और गिरफ्तार कर लेने का भय दिखलाया, लेकिन मँगरू ठहरा निर्दोष, वह क्या बतलाता। और भी कई घरों में पुलिस ने तलाशी ली। लूट का माल कहीं भी बरामद नहीं हुआ। कौशल के अलावा और भी चार-पाँच युवकों को पुलिस बाँध ले गई।

गाँव की स्त्रियाँ और बड़े-बूढ़े लोग बिन्दो को बुरा-भला कहने लगे। कौशल का पकड़ा जाना सब को बहुत खला। जब दरोगा और कॉन्स्टिबिल उसको लेकर चले तो उसके पीछे चल पड़ी एक बहुत बड़ी भीड़। जिसको लौटा सकने में पुलिस सर्वथा असमर्थ रही। थाने पर जाकर गाँव के लोगों ने धरना दिया। उनकी यही आवाज थी कि कौशल बेगुनाह है, उसे छोड़ दो; लेकिन कानून के काम कायदे से होते हैं। फरियाद, नारे और आन्दोलन उनमें बाधा पहुँचा सकते हैं, मगर बन्द नहीं कर सकते। बहुत कोशिश की गाँववालों ने, पुजारी पाठक ने जमीन-आसमान एक कर दिया, किन्तु अफसोस कौशल की जमानत थानेदार ने नहीं ली।

रात हुई, गाँववालों को समझा-बुझाकर पुजारी पाठक अपने साथ लिवा लाये। सवेरे उन्होंने शहर जाने का निश्चय किया; क्योंकि सवेरे ही कौशल का चालान भी जेल भेजा जाने वाला था।

गाँववालों के चले जाने के बाद कौशल को प्रताड़ित किया। पुलिस ने उसे न जाने कितनी यातनायें दीं। कौशल चुप रहा। उसका साधारण सा उत्तर था कि मैं बयान अदालत में दूंगा। मैंने कोई अपराध नहीं

किया है इसीलिए मुझे कोई डर नहीं है।

रात बीत रही थी। हवालात के अन्य कैदी सो रहे थे; लेकिन कौशल जाग रहा था। उसके मस्तिष्क में बार-बार यही प्रश्न घूम रहा था कि चंदा कैसी होगी? मैं नहीं जानता था कि यहाँ आकर यह घटना घट जायेगी। काश! मनुष्य भविष्य का ज्ञाता बन सकता तो अनहोनी से वह सतर्क रहता। उस पर दैवी मार कभी नहीं पड़ती।

कौशल का मनोमंथन चल रहा था। वह अशान्त था, घोर असंतुलित। उसे अपनी मजबूरी पर दुःख हो रहा था। वह सोच रहा था कि आदमी कितनी लम्बी योजना लेकर चलता है जिन्दगी में कि आज यह करूँगा कल वह करूँगा, मगर उसकी सारी इच्छायें पूरी नहीं हो पाती। यही सांसारिकता है और यही है संसार की गतिविधि। लोग सच कहते हैं कि परोपकारी व्यर्थ में मारा जाता है और होम करने से उँगलियाँ जल जाती हैं। जीवन में यह पहला दिन है जब मैं सीखचों में बन्द हूँ। यह है मेरा भाग्य-चक्र और उसकी विडम्बना।

अब रात ढलने पर आ गई थी। कौशल भी थका-सा गया था। सोचते-सोचते उसके सिर में पीड़ा होने लगी। उसके मुँह से रह-रहकर निकल पड़ती दीर्घ उच्छ्वास। तब वह मन ही मन आकुल हो उठता और उसका अन्तर कहने लगता कि न जाने चंदा कैसी होगी। ईश्वर उसे जल्दी ही स्वस्थ कर दे। वह मेरी जीवन-ज्योति है और जिन्दगी की सबसे बड़ी खुशी।

: ७८ :

पुजारी पाठक के साथ मंगरू भी जिले की कचहरी गया। वहाँ पाठक अपने पुराने वकील से मिले। जमानत का प्रार्थना-पत्र लगाया गया। वकील ने पैरवी की और पाठक की दौड़-धूप कामयाब हो गई। अर्जी मंजूर हो गई। उसी दिन परवाना बन गया और सांझ होते-होते कौशल जेल से छूट गया।

पुजारी पाठक कौशल के साथ पार्वतीपुर आये। जब वे पहुँचे, दोपहर हो रही थी। रात तीनों ने विताई थी शहर की एक धर्मशाला में। वे सोये नहीं जागते ही रहे। मंगरू बार-बार उबल पड़ता और कहने लगता कि रस्सी जल गई; मगर ऐंठन नहीं छूटी। कौशल भैया को जेल भिजवा कर बिन्दो ने कितना नीच काम किया है। जी चाहता है कि अभी जाकर उसका गला काट दूँ, मेरा सारा गुस्सा ठंडा हो जायेगा। खून का बदला खून, फाँसी ही तो होगी उसका मुझे डर नहीं।

इसी तरह जब गजू हाल-चाल पूछने लगा तो मंगरू का क्रोध अपनी सीमा पार करने लगा। कौशल मौन रहा और पुजारी पाठक ने उसे समझाया कि गुनाहगार को उसके गुनाहों की सजा देने की बजाय उसको उसी के हाल पर छोड़ दिया जाये तो यह बहुत बेहतर होता है। एक दिन आता है कि वह खुद ही अपने किये पर पछताने लगता है। लुट तो गई बिन्दो अब क्या रहा उसके घर में, लेकिन ऐंठ उसका पीछा नहीं छोड़ रही है। वह भी एक दिन निकल जायेगी। ईश्वर के दरबार में देर है अन्धेर नहीं। तुम अपने मुँह से उसे कुछ न कहो इससे तुम्हें पाप पड़ेगा और फिर कायदा यह होता है कि जहाँ पर एक आदमी अपना आपा खो रहा हो वहाँ दूसरे को चुप रहना चाहिए। मूर्ख के साथ मूर्ख बन जाना ही उसे बढ़ावा देना और अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारना है।

दुनियादारी के नाते गाँव के कुछ लोग पुजारी पाठक के घर आये। सब ने समवेदना प्रकट की और यह कहा कि ऐसा अनर्थ हो जायेगा यह कोई नहीं जानता था। माना कि बिन्दो का नुकसान हुआ; लेकिन उस का मतलब उसे यह तो नहीं निकालना चाहिए था कि कौशल के हथकड़ी डलवा दे। न जाने इस गाँव के लोग कैसे हैं और गाँव का भाग्य कैसा है। यहाँ कभी शान्ति रह ही नहीं पाती। आये दिन एक न एक झंझट खड़ा रहता है, उलझन बनी रहती है। जो कौशल इस मुर्दा गाँव में प्राण फूंकने आया है उसी के साथ यह व्यवहार कि उस पर चोरी-का

इल्जाम लगाया जाये। यह खूब रही, डाकूओं से तो जोर नहीं चला, कुत्ते के बदले गदहे के कान उमेठे जाने लगे। डाकुओं के सामने विन्दो की वकालत उसकी मदद नहीं कर सकी और न जंगी की बहादुरी ही उन्हें घर से भगा सकी। वाकई यह दोनों मालकिन और नौकर गांव के लिये बहुत बड़े कलंक हैं। हमारी आने वाली पीढ़ियां भी उन्हे नहीं भूल पायेंगी।

पुजारी पाठक और कौशल दोनों लोगों की हां में हां मिलाते रहे। तीसरे पहर के आये हुए रात होने पर सब वहां से हटे।

सवेरे गंजू को घर में छोड़ सब लोगों ने कानपुर की ओर प्रस्थान किया।

× × ×

कौशल के मां-बाप गौरी और चंदा इन सबने जब सुना कि विन्दो के घर में डाका पड़ गया था, उसी संदेह में कौशल को पुलिस ने हिरासत में लिया गया, वह जमानत पर छूटकर आया है तो वे सब चौंक गये। और चंदा, वह सोचने लगी कि इधर कई दिन तक लगातार मेरी दाहिनी आंख फड़कती रही। अपशकुन हुआ था आज सुनने को मिल गया।

चंदा का घाव काफी भर आया था, थोड़ी कमी शेष रह गई थी। वह चंद दिन बाद ही अस्पताल से घर आने वाली थी। तीसरे पहर सब लोग आये थे उसे देखकर चले गये। रात को कौशल फिर पहुँचा तब वह अकेला था।

यह इमरजेंसी वार्ड था। दोनों तरफ चारपाइयों की पांति लग रही थी। उन पर गद्दे बिछे थे सफेद चादरों से ढके। मरीज लेटे थे, कोई कराह रहा था, कोई मौन था और कोई हंस-हंसकर बातें कर रहा था घर वालों से। लेडी नर्स और नर्स कम्पाउन्डर यत्र-तत्र डोल रहे थे। किसी के हाथ में दवा पिलाने का मेजर ग्लास था, किसी के इन्जेक्शन की पिचकारी और थरमामीटर लगाकर बीमार का ताप ले रहा था। वार्ड के बीचों-बीच एक बड़ी-सी मेज पड़ी थी। वहीं बैठी थी स्टाफ नर्स। वह

आवश्यक लिखा-पढ़ी में व्यस्त थी। नर्सें पास आती, मिस्टर कहकर उसे सम्बोधित करतीं। वह संक्षिप्त उत्तर देती और फिर अपने कार्य में लग जाती। वार्ड में बल्ब लटक रहे थे छत में, और नाच रहे थे सीलिंग फैन अविराम गति से। अधिकांश यह हो रहा था कि मरीजों के पास बैठे घर वालों को हिदायतें मिल रही थीं कि जाइये, आप लोग जाते क्यों नहीं। मिलने-जुलने का समय खत्म हो गया।

लेकिन कौशल तो अभी-अभी आकर बैठा था। उसकी ओर दो-एक नर्सों और कम्पाउन्डरों ने देखा। मगर वे कुछ कह न पाये। चंदा लेटी थी श्वेत धोती पहने। उसका एक हाथ पेट पर था और दूसरा टिक रहा था सिर के सहारे। वह उठने का प्रयत्न करने लगी तो कौशल ने हँसकर मना किया। वह बैठ गया चारपाई के नीचे से स्टूल खींचकर। चंदा ने उसकी ओर देखा और मंदस्मित बिखेरती हुई धीरे-धीरे कहने लगी—"मैं जानती थी कि तुम जरूर आओगे।"

"यह कोई जरूरी नहीं था चंदा, मन आ गया। मैं यों ही घूम पड़ा इस ओर। तुम अपनी कह रही हो। भला तुमने कैसे जान लिया, जब मैं तुमसे कुछ कहकर नहीं गया था।"

कौशल के मुँह से यह सुनते ही चंदा हँस पड़ी और हँसते-हँसते बोली—"मैं जानती थी इस समय तुम्हें बातें करने का मौका कहाँ मिला था। मेरा मन कह रहा रहा था कि तुम आओगे जरूर, सो आ गये। भगवान ने किस मुसीबत में फंसा दिया तुम्हें। न जाने ये कैसे टेढ़े दिन आ गये हैं। मैं मौत के मुँह से दो बार जाते-जाते बची, तुम पर मुकदमा चलेगा। तुम जमानत पर रिहा किये गये, एक मुलजिम हो। क्या सेवा-कार्य अपनाने का यही पुरस्कार मिला है हम दोनों को। काश! दुनिया में दुश्मनी और दाँव-पेंच न होते तो आदमी कभी नहीं हारता।

कौशल हँस पड़ा। उसने झांका चंदा की आँखों में। वे अपनत्व से भर रही थीं। उसने कहा—"चंदा दुनिया में जो चलता आया है वह चलता रहेगा। उसे कोई नहीं रोक पायेगा कभी। गिर-गिर कर

और उठ-उठकर चलना ही जिन्दगी की दृढ़ता है। मैदान से मुँह मोड़ने वाले योद्धा को लोग पराजित ही समझते हैं। उसकी गिनती बहादुरों में न हो बुजदिलों में होने लगती है। कोई चिन्ता नहीं, जो मुसीबतें आयेंगी हम झेलेंगे। एक दिन लोगों को मेरी बात माननी होगी। वे मेरी बुराई तो क्या मेरे खिलाफ एक शब्द भी नहीं बोल पायेंगे। जब उनमे विश्वास जाग जायेगा कि हमारी सेवायें निःस्वार्थ हैं।"

कौशल कहता रहा, चंदा सुनती रही। लगभग एक घंटा वह वहाँ बैठा, तब तक दोनों में बातों का तारतम्य चलता रहा।

जब कौशल चला गया तो चंदा ने एक संतोष की साँस ली। उसकी आँखें मुंद गईं और वह स्वप्न देखने लगी गाँव के जागरण का। उसे लगा कि गाँव के किनारे नहर के बम्बे में एक छोटी-सी डोंगी पड़ी है, कौशल बैठा है वह मन्त्र-मुग्ध-सी उसकी ओर देखती रही है। सूरज की आँखें खुल गई हैं। प्रभात मुखरित हो रहा है। हरे-हरे खेतों में किसान प्रभाती गा रहे हैं और दूसरी ओर लग रहे हैं अनाज के बड़े-बड़े ढेर। अनाज ! हाँ यही तो धरती का सोना है, उसका सबसे बड़ा धन।

चंदा की आँखें खुल गईं। वह मन ही मन सोचने लगा कि सरकार कहती है और जनता की भी यही आवाज है कि अधिक अन्न उपजाओ। इस तरह देश पर खाद्य संकट कभी नहीं आ सकता। कौशल ईश्वर का भेजा हुआ एक दूत है जो मेरे लिये वरदान बनकर आया है। न वह आता और न हमारे गाँव के भाग्य जागते। ईश्वर उसे लम्बी उम्र दे, यही मेरी शुभ कामना है।

इस प्रकार चंदा देख रही थी सुखद सपने। उसका ध्यान तब भंग हुआ जब नर्स आकर थरमामीटर लगा उसके ज्वर का तापमान लेने लगी। उसने उसका प्रफुल्लित चेहरा देखा तो मनोरंजनार्थ हँसकर बोल पड़ी—"क्या बात है ? आज बहुत खुश हो। ये तुम्हारे कौन थे जो अभी-अभी आये थे।"

नर्स का आशय कौशल से था। चंदा मुस्करा पड़ी और दबे स्वर में

बोली धीरे-धीरे सकुचाती हुई—"कोई नहीं । ये…।"

नर्स समझ गई । वह मुस्कराती हुई वहाँ से चल दी और चंदा झेंप गई मन ही मन । वह आधी बात ही कह पाई कि सहसा उसका गला जैसे किसी ने पकड़ लिया और वह निःशब्द हो गई ।

: ७९ :

दो दिन कानपुर रहकर कौशल फिर पार्वतीपुर चला आया । मँगरू, पुजारी पाठक, वे ठहर गए थे इसलिए क्योंकि चंदा तीन-चार दिन बाद अस्पताल से घर आने वाली थी । वह स्वस्थ हो गई थी, घाव बिल्कुल मामूली-सा रह गया था और अब आसानी से चल फिर सकती थी ।

कौशल गाँव में किसी के घर नहीं जाता । घर में बैठा योजनायें बनाता रहता और उनकी रूपरेखायें खींचता रहता । जब जी ऊब जाता तो थोड़ा-सा विनोद कर लेता गजू के साथ क्योंकि वह भी एक अजीब आदमी था, बहुत ही दिलचस्प । वह मीठी चुटकियाँ लेता और कौशल को हँसी आ जाती ।

एक दिन प्रातः कौशल आँगन में चारपाई पर बैठा एक अंग्रेजी की किताब पढ़ रहा था । पढ़ते-पढ़ते वह अपने आप ही हँस पड़ा और उसके मुँह से उसी प्रसन्नता के आवेग में निकल गया 'वेरी गुड', बहुत अच्छा ।

तब गजू आँगन में झाड़ू लगा रहा था । वह देखने लगा कौशल की ओर, और फिर झाड़ू वहीं रख कौशल के निकट आ जमीन पर बैठता हुआ बोला—"भय कौशल भइया यह मैं फिर कहता हूँ कि इस गाँव का सेहरा बँधेगा तुम्हारे ही सिर पर । तुम्हें लोग सताते नहीं, बल्कि तुम्हारी परीक्षा ले रहे हैं ।" यह कहकर गजू जोर से हँस पड़ा । कौशल को भी हँसी आ गई । तभी छज्जे पर बैठा खंजन पक्षी अपना कलरव गान करता हुआ फुर्र से उड़ गया । ठीक उसी समय पुजारी पाठक, चंदा, मँगरू और गौरी ने आँगन में प्रवेश किया । कितनी सुखद मिलन की वेला थी यह । सभी प्रसन्न थे । सभी के गातों में गुदगुदी हो रही थी ।

सभी के मन में थी एक कल्पना स्वर्णिम भविष्य की। वे जिन्दगी के प्रति उदास न हो आह्लादित थे; क्योंकि जिन्दगी मुस्करा रही थी।

× × ×

मंगल और गौरी अपने घर में प्रसन्न थे। उनका अपना छोटा-सा संसार बस रहा था। अब रूपा भी स्कूल जाने लगी थी और रतन पढ़ता था अपने चाचा कौशल के पास। गाँव में प्राइमरी स्कूल से आगे नहीं था। एक जूनियर हाई स्कूल खोलने की योजना थी कौशल की। उसके लिये उसकी लिखा-पढ़ी अपने प्रदेश की सरकार से चल रही थी। आशा थी कि उसे अपने इस कार्य में पूरी-पूरी सफलता मिलेगी। ऐसे ही डिस्ट्रिक्ट बोर्ड से भी उसका पत्र व्यवहार चल रहा था और वह कोशिश में था कि गाँव पार्वतीपुर में एक अस्पताल भी खुल जाये जिसमें गाँव वाले अकाल मृत्यु से बच जायें। वह जो सोचता उसके लिए तन, मन और धन तीनों से जुट जाता। सारा गाँव उसके साथ था। सहयोग और सहकारिता खूब फल-फूल रही थी। कई बीघे बंजर जमीन तोड़ डाली गई। कार्तिक लगते ही उसमें हल चले, बीज डाला गया भगवान का नाम लेकर। दिन आये खेतों में अंकुर फूटे। ट्यूबवेल से सिंचाई हुई। नहर के बम्बे से भी पानी लिया गया।

अब अगहन का महीना चल रहा था। गेहूँ, चना, जौ, मटर और सरसों आदि के हरे-पीले खेत देखनेमें बहुत सुन्दर लगते। गाँवका बच्चा-बच्चा मुस्करा रहा था। आलू, गाजर, शकरकन्द और मूली इन सबका खाने-पीने में अधिक प्रयोग हो रहा था। सब गाँव की ही उपज थी।

धरती धन दे रही थी मन-माना। सरकार की पंचवर्षीय योजना से लाखों आदमियों का बिगड़ा हुआ समय सुधर रहा था। कृषि प्रधान देश भारतवर्ष के किसान जो संसार में सबसे पिछड़े हुए कहे जाते थे, वे हँस रहे थे। उनके खेत लहरा रहे थे। हर आदमी कहता था कि इस साल उपज दूनी होगी।

जब सारा गाँव आनन्द मंगल मना रहा था ऐसे में बिन्दो रो रही

थी बड़े-बड़े आंसुओं से। उसका हाल तक पूछने वाला कोई नहीं था। उसका हाल बहुत ही पतला था। जब से घर में डाका पड़ा वह कौड़ी की तीन-तीन हो गई। जमींदारी-उन्मूलन तो पहले ही हो चुका था अब महाजनी भी डूब गई। कोई उसे उधार का एक धेला भी नहीं देता। वर्षों का पुराना नौकर जंगी, उसने भी साथ छोड़ दिया। वह सूने घर में अकेली पड़ी रहती, रात को दिया नहीं जलाती। उसके अपने खेत थे, वे परती पड़े थे। वह खाने के लिये दाने-दाने को मोहताज हो रही थी। एक दिन हिम्मत कर वह गई मुखिया के पास और कर्ज के रूप में उससे दो रुपये उधार माँगे। मुखिया मुकर गया, बिन्दो वापस लौट आई।

ऐसे ही बिन्दो जिसके दरवाजे जाती वहीं दुतकारी जाती। सभी उसका तिरस्कार करते, कोई सीधे मुँह बात नहीं करता। कभी-कभी उसकी यह इच्छा होने लगती कि किसी कुएँ में गिरकर जान दे दूँ या गाँव छोड़कर चली जाऊँ। अब समझ में आ रहा है कि जो पैसे को अपना दोस्त समझते हैं वही उनका दुश्मन बन एक दिन उन्हें कहीं का नहीं छोड़ता। दौलत से आदमी कभी बड़ा नहीं होता। वह ऊँचा उठता है अपने कर्मों से। कर्म ही प्रधान है धन कुछ नहीं।

इस तरह बिन्दो सोचती और अपने तक ही सीमित रह जाती। वह जी नहीं रही थी, बल्कि सह रही थी नारकीय यातना और उसका मन कह रहा था कि स्वर्ग और नर्क धरती से दूर नहीं दोनों यहीं हैं। भलाई स्वर्ग के दरवाजे पर ले जाकर खड़ा कर देती है और बदी सीधी ले जाती है नर्क-कुंड में। जहाँ आदमी जिन्दगी भर गोते लगाता रहता है। वह उतराता-डूबता है, लेकिन निकल कभी नहीं पाता।

८०

बिन्दो अपने मन की व्यथा न किसी से कह पाती न किसी के आगे रो पाती। वह अकेले में ही ऊब उकताकर साँसें लेती रहती। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करे? कहाँ जाये? कहाँ उसका [illegible] है?

महीना दो महीना विन्दो ने न जाने किस तरह व्यतीत किया। पेट के लिए उसे गृहस्थी की छोटी-छोटी चीजें बेचनी पड़ीं। मूसल, मथानी, चारपाइयां और बिछौने आदि सब कुछ बेच देने पर वह एक दम रीती रह गई। एक दिन वह सवेरे से भूखी थी। दिन डूब गया। रात हो आई। उसकी आँतें क्षुधा से कल्लाने लगीं। उसे कोई सूरत नजर नहीं आ रहीं थी। भीरू स्वभाव थी इसलिए मौत से बहुत डरती। गाँव से बाहर जाने की भी उसकी हिम्मत नहीं पड़ती। वह दुखिया बनकर दूसरों की दया पर जीना चाहती थी; लेकिन दुनिया में मुँह माँगी मुराद किसे मिली है। चाहने से एक तिनका भी नहीं मिलता। जो मिलता है मुकद्दर से और परिश्रम से। परिश्रम ही आदमी का भाग्य होता है। विन्दो इस बात को जानते हुए भी पीछे हट रही थी। उसके मन में जब भी मेहनत मजदूरी करने वाली बात आती तो जैसे कोई उसके गलेपर तलवार रख देता और उसे लगने लगता कि राजा रंक बनकर दर-दर भीख माँगे, दुनिया क्या कहेगी उसे देखकर। जो मुझसे कर्ज लेकर अपना काम चलाते थे आज को मैं उन्हीं के दरवाजे पर जाकर यह कहूँ कि मुझे काम दो, मैं भूखी हूँ। मैं मजदूरी करूँगी तो वे लोग मेरा मुँह देखेंगे, मेरी खिल्ली उड़ायेंगे और कहेंगे कि यही वह विन्दो है जो अपने पैसे पर फूली नहीं समाती थी।

विन्दो की प्रज्ञा नष्ट जैसी हो गई थी। उसकी बुद्धि इतनी भयग्रस्त हो गई कि वह कुछ भी निश्चय नहीं कर पा रही थी। सर्दी का महीना था। आधा अगहन बीत रहा था। वह ठिठुर रही थी ठंड से और रात का पहला पहर बीतने जा रहा था। उसके पास तनपर लपेटी हुई धोती के आलावा दूसरा वस्त्र नहीं था। बरोठे में एक चटाई पर वह लेटी थी। किवाड़े बन्द थे; लेकिन फिर भी ठंडी हवा दरारों से अन्दर प्रवेश कर रही थी। उसका पेट पीठ से लग रहा था। क्षुधा निवारण के लिए जब पानी पीकर तृप्ति कर लेना चाहती तो लगता कि कलेजा मुँह को आने लगा है, उसका रोम-रोम ठिठुर गया है जाड़े से। इस दयनीय स्थिति

भी वह सोच रही थी कि गाँव में कोई भी ऐसा घर नहीं है जहाँ मुझे शरण मिल सके। खाना और कपड़ा कौन किसको देता है। दुनिया मतलब की है। आदमी चार पैसे का काम करवा लेता है तब कहीं जाकर वह एक पैसा देता है। उस पर भी नाक-भौं सिकोड़ता रहता है। ऐसा मुद-गर्द जमाना न कभी देखा और न सुना। क्या करूँ किसके पास जाऊँ। लोग मेरी शक्ल से नफरत करते हैं, मुझे देखते ही दुत्कारने लगते हैं। यह सब उन्हीं कर्मों का फल है जो मैंने गरीबों को सताया, उनका खून चूसा। गरीबों की हाय मुझे ले डूबी। अब समझी कि जुल्म करनेवाला भी एक दिन तरसता है दो बूँद पानी के लिए। उसकी जिन्दा मिसाल मैं हूँ।

सोचते-सोचते बिन्दो को एक आशा की झलक दिखाई दी छोटी-सी। उसके मन ने कहा कि मैं जानती हूँ गरीब के सीने में बहुत बड़ा दिल होता है जबकि अमीर हृदयहीन होते हैं। गौरी को मैंने न जाने कितना सताया, कभी उसे चैन से नहीं बैठने दिया। यहाँ तक कि उसे गाँव से निकलवा दिया; लेकिन मैं जानती हूँ कि फिर भी वह मेरी इज्जत करती है। पीठ पीछे चाहे जो कुछ कहे, मुँह पर दीदी कहकर ही पुकारती है। सोचती हूँ कि इस समय रात है, अँधेरा है कोई देखेगा भी नहीं। मैं जाऊँ गौरी से जाकर कुछ खाने को माँग लाऊँ। वह मुझे खाली हाथ कभी नहीं लौटायेगी, जरूर कुछ देगी।

ऐसी सोच बिन्दो निकली घर के बाहर। मार्ग में उसे कोई नहीं मिला। मुखिया की चौपार में पयार पर लेटे कुत्ते कूँ-कूँ कर रहे थे। एक ने कान फटकारे और बाहर आया। बिन्दो सहम गई।

थोड़ी देर बाद बिन्दो गौरी के दरवाजे पर पहुँची और धीरे से किवाड़ों पर थाप दी। तब गौरी और मँगरू अन्दर लालटेन जलाये घर में बैठे थे। एक दरी का ताना-बाना लग रहा था। दोनों उसमें व्यस्त थे और रतन बैठा तकुली नचा रहा था। वह सूत कात रहा था। सब में हँस-हँसकर बातें हो रही थीं। सहसा गौरी ने थाप सुनी। वह उठकर खड़ी हो गई और पूछने लगी—"कौन है ?"

"मैं हूं बिन्दो, किवाड़े खोलो गौरी बहन।"

गौरी ने सुनी बिन्दो की स्पष्ट आवाज और सुना मंगरू ने भी। वह बोला धीरे से फुसफुसाहट भरे स्वर में—"चुप रहो गौरी। जवाब देने की कोई जरूरत नहीं। बिन्दो ने कौन-सी अपने साथ भलाई की है। वह रुपये मांगने आई होगी या कुछ खाने को। आजकल उसका यही रवैया है जहां जाती है, भगाई जाती है।"

बापू की बात सुनकर रतन भी बोल उठा गौरी से—"हाँ माँ किवाड़े मत खोलना। बिन्दो कितनी बुरी है उसने अपना घर ले लिया था।"

अब किवाड़ों पर थाप होने की अपेक्षा कुंडी खटकाने लगी और बिन्दो तनिक आवाज को तेज करके पुकारने लगी, "गौरी खोलो बहन। एक मिनट के लिए खोल दो, मैं अभी चली जाऊँगी। खोलो बहन गौरी, मैं बिन्दो हूँ तुम्हारी दीदी।"

अब गौरी असमंजस में पड़ी थी। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि पति की बात माने, पुत्र का मन रखे या इतनी रात को घर आये मेहमान की बात सुने। मंगरू ने कहा, नहीं, रतन जिद पकड़ गया, नहीं। दोनों बाप-बेटे नहीं-नहीं करते रहे। गौरी ने दोनों हाथ कानों पर रख लिए। वह घूम पड़ी और सीधी जाकर कुंडी खोल दी। बिन्दो अन्दर आ गई। वह रोने लगी सुबक-सुबककर और गौरी के सामने अपना आंचल फैला दिया। रोते-रोते रूंधे गले से बिन्दो बोली—"गौरी मेरे पेट की लाज रख लो। आज भूख से मेरा बुरा हाल हो रहा है। कभी नाव गाड़ी पर होती है और कभी गाड़ी नाव पर। नदी सूख गई है। मेरी मर्यादा कुछ भी नहीं रही। मैं सबको खिलाती थी आज खुद भूखी हूँ। मेरा अभिमान मुझे खा गया। घमंड शीशे की तरह चूर-चूर हो गया। मैं मजबूर हूं गौरी, मौत भी नहीं मांग सकती, मरने से भी डर लगता है। अपनी इस जिन्दा लाश को कहाँ ले जाऊं। माटी फांकूं या घास खाऊँ। गौरी बहन क्षुधा सता रही है कुछ थोड़ा-सा खाने को दे दो। तुम्हारे बच्चे बने रहें। तुम सुखी रहो। यह मुझ गरीब विधवा का

आशीर्वाद है ।"

यह कहकर बिन्दो लिपट गई गौरी के, उसने उसके कंधे पर सिर रख दिया और फफक-फफक कर रोने लगी । मंगरू और रतन चित्र लिखे से इन लोगों की ओर देख रहे थे और जाग पड़ी रूपा भी रोना सुनकर । वह उठकर बैठ गई । वह आश्चर्य चकित अपने बाल नैनों से सामने का दृश्य देख रही थी । गौरी ने बिन्दो का सिर उठाया और अपने आँचल से उसके आँसू पोंछे, फिर बोली उसके पक्ष का पूरा समर्थन करती हुई सत्कार भरे शब्दों में—"कौन कहता है कि तुम गरीब हो दीदी । दौलत से बड़ा आदमी का दिल होता है । तुम्हारे दरवाजे से कभी कोई निराश और खाली हाथ नहीं लौटा । तुम···।"

बिन्दो ने फौरन ही बात काट दी और आँसुओं की धार बहाती हुई बोली—"तुम्हें ही खाली हाथ लौटाया है गौरी । झूठी तारीफ न करो । मैं जानती थी कि मैं तुम्हें दुत्कार सकती हूँ घर से चले जाने को कह सकती हूँ; लेकिन तुमने यह सोचा ही नहीं कि अपनेसे बड़ों का अपमान कैसे किया जा सकता है । लाओ बहन जो कुछ रूखा-सूखा हो थोड़ा-सा दे दो । मैं बहुत भूखी हूँ, आँखों के आगे अँधेरा छा रहा है सिर चकरा रहा है, पैर काँप रहे हैं । ऐसा लगता है कि अभी गिर पड़ूँगी औंधे मुँह ।"

गौरी ने बिन्दो को सम्हाला, बाँह पकड़ कर उसको चारपाई पर बैठाया । फिर वह जल्दी-जल्दी कोठरी में गई । कुछ ही थाली में आटा, दाल, घी और सब्जी सब कुछ रखकर वह ले आई और बिन्दो के पास आ बोली—'चलो दीदी तुम्हें घर पहुँचा दूँ । हम नीचों के यहाँ तुम खाना खाओ यह अच्छा नहीं लगता । हम काछी हैं, तुम ब्राह्मण, चलो ।'

बिन्दो कुछ बोल नहीं पाई । वह कहना चाहती थी कि खाना मैं बनाऊँगी कैसे । न तो घर में बरतन हैं न ईंधन और न लकड़ी ही । तब तक गौरी ने स्वयं ही यह ताड़ा । वह बोली—"चलो यह सामान रख कर अभी कुछ थोड़े बर्तन और लकड़ी पहुँचानी है । हम लोग खायें और तुम भूखी रहो दीदी, भला यह कैसे हो सकता है ।"

विन्दो शर्म से झुक गई। वह पानी-पानी हो गई। तब तक गौरी बाहर निकल गई। उसे भी उसके पीछे जाना पड़ा। रास्ते-भर दोनों में बातें नहीं हुई। घर में जा विन्दो गौरी की बलायें लेने लगी और कहने लगी—"गौरी इतना त्याग और इतनी गहराई मैंने तुममें ही देखी। अगर कायदे से पूछा जाये तो मैं बहुत ही नीच हूँ। मैंने वह काम किया है जिस का बदला मुझे यह मिलना चाहिए कि गाँववाले मेरा मुँह काला करें और अपनी हद से बाहर निकाल दें। दूध की तरह साफ और सफेद चंदा के चाल-चलन पर मैंने लांछन लगाया, कौशल को बदनाम किया। डाका पड़ा तब उसके खिलाफ रिपोर्ट की। भुगत तो रही हूँ। इतना गिरा समय आ गया है मेरा कि माँगने से भीख भी नहीं मिलती। मुझे माफ कर दो गौरी बहन। मैंने तुम्हें जिन्दगी में बहुत सताया है।"

गौरी ने विन्दो को समझाया और यह कहा कि गलती हर इन्सान से होती है; लेकिन समझदार वही कहा जा सकता है जो अपनी भूल को जानकर फिर उसे सुधार ले। उस समय तुमसे जो कुछ हुआ वह तुम्हारा दोष नहीं था दीदी। माया रूपी शनिश्चर की सब करामत थी। वह अपना करतब दिखाकर चला गया।

थोड़ी देर बाद गौरी आवश्यक बरतन और लकड़ी दे आई विन्दो को। वह जब घर लौटी तो बहुत प्रसन्न थी। उसे लग रहा था कि उसने विन्दो के साथ जो कुछ किया है वह अपने लिए नहीं, उसके लिए नहीं; बल्कि मनुष्य धर्म का पालन किया है। एक स्त्री दूसरी स्त्री के साथ जो भी सहानुभूति का व्यवहार कर सकती है वही उसने भी किया।

: ८१ :

खाना खाकर विन्दो लेटी तो उसे इतनी गहरी नींद आई कि जिसका नाम नहीं। कुछ रोटियाँ बचा कर उसने सवेरे के लिये रख दी थीं।

सवेरा हो गया। सूरज चमकने लगा, और विन्दो सोती रही। कमरे के किवाड़े खुले थे। रोटियाँ रखी थीं एक झाऊ की डलिया के नीचे।

पड़ोस की बिल्ली आई वह भूखी थी उसे अन्न की महक मिली। उसने पंजों से,डलिया हटाई, रोटियाँ गुम गई। तब मुँह में एक रोटी दाब वहाँ से भाग गई।

दिन का पहला पहर आधे से अधिक हो गया; लेकिन बिन्दो की नींद नहीं टूटी, वह सोती रही। वह देख रही थी सपना जो बहुत मधुर था। वह भूल गई अतीत और वर्तमान, सपने की दुनिया को अपनी दुनिया समझने लगी। उसने देखा कि कौशल उसके पास आया है। चंदा और पुजारी पाठक आदि सब लोग उसे आदरपूर्वक वहाँ से लिवा गये। सभा के मंच पर वह बठाई गई मानस के मैदान में। वह कह रही थी लोगों से कि कौशल भाई ठीक कहते हैं। काम करो और जिन्दा रहो। इस युग के आदमी का यही सिद्धान्त है जो काम नहीं करता वही दूसरों की दृष्टि में भार, अवसाद और गया-बीता समझा जाता है। मैं भी काम करूँगा अपने गाँववालों के साथ। अब मेरी समझ में आया कि सरकार की श्रमदान योजना क्या है, उसका स्वरूप और महत्त्व क्या है।

कौशल मगन हो रहा था। बिन्दो की वक्तृता चल रही थी और तालियाँ बज रही थी उस भीड़ में। बूढ़े, बच्चे सभी मुस्करा रहे थे।

डलिया हट जाने से रोटियाँ खुल गई थीं। अब चूहे उन्हें कुतर रहे थे खींच-खींच कर। एक चूहा रोटी खींच कर चौखट पर से आया। उसे मुँडेर पर बैठे बन्दर ने देखा। वह कूदा धम्म से। चूहे भाग गये और बंदर रोटियाँ अपने गालों में भरने लगा। तभी अचानक उस धमाके की आवाज सुनकर बिन्दो जाग गई। वह उठ बैठी तब बन्दर नवरकर उछला और छज्जे का एक तोड़ा पकड़ पहुँच गया मुंडेर पर। स्वप्न की याद अभी बिलकुल ताजी थी। बिन्दो का मन अच्छा था, उसने देखा डलिया अलग पड़ी है और रोटियाँ गायब है, फिर निगाह गई बन्दर पर, जो खूब जल्दी-जल्दी अपना मुँह चला रहा था। वह हँस पड़ी और अस्फुट स्वर में कहने लगी कि यह मेरी परीक्षा ले रहे हैं भगवान और मजा दे रहे हैं मेरे पापों का। जब समय खराब आता है तो भुनी हुई मछलियाँ तक

पानी में कूद जाती हैं। राजा नल के साथ ऐसा ही तो हुआ था और हुआ था यही महाराणा प्रताप की छोटी-सी लड़की के साथ। बन विलाव उसके हाथ से रोटी छीन ले गया था।

बिन्दो उठी, शौचादि से निवृत हो स्नान कर पूजन पर बैठ गई। सुमिरिनी पर उसकी उँगलियाँ दौड़ रही थीं और मन भाग रहा था। वह एक जगह नहीं टिकता, मारा-मारा फिर रहा था। कभी वह गौरी की बात सोचने लगती कि गौरी सचमुच स्त्रियों में रत्न है। मैं उसे पत्थर समझती रही, यह मेरी भूल थी। और कभी सोचने लगती वह कौशल की बातें कि कौशल से अब तक दूसरों का हित ही हुआ है अहित नहीं। मैं उसकी निन्दा करती हूँ तभी गाँववाले मुझपर नाराज है। ठीक है! सोने को मुलम्मा नहीं कहा जा सकता; क्योंकि उसकी आब कभी जाती नहीं। कौशल हमारे समाज का, हमारे वर्ग का सूरज है। वह उजाला करने आया है वह कद्र करने वाला पुतला है उपेक्षा का पात्र नहीं।

इसी तरह बिन्दो उलझी रही अपने मानस व्यापार में। उसकी हर नीति बदलती जा रही थी। वह जाग रही थी; फिर भी उसे भ्रम हो रहा था कि कहीं सपना तो नहीं देख रही है। मन नहीं लगा, उसने सुमिरिनी रख दी और फिर घर से निकल पड़ी, चल दी गौरी के घर की ओर।

× × ×

आते ही बिन्दो को गौरी ने हाथों हाथ लिया। तब मँगरू कहीं गया था और रतन सबेरे का अखबार पढ़ने गया था अपने चाचा कौशल के घर। बिन्दो ने कहा अपनी आंसू भरी दृष्टि गौरी के मुख पर स्थापित कर—"एक काम करो गौरी बहन। मुझे तुम पर भरोसा है। इसीलिये आई हूँ।"

"क्या ?" कहकर गौरी प्रश्न सुनने के लिये आतुर हो उठी।

और बिन्दो कहने लगी धीरे-धीरे पश्चात्ताप भरी वाणी में—"मुझे पुजारी पाठक के पास ले चलो। मैं कौशल से मिलना चाहती हूँ और चंदा को गले से लगा उससे यह कहना चाहती हूँ कि चंदा हम तुम दो नहीं एक है। दोनों बहनों में तुम छोटी हो और मैं बड़ी। मैं अब पहले

वाली बिन्दो नहीं रही जिसे गरूर था कि उसके पास बहुत बड़ी दौलत है। मेरी दौलत और मेरा धन, मेरे भाई-बहनें हैं और यह गाँव की धरती। देर न करो गौरी मुझे ले चलो वहाँ। मैंने देख लिया कि सच्चाई के सामने कोई नहीं जीतता है। कौशल में सच्ची इन्सानियत है। वह मेरा छोटा भाई है; लेकिन मैं जानती हूँ कि मैं उससे बहुत कुछ सीख सकती हूँ, क्यों गौरी ?"

का अन्तर्द्वन्द्व चलता रहा कि जाकर क्या कहूँगी पाठक से और कौन-सा मुंह लेकर कौशल से बात करूँगी। ऐसे ही चंदा को कैसे लगाऊँगी गले वह तो मुझ से नफरत करती है।

जब बिन्दो पुजारी पाठक के घर पहुँची तो वे कौशल से कुछ परामर्श कर रहे थे बाहर चौपार में बैठे हुए। सहसा उनके कानों में गौरी का स्वर पड़ा। वह कह रही थी—"बिन्दो दीदी आई है पाठक दादा ये···।"

अभी गौरी इतना ही कह पाई थी कि बिन्दो फूटकर रो पड़ी और उसने झुककर पैर पकड़ लिये पुजारी पाठक के, फिर रोते-रोते बोली—"दादा अपनी इस मनहूस लड़की को क्या माफ नहीं करोगे ? क्षमा कर दो दादा। गाँव में अब मेरा कोई नहीं है, सभी मुझे दुतकारते हैं। जैसे पीतल के बरतन पर चढ़ी हुई कलई उतर जाती है और वह देखने में भद्दा लगने लगता है वही गति मेरी है। मुझे कोई राह नहीं सूझती दादा। सब तरह अँधेरा है एक आप का ही सहारा है। मैं···।"

पाठक ने बिन्दो को उठाया वे अपने गमछे से उसके आंसू पोंछने लगे और फिर लगा लिया वक्ष से। वे ढाढ़स और सान्त्वना भरे स्वर में बोले—"न रोओ बिन्दो मैं जानता हूँ कि तुम्हें बहुत दुःख है। तुम अपने किये पर पछता रही हो, भूल का महसूस होना ही सुधार के लक्षण होते हैं। क्यों नहीं है गाँवमें तुम्हारा कोई। हम सब है तुम अकेली नहीं हो।'

बिन्दो सिसक-सिसक कर रो रही थी और कह रही थी अपनी करतूतों की कहानी। पुजारी पाठक सुन रहे थे। कौशल पास खड़ा था और गौरी, वह भी खड़ी थी एक कोने में। पाठक का समझाना, बिन्दो का रोना और पछताना यह सब चल रहा था। पाठक ने अतीव स्नेहपूर्वक उसके सिर पर हाथ रखा और अपनत्व भरी वाणी में बोले—"बिन्दो मैंने तुम्हें कभी गैर नहीं समझा। तुम्हारे मन में दुराव था तभी ऊट पटांग बक रही थी। मैं तो अब भी यही समझता हूँ कि तुम चंदा की बड़ी बहन हो, मेरी धर्म पुत्री। अभी तुम्हारा धर्म बाप जिन्दा है। बेटी दुःख क्यों करती हो। दुःख उन्हें व्यापता है जिनके सिर पर

छाया नहीं होगी।"

अब बिन्दो की सिसकियाँ हिचकी तक सीमित रह गईं। उसे लग रहा था कि किसी ने उसके ऊपर से दुःख की काली चादर उतार ली है और सफेद पोशाक पहना दी है जो उसके वैधव्य की प्रतीक है। सामने कौशल खड़ा था। वह मुड़ी उसकी ओर और दीन वाणी में कहने लगी—"कौशल भइया तुमने माफ नहीं किया मुझे ! क्या मैं इतनी गई बीती हो गई हूँ कि अपने छोटे भाई से क्षमा तक नहीं पा सकती। मुझे माफ कर दो कौशल और यह भूल जाओ कि कोई बिन्दो इस गाँव में रहती थी, जिसका पेशा महाजनी का था। वह बिन्दो मर चुकी है कौशल ! अब मैं हूँ एक दुखियारी, तुम्हारी बड़ी बहन। बोलो कौशल तुम बोलते क्यों नहीं, एक बार मुँह से कह दो कि मैंने तुम्हें क्षमा कर दिया है।"

यह कह कर बिन्दो आगे बढ़ी। उसके दोनों हाथ बँध गये। तभी कौशल ने उसके हाथ पकड़ लिये और जल्दी-जल्दी कहने लगा—"कैसी बातें करती हो दीदी। तुमने कौन-सा अपराध किया है, जिसकी क्षमा चाहती हो। क्षमा तो मुझे माँगनी चाहिये। मैं छोटा हूँ आप बड़ी। मैंने हमेशा आपकी इज्जत की है। आपने कैसे समझ लिया कि मैं आप से असन्तुष्ट हूँ।"

"नहीं कौशल, नहीं। मुझे ठगने की कोशिश न करो। मैं सब जानती हूँ। तुम मुझ से झूठ नहीं बोल सकते। तुम अपनी दीदी से नाराज हो बहुत ज्यादा। याद है न एक दिन तुम पूछने आये थे और तुमने कहा था कि चलो गाँव के दो-चार आदमियों को ले चलो और शहर से पता कर देखो कि पदा के डाकू का पता लगा है या उनका गमंगान हुआ है। तब मैंने तुम्हें बातों में ही बहला दिया था, एक भी लगने नहीं दी। आज कहती हूँ कौशल कि वे सब पापड़ मेरे बेले हुए थे। खुद की लगाई आग में जब मुझे ही जलना पड़ गया तब आँखें खुलीं, होश आया। कौशल माफ कर दो बिन्दो को। आज सारा गाँव उसका दुश्मन हो रहा है। तुम…।"

बिन्दो स्वयं पानी-पानी हो रही थी। वह अपनी भूलें स्वीकार कर

रही थी । कौशल ने दूसरी युक्ति सोची, वह स्वयं नत हो गया और माथा टेक दिया विन्दो के चरणों में, फिर बोला—"दीदी, माफी मुझे माँगनी चाहिए, क्योंकि यह मेरी कमजोरी रही जो बराबर आपको असंतुष्ट ही बनाये रहा और कभी कोई सेवा करने का अवसर नहीं निकाल पाया।"

बस फिर क्या था, रुदन और हँसी का समा बँध गया। बिन्दो ने अपने छोटे धर्म-भाई को उठाकर गले से लगा लिया। वह रो रही थी, कौशल मुस्करा रहा था और पुजारी पाठक गद्गद् हो रहे थे। ऐसे ही गौरी की खुशी का भी पारावार न था।

इतने में आ गई चंदा कौशल को ढूँढती हुई। उसने यह दृश्य देखा तो चौंक कर रह गई। सहसा बिन्दो का ध्यान उसकी ओर आकृष्ट हुआ। वह कौशल को छोड़ लग गई चंदा के गले और धीर-अधीर हो रोती हुई कहने लगी—"चंदा मैं जानती हूँ कि मुझ पापिन से तुम्हें बहुत नफरत है और होनी भी चाहिए; क्योंकि तुम्हारी राह में बुराई और बदनामी के काँटे फैलाने वाली मैं ही वह डाइन बिन्दो हूँ। जिसे आज सारा गाँव एक मिट्टी के ढेले के बराबर भी नहीं समझ रहा है। थू-थू तुम्हारी नहीं हुई चंदा अब मेरी हो रही है। मैं शरण आई हूँ अपनी छोटी बहन के पास। मैं अनाथ हूँ, भूखी हूँ, जमाने की सताई हुई हूँ, मुझ पर तरस खाओ, रहम करो चंदा, मुझे अपने से दूर न करो। मैं तुम्हारी विरोधनी नहीं तुम्हारी बड़ी बहन हूँ। तुम्हारा दुःख मेरा दुःख होगा और तुम्हारी खुशी मेरी खुशी। मैं तंग आ गई हूँ अपनी नारकीय जिन्दगी से। बहुत पाप किये हैं, अब प्रायश्चित करना चाहती हूँ।"

चंदा की समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था कि आखिर बिन्दो को हो क्या गया है। वह ऐसी बहकी-बहकी बातें क्यों कर रही है। उसने देखा गौरी की ओर जिसकी आँखों में प्रसन्नता के आँसू झाँक रहे थे, फिर देखा बाप के मुख को जो इस समय गम्भीर न होकर भोला था और उसकी दोनों आँखों से स्नेह बूँद टपक रहे थे। ऐसे ही कौशल अजीब भावभंगी बनाये खड़ा था जैसे उसने दुनिया की बहुत बड़ी दौलत

पा भी हो। अब चंदा को तथ्य समझते देर न लगी। वह जान गई कि पार जब सिर पर चढ़कर चिल्लाया है तभी बिन्दो परेशान होकर यहाँ आई है। मतलब यह कि विपक्षी ने सन्धि करने की सोच ली है और अपनी हार मान ली है। वह अपने आँचल से उसके आँसू पोंछ समझाने लगी। उसने कहा—"दीदी सुबह का भूला शाम को घर आता है तो उसे भूला नहीं कहा जाता। तुम स्वयं समझदार हो, तुम्हें मैं क्या बताऊँ। मेरे अहोभाग्य, आज मैं बहुत खुश हूँ कि हमेशा रूठी रहने वाली बड़ी बहन आज अपनी छोटी बहन को गले लगाने आई है। दीदी पछताना ही सबसे बड़ा प्रायश्चित है। वह तुमने कर लिया तो अब पश्चाताप की जरूरत नहीं रह जाती। आओ चलो घर में बैठो यहाँ चौपार में कब तक खड़ी रहोगी।"

यह कहकर चंदा बिन्दो का हाथ पकड़ आगे बढ़ी। उन दोनों के पीछे-पीछे चली गौरी। उसके बाद पुजारी पाठक और कोतल ने घर में प्रवेश किया। उस समय मंजू आश्चर्य से चकित हो रहा था कि यह सब क्या है? बिन्दो उसके घर क्यों आ रही है?

सभा होती, उसमें वह भाग लेती। पुरुष और स्त्रियों दोनों के साथ मिलकर काम करती। किसी को नीचा नहीं समझती और न किसी को ऊँचा। सभी उसके लिए बराबर थे। वह प्रचार कार्यों में भी कौशल का साथ देती। उसके साथ गाँवों का दौरा करती। रात्रि-पाठशाला में वह महिलाओं और बालिकाओं को पढ़ाती। उसके घर में चरखा संघ खुल गया, जिसमें चलते थे अम्बर चरखे। वह इतना महीन सूत कातती कि देखने वाले दंग रह जाते। गाँव की सफाई का वह पूरा-पूरा ध्यान रखती। कुयें, तालाब, पोखर और खाद-घर इन सबका निरीक्षण करती। भूखे, नंगे लोगों की सहायता करती। ऐसे में ही उसकी एक दिन भेंट हो गई एक दूसरे गाँव में जंगी से।

जंगी ने जब बिन्दो का नाम सुना और सुनी उसके कार्य-कलापों की कहानी तो वह आकर उसके पैरों पर गिर पड़ा और रो-रोकर क्षमा माँगने लगा। बिन्दो ने उसे उठाया, उसके आँसू पोंछे और सहानुभूति भरे स्वर में कहने लगी—"तुम्हारा दोष नहीं है जंगी यह सब समय का फेर था। गिरे दिनों में कोई साथ नहीं देता। यह दुनिया की रीति है। युद्ध में लड़ रहा राजा जब हारता है तो सभी योद्धा उसका साथ छोड़ देते हैं। तुमने समझदारी की। अगर गर्दिश में मेरे साथ होते तो तुम भी भूखों मरते। पेट बड़ा जालिम होता है जंगी, वह आदमी से सब कुछ करा लेता है। आओ तुम भी मेरे साथ रहो। अब अपने गाँव में कोई कमी नहीं है। हम सब लोग श्रमिक हैं, मेहनत करते हैं और उसकी रोटी खाते हैं। हमारा नेता कौशल है मेरा छोटा भाई और मँगरू, जिसे हम लोग गँवार समझते थे आज सारे गाँव की जान है। मैंने तो पाठक दादा से यह सबक सीखा है कि सेवा में ही मेवा है, त्याग ही तपस्या है और परोपकार सबसे बड़ा धर्म है।

इस तरह बिन्दो ने जंगी को बहुत समझाया। वह उसके साथ हो लिया और जब गाँव में आया तो उसके आश्चर्य की सीमा न रही। उस ने देखा कि उसकी स्वामिनी बिन्दो के घर में चरखे चल रहे हैं, वहाँ

बहुत-सी स्त्रियाँ और पुरुष बैठे काम कर रहे हैं। उसने पूछा—"यह क्या दीदी" तो बिन्दो हँस पड़ी जोर से और हँसते-हँसते बोली—"जंगी यह मेरा घर नहीं जनता का है, अपने गाँव पार्वतीपुर का चरखा संघ। तुम भी सूत कातो। किसी भी चरखे पर बैठ जाओ। चलो मैं बताती हूँ कि पोनी कैसे तैयार होंगे और महीन से महीन सूत किस तरह कातोगे।"

जंगी अवाक् हो देखने लगा अपनी मालकिन की ओर। उस समय उसे लग रहा था कि यह बिन्दो नहीं कोई संन्यासिनी बोल रही है।

× × ×

होली जल गई उसके बाद मुकदमा चला कौशल पर। बिन्दो तनिक भी नहीं घबराई और न लेश-मात्र चिन्ता की पुजारी पाठक ने ही। कौशल निर्भीक था। समस्या सामने थी बिन्दो के कि जिसको चोरी का झूठा इल्जाम लगाकर मैंने फँसाया है अपने ही बयानों से उसे कैसे बचाऊँ? बड़ा मुश्किल होता है जब आदमी अपनी गलती को सुधारने की कोशिश करता है। लेकिन इन्साफ होता है सबका, रास्ता निकल ही आता है और समस्या हल हो जाती है।

मुकदमा सेशन में चल रहा था जिला जज की अदालत में। सरकारी वकील अलग खड़ा होता, पाठक का वकील कौशल के पास। कुर्सियों का जमघट लगता और मुकदमा सुनने बैठते पुजारी पाठक, रामदयाल दादा, बिन्दो चाचा, मँगरू तथा गोरी इत्यादि। पुलिस पक्ष सबूत से ही कमजोर साबित हुआ और जिरह से तो सभी गवाहों के छक्के छूट गये। सफाई कौशल की उसे बेगुनाह साबित करने के लिए बहुत मजबूत थी। बहस में ही मुकदमा उसके पक्ष में हो गया और फैसला सुनाया गया कि कौशल निर्दोष है। उस पर कोई जुर्म नहीं बनता।

इसके अतिरिक्त वे लोग भी छोड़ दिए गए जो संदेह में कौशल के साथ गिरफ्तार हुए थे। गाँव में खुशियाँ मनाई गईं। उस दिन बिन्दो ने सात बाती का दिया जलाया जाकर देवी के मन्दिर में। पुजारी पाठक ने मँगतों और भंगियों को एक भोज दिया और चंदा उसने स्वयं बनाई

राह । जो जैसा करता है, वैसा पाता है । आंखें होते हुए भी हर आदमी अँधा है; क्योंकि उसे स्वयं उसकी ही कमियां नहीं देख पड़तीं । ऐसी हालत में जब वह परछिद्रान्वेषण पर उतर आता है वही उसका गुनाह हो जाता है और वह पापी कहलाने लगता है और बात तो यह है कौशल कि ऐसा होता उन्हीं लोगों के साथ जिनका विश्वास मर चुका होता है और वे हर आदमी पर सन्देह करते हैं । यदि धूपचन्द के अन्दर आत्म विश्वास जीवित होता तो वह ऐसा कुकृत्य करता ही क्यों? छोड़ो । वह अपनी गति को प्राप्त हो गया । हम उसका दुःख करें इससे उसे तो कोई लाभ हो नहीं सकता ।"

रास्ता तय हो रहा था । चंदा चल रही थी दोनों के पीछे-पीछे । सहसा वह बोल उठी—"मेरी समझ में नहीं आता बापू कि आखिर आदमी पाप क्यों करता है ? अगर वह भले काम करने पर ही कमर कस ले तो क्या बुराई है । धूपचन्द जैसे दूषित भावना वाले व्यक्ति समाज के लिये अभिशाप हैं । कायदे से तो उन्हें जिन्दा भी नहीं रहना चाहिए । उनसे हम हमदर्दी करें, उनके लिये पछतायें यह मेरे वश का तो नहीं । मैं तो यही कहूँगी कि धूपचन्द के साथ जो कुछ हुआ वह बहुत अच्छा हुआ ।"

इस पर पुजारी पाठक और कौशल दोनों खिलखिलाकर हँस पड़े । बात यहीं तक नहीं रही चंदा बोलती गई । दोनों सुनते रहे, हँसते और मुस्कराते रहे । इतने में घर आ गया । वे लोग जब अन्दर प्रविष्ट हुए तब भी उनके चेहरे खिल रहे थे, होंठों पर मुस्कान दौड़ रही थी ।

× × ×

गांव में मोर नाच रहे थे, बागों, तालाबों के किनारे और दूर-दूर के मैदानों में । अषाढ़ बरस रहा था रिमझिम-रिमझिम, नन्हीं-नन्हीं बूंदों में । दूर-सुदूर एक ऊँचे पेड़ पर बैठा पपीहा रट रहा था, पी कहां ! पी कहां । खेतों में हल चलाते हुए किसान गा रहे थे बिरहा और बारह माता । घरों में स्त्रियां मेघ-मल्हार गाते नहीं थकतीं । गांव में मुखिया की चौपार पर जमात जुड़ती वहां ढोलक और मंजीरे पर आल्हा गाया

जाता। इस तरह सारा गाँव प्रसन्नता की सरिता में बह रहा था। सब में उल्लास था, सब में उमंगें, सबके जीवन में अपाढ छा रहा था और खुशी के बादल जैसे घुमड़-घुमड़कर बरस रहे थे।

पुजारी पाठक चाहते थे कि इसी महीने कौशल और चंदा का ब्याह हो जाये। कौशल के माँ-बाप से उन्हें अनुमति पहले ही मिल चुकी थी; लेकिन दुःख का विषय तो यह था कि कौशल नहीं राजी होता। उसका कहना था कि जब तक हमारा गाँव खुशहाल नहीं हो जाता मैं ब्याह नहीं करूँगा। समय पर सब काम अच्छे लगते हैं। असमय की शहनाई किसी को नहीं सुहाती।

बिन्दो ने भी समझाया कौशल को। उसका कहना था कि पाठक दादा का मन रख लो। उनकी बूढ़ी आत्मा तुम्हें आशीष देगी कौशल। तुम खूब फलो फूलो; लेकिन कौशल था दृढ़-प्रतिज्ञ व्यक्ति। वह जो निश्चय कर लेता वह फिर उससे कभी नहीं डिगता। उसने कहा—"आप नहीं जानती दीदी कि मेरी जो लगन है जब तक वह पूरी नहीं हो जाती तब तब मैं विवाह जैसे सासारिक बंधन में नहीं बँधूंगा।"

बिन्दो खामोश हो जाती और लोग भी कौशल को समझाते। उनमें रामदयाल दादा, मुखिया, मँगरू और गोरी प्रधान होते। मगर अपनी टेक के सम्मुख कौशल किसी की भी नहीं सुनता। वह अपनी ही बात कहता रहता। उसकी इस दृढ़ता की एकमात्र पुजारिन थी चंदा। वह कभी कुछ नहीं कहती। कौशल उससे खुश रहता और कहता कि चंदा तुम मेरी सबसे बड़ी शक्ति हो। मैंने पाया कि सभी हिल गये, सभी डग-मगाये; लेकिन तुम अडिग रहीं। हम लोग बँधेंगे ब्याह के पवित्र बंधन में; लेकिन अभी नहीं उस समय जब हमारी धरती क्वाँरी नहीं रहेगी। उसका भी ब्याह हो जायेगा। हमारे गाँव में अनाज की ढेरियाँ लगेंगी अनगिनत। इतना गल्ला पैदा होगा कि खाये नहीं चुकेगा, लोग अकर जायेंगे।

चंदा और कौशल दोनों की यह स्थिति थी कि वे दो तन और एक

प्राण थे; लेकिन सबसे बड़ी खूबी और बहुत बड़ी बात थी यह कि दोनों ही मर्यादा बद्ध थे। उनमें क्षमता थी। वे नियंत्रण कर ले जाते। स्वयं अपने ऊपर कभी किसी काम में जल्दी नहीं करते, सोच-समझकर ही कदम उठाते थे। चंदा जानती थी कि काले के आगे दिया नहीं जलता है। कौशल किसी की बात नहीं मानेगा। हर्ज क्या है ? ऐसी क्या जल्दी है ? ब्याह काज तो होते ही रहते हैं। निर्माण की बेला में तनिक भी असावधानी से बनते हुये काम बिगड़ जाते हैं। कौशल की इच्छायें पूरी हों। गांव में अस्पताल खुले, प्राइमरी स्कूल जूनियर हाई स्कूल हो जाये, पुस्तकालय में तरक्की हो और उपज बढ़ जाये चौगुनी हमारे खेतों की। गाँव का बूढ़ा, बच्चा कोई भी बेकार न रहे सबके पास काम हो। धरती सबकी माँ हो और सब धरती के पूत हों।

कौशल की विचारधारा ऐसी थी प्रवाहमयी कि न जाने कितनी योजनायें वह बनाता चला जाता। चंदा उसका समर्थन करती तो वह खुशी से फूला नहीं समाता। उसका मन कहने लगता कि मुझे जीवन साथी ऐसा मिल रहा है जो सर्वथा मेरे अनुकूल है। चंदा में गुण वैचित्र्य है, शालीनता है, सरलता है और है त्याग की सर्वोपरि भावना। वह अपने कर्तव्य को भली-भाँति पहचानती है। तभी तो जहाँ पर सब लोगों ने मुझे जोर दिया, विवश किया और कहा कि ब्याह कर लो। वहाँ वह मौन रही। कितना धैर्य है उसमें, कितनी समाई। वह एक ऐसी नदी है जो धीरे-धीरे बहती है। लोग समझते हैं कि नदी उथली है; लेकिन उस में गहराई है और है उसका अपना अलग अस्तित्व। वह भारत की लाज है और भारतीय सांस्कृतिक नारी की एकमात्र प्रतीक।

: ८४ :

गाँव पार्वतीपुर में बूढ़े रामदयाल दादा ने अपना घर दान दे दिया था सहयोग समिति को। यह समिति इसलिये खोली गई थी कि उसमें गाँव के ही लोग नहीं, बल्कि दूसरे ग्रामीण भी भाग ले सकें। उसका

प्रधान था कौशल। उसी के संकेतों पर सब चलते थे। बिन्दो उसकी सदस्या थी और गौरी एक कार्यकर्तृ। ऐसे ही मंगरू, जंगी, चंदा, पुजारी पाठक, मुखिया और स्वयं रामपाल दादा भी इस समिति से अत्यधिक दिलचस्पी रखते। समिति के लिये गाँव का प्रत्येक व्यक्ति हर महीने कुछ न कुछ चंदे के रूप में अवश्य देता। जिससे उसमें दिन-दूना और रात-चौगुना विकास होता जा रहा था।

कौशल ने ही इस समिति का संचालन किया था और वही इसका कर्णधार था। प्रगति की नाव धीरे-धीरे बह रही थी, श्रम के पतवार चल रहे थे, हवा माफिक थी, बहाव भी अनुकूल था। फिर भला किश्ती किनारे पर क्यों न लगती। देखते-देखते एक दिन अस्पताल की नींव पड़ गई। इमारत बनने लगी और ऐसे ही स्कूल के लिये भी दूसरी बिल्डिंग बनाई जाने लगी जिसमें जूनियर हाई-स्कूल के छात्रों के लिए व्यवस्था थी। यही नहीं हुआ, बैंक की तरह एक सहकारी शाखा खुल गई गाँव में। उससे लोगों को रुपये के आदान-प्रदान में बड़ी आसानी हो गई।

महीने में सहयोग समिति की दो बैठकें होतीं। उनमें पन्द्रह दिन के कार्यक्रम की सूची बनाई जाती। हर आदमी जिम्मेदारी के साथ अपने काम का अन्जाम देता। समिति के सदस्यों और कार्य-कर्ताओं को सख्त हिदायतें थीं कि वे कभी किसी का पक्षपात न करें। दूध को दूध और पानी को पानी कहें। हर गिरे हुए को उठायें और अपनी क्षमता भर उसकी सहायता करें। जहाँ तक हो निर्माण पर आरूढ़ रहें। विध्वंस को देख आँखें मूंद लें। संसार में शान्ति का प्रचार करें।

जाता कि वे भीख न मांगें काम करें समिति उन्हें भोजन देगी। गूंगे, बहरे और अन्धों को छोटे-मोटे काम दिये जाते जैसे मूंज कूटना, बान बटना, सूत कातना आदि। उन्हें पढ़ाया भी जाता और उनके भोजन-वस्तु का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाता।

गाँव में अब गन्दगी का नाम नहीं रह गया था। हर जगह स्वच्छ और साफ दृष्टिगोचर होती। पशुओं का भी एक छोटा-सा चिकित्सालय खोला था कौशल ने। उसमें जो डाक्टर बैठता, उसका वेतन भी समिति ही देती थी।

अब कौशल के मां-बाप महीने में बीस दिन गांव में और दस दिन शहर में रहते और कौशल, वह तो बहुत कम जा पाता था कानपुर। उसे गाँव में ही आनन्द आता। वहाँ उसका मन लगता। उसे खुलकर काम करने का मौका मिलता। उसके विकास की मंजिल तय हो रही थी। वह मन ही मन प्रसन्न हो रहा था और सोच रहा था कि दुनिया में कुछ भी असम्भव नहीं। आदमी लगन और मेहनत से काम करे तो कोई माने नहीं कि उसे सफलता न मिले।

कौशल की वाणी में जादू था। गाँव का बच्चा-बच्चा उस पर मुग्ध था। वह जब बोलता तो ऐसा लगता कि उसकी बातों में क़िसी ने मिश्री घोल दी है, वे बहुत मीठी हैं, बहुत प्यारी और सुनने में अच्छी लगती हैं। जब वह बोलता समिति भवन में या गांव के बीच हो रही किसी सभा में, तो समा बंध जाता। लोग मन्त्रमुग्ध हो जाते जब वह कहता कि भाई कोई आदमी भगवान नहीं होता। सभी इन्सान होते हैं, सभी के पास बुद्धि होती है और होता है उनका अपना विवेक; लेकिन रास्ते सबके अलग-अलग होते हैं। कोई तरक्की कर ले जाता है और कोई पीछे रह जाता है। तभी नौबत आती है। कोई मालिक बनता है और कोई गुलामी करता है। कागज के कुछ टुकड़े आदमी की आजादी खरीद लेते हैं। उसका मन मर जाता है और वह जीवन्मृत होकर रह जाता है। मैं तो बेहतर यह समझता हूँ कि अकेले काम न करो, मिलकर जुटो,

साथी बनाओ। हाथ बटाओ फिर देखो सहयोग में कितना सुख मिलता है और जब हम सब एक हो जायेंगे तो हमारे लिये बड़े से बड़ा काम भी आसान हो जाएगा। हम पिछड़े हुए भारतीय न कहला कर जागृत भारतीयों के नाम से पुकारे जायेंगे।

कोशल की ऐसी बातें लोगों पर छाकर रह जातीं। वे उसके आदेशों पर चलने की पूरी-पूरी कोशिश करते। ऐसा लगता था कि गांव का देवता साक्षात् मनुष्य रूप में अवतरित होकर उनके सामने खड़ा है और उन्हें नव निर्माण की विधियां बता रहा है जो अत्यन्त सरल हैं तनिक भी कठिन नहीं।

: ८५ :

एक वर्ष बीत गया। दोनों फसलें बहुत अच्छी हुईं। सहयोग समिति के अन्न भंडार में भी वृद्धि हुई। बिन्दो, जगी और रामदयाल दादा ये तीन व्यक्ति ऐसे थे जो उसी भवन में रहते, उसकी देख-रेख करते और वहां की समुचित व्यवस्था का प्रबन्ध करते। इसके अतिरिक्त पुजारी पाठक थे समिति के सचिव। उनका भी त्याग महान् था। उन्होंने भी समिति की एक शाखा के लिये अपना मोंढा दे दिया था उनके जानवर अब अलग बांधे जाते। उनके लिए झोंपड़ा बना लिया गया था।

मंगरू और गौरी का नाम भी गांव के बच्चे-बच्चे की जबान पर था। बड़े लोग दम्पति को आदर की निगाह से देखते और छोटे उनसे श्रद्धा करते। कौन ऐसा था गांवमें जिसके वे लोग काम नहीं आते। अब सब भूल गये थे कि गौरी बदचलन है और मंगरू कई बार का सजायाफ्ता।

रतन भी कोशल की भांति गांव वालों की आंखों का तारा हो रहा था। उसके साथी उसे बहुत चाहते। अपनी सच्चाई और सरलताके कारण ही सबका सिरमौर हो रहा था। उसकी दिनचर्या का प्रत्येक कार्य समयानुसार ठीक ढंग से होता। उसमें तनिक भी फर्क नहीं पड़ने पाता। वह पढ़ता, घर का काम देखता, हल चलाने के काम में मां-बाप का हाथ

हटाता और फिर बैठकर चलाता अम्बर चरखा। चरखे पर वह राष्ट्र गीत गाता था। जिसे उसके साथी मिल कर दोहराते और सुनने वाले, देखने वाले उन्हें देखते रह जाते। ऐसी थी उसके काम की धुन, ऐसी थी उसकी लग्न; क्यों न होता एक कुशल बाप का बेटा था और एक सफल माता का पूत और फिर होनहार बिरवान के पात तो चिकने होते ही हैं।

जो रतन पहले बिन्दो से अत्यधिक घृणा करता था। वही अब उसे श्रद्धापूर्वक बुआ कहता और बिन्दो भी हँसकर उसे गले लगा लेती, उसका मुँह चूमने लगती। ऐसा लगता था कि गांव भर का सारा द्वेष विलीन हो गया है और उसकी जगह आत्मसंतोष ने ले ली है। तभी प्रत्येक व्यक्ति खुश है।

गांव का उन्नत रूप सबके सामने था। दूसरे गांव वाले उससे प्रेरणा ले रहे थे। अब कौशल का ध्यान पहुँचा मनोरंजन की ओर। इसके लिए उसने अपने बाप की संचित पूंजी में से ही व्यय किया। तारों की जाली का एक छोटा-सा भवन बना, जिसमें रखे गये मोर, खरगोश, हिरन और सुर्खाब आदि। इसके चारों ओर हरी-हरी दूब लगाई गई और कुछ कीमती फलों के पेड़ जैसे शरीफा, नारंगी, अमरूद, अनार, कलमी आम और नींबू आदि। इसके अतिरिक्त उस घेरे के बीचों-बीच एक छोटा-सा सुन्दर जलाशय बनाया गया। जिसमें रंग-बिरंगी मछलियां डाली गईं। कमलों की कई किस्मों के फूल उसमें खिलते हुए नजर आते जैसे रक्त-कमल, नील-कमल, श्वेत-कमल और गुलाबी कमल।

पार्वतीपुर गांव का बदला हुआ रूप सबको वैसा लग रहा था जैसे उनका स्वर्ग बन गया हो। उनके बाग नन्दन-कानन, उनके खेत अजर-अमर हो गये थे। उनमें फसल जब उगती तो लगता कि अमर बेल बढ़ रही है जो बिना सींचे ही पनपती है। इन सबका श्रेय था मंगरू और गौरी को; क्योंकि उन्होंने थपेड़े सहे थे समय के, तिरस्कार पाया था समाज से। ठुकराये गये, ठोकरें खाते गये, गिरते गये, उठते गये, चलते और सम्हलते गये और अब पहुँच गये थे अपनी मंजिल पर। उनका गांव

जाग्रत रूप में मुस्करा रहा था। वहाँ का दिन सोने का होता और रात चाँदी की। यहाँ तक कि अमावस की रात में भी एक चाँद चमकता था, वह चंदा थी। जिसके नाम का कुछ ऐसा प्रभाव था कि लोगों में उत्साह भर जाता, स्फूर्ति आ जाती और उनकी अकर्मण्यता कोसों दूर पयान कर जाती।

ऐसे ही दिन था सूरज का कौशल। सूरज और चाँद की जोड़ी गाँव वालों को बहुत प्यारी लगती। जब लोग चंदा और कौशल को साथ-साथ देखते तो बहुत प्रसन्न होते और कहते कि न जाने वह कौन-सा भाग्यशाली दिन होगा जब ये दोनों एक सूत्र में बँध जायेंगे, इनका ब्याह हो जायेगा।

इस तरह गाँववालों के मानस प्रदेशों में आनन्द की त्रिवेणी लहरा रही थी। वे सराबोर हो रहे थे सुख में। ऐश्वर्य उनके पीछे-पीछे हाथ बाँधे घूम रहा था। विधि का विधान था तभी तो गाँव के दरवाजे पर ऋद्धि और सिद्धि खड़ी नव-निर्माण पर चमर डुला रही थी। नया जागरण हुआ था, नया सवेरा। सूरज जो कलयुगी प्रभाव से काला पड़ गया था, अब उसका तन उजाला हो गया था और आँखें खुल गई थीं।

: ८६ :

गाँव पार्वतीपुर में अब आधी रात को बेला फूलता था। उसकी धीमी-धीमी सुगन्ध वातावरण में समा कर रह जाती। सवेरे जब लोग टहलने आते मनोरंजन बाग में तो चम्पा की मीठी सुगंध उनके नथुनों में समाती, केवड़ा, मोगरा और मोतिया की प्रिय सुगन्धें भी उसमें सम्मिलित होतीं और फूलों का राजा गुलाब महकता महक-महक। मोर नाचने के गाते, हिरन उछलते और चौकड़ी भरते और खरगोश खाते हरी-हरी दूब कुतर-कुतर कर। लोग जलाशय के किनारे बैठते और उसमें तैर रही रंगीन मछलियों को देखते। वे आटे की छोटी-छोटी गोलियाँ बनाते भाई और उनको भी छोड़ते पानी में। मछलियाँ [illegible] हुई

तैरती तब कमल के खिले हुए फूल हिलने लगते और हवा उस वातावरण में एक नई मस्ती भर देती और जगा देती एक नया उन्माद।

शरद ऋतु बीत गई। वसन्त का आगमन हुआ अब पुजारी पाठक जल्दी करने लगे कि इन्हीं सहालगों में चंदा तथा कौशल का ब्याह हो जाये। उसके माँ-बाप तो पहले से ही सहमत थे। उससे भी पूछने की अब आवश्यकता नहीं रह गई थी। एक दिन मँगरू के मुँह से उसे मालूम हुआ कि फागुन सुदी दूज को उसकी लगन तय हो गई है। पुजारी पाठक मुहूर्त निकलवा चुके हैं। शहर से बारात सजेगी, गाँव आयेगी खूब धूमधाम से। सहयोग समिति के भवन में जनवासा होगा और इस तरह चंदा उसकी हो जाएगी एक दिन हमेशा हमेशा के लिए।

कौशल अब ब्याह से इन्कार नहीं कर सकता था; क्योंकि उसके लिए कोई भी सन्धि शेष नहीं रह गई थी। उससे जब कोई ब्याह की बात चलाता तो वह झेंप जाता, कुछ भी जवाब नहीं दे पाता। उसके मुँह पर लाज की नजीली लालियाँ दौड़ जातीं और वह मन ही मन मुस्करा कर रह जाता।

ऐसे ही जब चंदा ने शादी का समाचार सुना तो उसकी खुशियों का ठिकाना न रहा। वह अपने मन में फूली न समाई। उसका रोम-रोम खिल उठा फूल की तरह। वह मन ही मन आँखें मूँद अपने और कौशल के उज्ज्वल भविष्य के लिए ईश्वर से प्रार्थना करने लगी। गोरी उससे मीठी चुटकियाँ लेती और कहती कि ननदरानी अब तो लगन लग रही है। गाँव की दुलहिन शहर जाएगी। मैं भाभी तब भी थी और अब भी; लेकिन देहातिन। भूल जाओगी शहर जाकर। कभी नाम भी नहीं लोगी कि पार्वतीपुर में कोई गोरी रहती है।

इस पर चंदा खीझ जाती और रूठकर कहने लगती गोरी से कि जाओ मुझे नहीं अच्छी लगतीं तुम्हारी बातें। भला मैं भूल क्यों जाऊँगी किसी को। तुम्हें तो दिल्लगी सूझती है और मुझे शर्म लगती है। देखो कहे देती हूँ भाभी कि अब जो मुझे छेड़ा तो रो दूँगी और कहूँगी बिन्दो

दीदी से कि गौरी भाभी मुझे हैरान करती हैं ।

अच्छा आनन्द आता । गौरी चंदा को चिढ़ाने लगती मीठी-मीठी बातें कहकर । आखिर हार चंदा को ही माननी पड़ती और जब वह सहयोग समिति के भवन में जाती गौरी के सामने ही बिन्दो से कहती कि देखो दीदी समझा लो अपनी गौरी को, मुझसे चुहल करती हैं, छेड़ती और हैरान करती हैं । मैं कुछ बोलती नहीं और ये दिल्लगी करते नहीं थकतीं । पता नहीं इन दिनों इन्हें क्या हो गया है ।

चंदा की बातें सुनकर बिन्दो खिल-खिल करके हँस पड़ती और कहने लगती उसको सदय करके कि न बाबा ! बहीन मुझे न बनाओ मैं बीच में नहीं पड़ूँगी । तुम्हारा ननद-भौजाई का झगड़ा है उसका फैसला कोई नहीं कर सकता है; क्योंकि यह झगड़ा चलता आया है और चलता रहेगा और फिर अब तो तुम्हारी लगन लग रही है । भला बेचारी गौरी इन दिनों भी हँसे बोलेगी नहीं तो कब ?

चंदा का चेहरा निर्वाक हो जाता और वहाँ से भाग जाती । उसके मन में कल्पनायें आती । भविष्य के सपने साकार होकर आँखों के सामने नाचने लगते । उसे रात में भी स्वप्न आते जब प्रगाढ़ निद्रा में लीन होती । वह देखती उसके दरवाजे पर नौबत बज रही है । शहनाई के स्वर बुलन्द हो रहे हैं । पालकी कंधों पर उठाये आठ कहार खड़े हैं । उसमें बैठा है कौशल दूल्हा बना सिर पर मौर लगे । आतिशबाजी छूट रही है और दरवाजे पर खड़ी स्त्रियाँ मंगल गीत गा रही हैं । वह झाँक रही है ऊपर छज्जे के एक कोने से । उसकी आँखें सहसा कौशल से मिल गईं । वह शरमा गई और जल्दी-जल्दी वहाँ से भाग गई ।

इसी तरह के सपने अक्सर चंदा देखा करती । धीरे धीरे वह दिन भी आ गया । जब गाँव के धुरे पर धूल के बादल उड़े । बैलों के गले में बँधी घंटियाँ टनटनाकर बज उठीं । उसके बाद सुन पड़े [illegible] बैण्ड बज रहा था फिल्मी गाने की धुन पर । नगाड़े [illegible] बज रहे थे और झाँझ-मंजीरे अपना अलग समाँ बाँ[illegible]

बच्चे खुशी से उछल पड़े। वे धूरे की ओर दौड़ पड़े। सब के मुँह से एक ही आवाज़ आ रही थी कि बारात आ गई, बारात आ गई। यह चंदा बहन की बारात आ रही है। कौशल भइया आज दूल्हा बने होंगे। हम लोग उन्हें देखने जा रहे हैं।

इस तरह बच्चों की भीड़ उमड़ी पड़ रही थी और बारात धीरे-धीरे गांव में प्रवेश कर रही थी। एक गोला छूटा। धांय की आवाज हुई और बारात बजने लगी आकर बीचों बीच गांव में। तब सूर्य अस्ताचल में छिप रहा था। उसकी थोड़ी-सी लालिमा शेष रह गई थी।

बारात आकर टिक गई जनवासे में और पुजारी पाठक के घर तैयारियाँ होने लगी द्वार-चार की। इतने में कौशल को समाचार मिला कि उनके क्षेत्र के कृषि मंत्री गांव में पधारे हैं। कल वे यहां निरीक्षण करेंगे। सहयोग समिति के भवन में ही उनको लाकर ठहराया गया।

मंत्री महोदय ने कौशल को आशीर्वाद दिया। उसकी प्रशंसा सुन चुके थे और उसके कार्यों की कहानी भी। वे बहुत प्रसन्न थे और जब द्वार-चार की वेला आई तो वे भी बरातियों के साथ बाराती बनकर पुजारी पाठक के दरवाजे पर गये। अगवानी हुई, वर के तिलक हुआ। इन सब रस्मों के अदा हो चुकने के बाद आतिशबाजी छूटी खूब धड़ल्ले से। जब तक आतिशबाजी छूटती रही बारातियों का जलपान चलता रहा। पुजारी पाठक ने घर पर हलवाई लगा दिया था, कई तरह की मिठाइयाँ नमकीन और पकवान बने थे। गाँव में ऐसी व्यवस्था देख मंत्री महोदय इतने खुश हुए कि जिसका नाम नहीं। वे कहने लगे कि हमारे गांवों को ऐसे ही जागृत रूप में होना चाहिए। नगर की कुशलता वहां की कारीगरी सब फीकी है यहाँ के इस आयोजन के सन्मुख।

बारात जनवासे आई। वैवाहिक रीति-रिवाज पूरे होने लगे। सवेरे कौशल जब भाँवरों से वापस लौटा तो उसने सुना रामदयाल दादा कह रहे थे कि गांव में सभा होगी। उसकी तैयारियां हो रही हैं। मंत्री महोदय उसमें भाषण देंगे। इसके पहले एक बार वे सारा गांव घूमकर

देखेंगे। हम लोगों के बड़े भाग्य कि वे इस रास्ते से गुजर रहे थे, इधर घूम पड़े। अब हम उनके सामने अपनी माँगें खुले रूप में रख सकेंगे और हमें पूरा-पूरा विश्वास है कि वे सहृदय व्यक्ति हैं, हमारी सहायता करेंगे। जो थोड़ी-बहुत कमियाँ रह गई हैं। वे उनके माध्यम से पूरी हो जायेंगी।

यद्यपि कौशल ब्याह का जोड़ा पहने था, उसके पैरों में महावर लगा था; लेकिन फिर भी वह चल पड़ा एक जनसेवक की भाँति। आगे-आगे कृषि मंत्री थे और दायें-बायें चल रहे थे उनके अंगरक्षक। उनके साथ कौशल था। वह दर्शनीय स्थानों पर रुकता। मंत्री महोदय का ध्यान उनकी ओर आकृष्ट करता और बतलाता कि उसके आने से पहले यहाँ की हालत बहुत गई-बीती थी। न तो सिंचाई का कोई उत्तम प्रबन्ध था, न शिक्षा, इलाज और खेती ही की हालत ठीक थी। गाँववाले अधिकांश गरीब थे। वे कर्ज से लद रहे थे। उनकी फसलें अच्छी नहीं होतीं; क्योंकि खाद के अभाव से खेत कमजोर पड़ गये थे। अब नहर के बने के अलावा ट्यूबवेल सिंचाई से काफी सहायक सिद्ध होता है। जहाँ सिर्फ गोबर और घूरे की खाद खेतों में पड़ती थी वहाँ पत्ती, घास, मिट्टी और कूड़ा आदि सब प्रयोग में लाया जाता है। सहकारिता ने गाँव की जर्जर काया में नये प्राण डाल दिये हैं। वह च्यवन ऋषि की भाँति फिर से जवान हो गया है। खेत मुस्कराते हैं, बाग हँसते हैं और खुश होते हैं गाँववाले जब उनका सुख और उनकी सुविधा दोनों ही उन्हें सहज ही प्राप्त हो जाते हैं।

कृषि मंत्री ने जब मनोरंजन बाग देखा और देखा वह सुन्दर छोटा-सा जलाशय जिसमें रंगीन मछलियाँ तैर रही थीं तथा सभी रंगों के कमल खिल रहे थे तो वे बहुत खुश हुए। वे कौशल से बोले—"हाँ भाई तुम्हारा गाँव मुझे बहुत पसंद आया। मैं स्वप्न में भी कल्पना नहीं कर सकता था कि एक गाँव इतनी उन्नति कर सकता है। सहकारिता, श्रमदान और अधिक अन्न उपजाओ में सब योजनायें यहाँ कार्यरूप में परिणित होते देख ऐसा लगता है कि अपनी दूसरी पंचवर्षीय योजना

की अवधि काल में ही भारतवर्ष के सब अंग पूरे हो जायेंगे, कोई भी अधूरा नहीं रहेगा।

दोपहर को भोजनोपरान्त मंत्री जी ने थोड़ी देर आराम किया। फिर आये वे सभा मंच पर। आते ही उनपर फूलोंकी वर्षा हुई और हार पहनाये गए। सभा मंडप गूंज उठा करतल ध्वनि से। पहले कौशल ने श्रीगणेश किया वक्तृता का। उसके बाद वे बोलने लगे। लोगों के कान उधर लग गये। वे कह रहे थे किसी भी देश की अमीरी और गरीबी वहाँ की जनता पर निर्भर होती है। जनता ही जागरण लाती है और वही आलस्य तथा प्रमाद वश हो देश को गहरे गर्त में डाल देती है। अब साम्राज्यवाद का अन्त हो चुका है। संसार का कोई भी देश गुलाम नहीं रह सकता। सबमें आजादी जोश मार रही है। भारत स्वतन्त्र है। यह प्रजातंत्र राज्य है, मतलब जनता का राज्य। सब समान हैं कोई छोटा और बड़ा नहीं। आज मुझे जरूरत है कौशल जैसे देशभक्तों की ऐसे ही कर्मठ व्यक्ति अपने राष्ट्र के लिए कुछ कर सकते हैं।

मंत्री महोदय सीधी और सरल भाषा में अपनी बात कह रहे थे। दूर-दूर के गावों के ग्रामीण भी वहां इकट्ठे थे। सब सुन रहे थे और समझ रहे थे। भाषण चल रहा था कि सरकार की श्रमदान योजना कितनी अच्छी है और कितनी लाभप्रद। गांव के सब लोग इकट्ठे जुटकर अगर काम न करते वे एक दूसरे का साथ न देते तो तुम्हीं सोचो यह गांव भला कभी हँस सकता था? इसकी गंदगी दूर हो सकती थी, कभी नहीं। हम सब एक है और एक साथ मिलकर काम करेंगे इसी भावना ने इस गांव को नई जिन्दगी दी है। यहां पर सहयोग और सहकारिता भी सार्थक हो जाती है और सबसे अधिक खुशी मुझे हुई यहां की सहयोग समिति देखकर। कितना सुन्दर इन्तजाम है यहां का। हस्तकला में भी मैंने पाया यह गांव बेजोड़ है। घर-घर में हथकरघा चलता है। हमारे बापू महात्मा गांधी का प्यारा चरखा अपना सन्देश दे रहा है। चरखा संघ इसका जीता-जागता सबूत है। यहां के व्यक्ति स्वस्थ हैं कमजोर और

बीमार नहीं। इसका मुख्य कारण है गाँव की सफाई।

मैं चाहता हूँ कि ऐसे उन्नत ग्रामीणों को सरकार जितना योग दे सके वह थोड़ा है। कल कौशल ने मेरे सामने कुछ माँगें पेश की थीं। मैं उन पर विचार ही नहीं, बल्कि उन्हें पूरी करने की कोशिश करूँगा और यह चाहूँगा कि यह गाँव दूसरे गाँवों के लिए एक मिसाल बने।"

इस भाँति भाषण चलता रहा, लोग सुनते रहे। सभी में उमंगें थीं; सभी में उत्साह और सभी चहक रहे थे मस्ती में। जब तक सभा समाप्त नहीं हुई एक व्यक्ति भी वहाँ से नहीं हिला। जब लोग अपने-अपने घरों को वापस चले गये तब भी चर्चाएँ चलती रहीं कि देखो कौशल कितना काबिल है। खेती के मंत्री खुद यहाँ दौड़े चले आये। ये कौशल से बहुत खुश हैं। कुछ दिन बाद देखना कि अपना गाँव मालामाल हो जायेगा।

रात आई मन्त्री महोदय विश्राम करने लगे। तभी बजने लगी शह-नाई और बैण्ड पर मोहक राग अलापा जाने लगा। कन्या पक्ष की ओर से नाई आया था संदेसा लेकर कि भात की रसोई तैयार है। बराती सम्हलने लगे। सब लोग जाने का आयोजन कर समिति भवन के बाहर आये। अब दूल्हे की तलाश थी जो मन्त्रीजी के पास बैठा बातों में व्यस्त था। ऐसा लग रहा था कि जैसे उसे खबर ही नहीं कि बारात भात खाने जा रही है और बिना वर के बाराती एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकते। स्वयं जब मन्त्री जी ने उससे कहा तब वह शरमाता हुआ वहाँ से उठा और धीरे-धीरे पालकी में जाकर बैठ गया।

मांगा ? क्या लाये हो ? मुझे भी दिखाओ।

अब कौशल मंत्री जी के निकट बैठ गया और धीरे से सकुचाता हुआ बोला—"क्या माँगता। सब कुछ तो आप लोगों की दया से मुझे प्राप्त है। मैंने माँगा है अपने ससुर पुजारी पाठक से कि उनका आशीर्वाद मुझे फलीभूत हो और उनका वरदहस्त मेरे सिर पर छाया की भाँति बना रहे। यह कोई छोटी सौगात नहीं, मेरे लिए बहुत बड़ी है। बड़ों का आशीर्वाद ही मुझे लगता है कि सबसे बड़ी निधि होती है। हीरे जवाहरातों का बड़े से बड़ा खजाना भी उसके सामने कोई महत्व नहीं रखता।

मन्त्री जी हँस दिये और बरबस ही उनका हाथ पहुँच गया कौशल के सिर पर। वे कहने लगे स्नेह विगलित वाणी में—"कौशल ! तुम्हारे विचार, तुम्हारा आदर्श और तुम्हारे कार्य-कलाप सभी प्रशंसनीय हैं। वास्तव में तुम गरिमा के पात्र हो। आज मैंने पहली बार एक वर के मुँह से यह सुना। कितना अच्छा हो यदि सबके विचार ऐसे ही हो जायें तो फिर दहेज-प्रथा का अन्त होते तनिक भी देर न लगे। दहेज की कुप्रणाली हमारे समाज के लिए अभिशाप बनी हुई है। इसको तुम्हारे ही जैसे युवक दूर कर सकते हैं; क्योंकि हर देश का भविष्य उसके नवयुवकों पर निर्भर होता है। वे ही उसके भावी कर्णधार होते हैं। ईश्वर तुमको तुम्हारे कार्यों में पूरी-पूरी सफलता दे और तुम धरती पर सुरज बनकर चमको। यही मेरी शुभ कामना है।"

इस तरह उस समय थोड़ी देर तक कौशल की मंत्री जी से बातें हुई। फिर रात को जब बारात बड़हर खाने गई और वहाँ से वापस लौटी तब पुनः वह आकर बैठ गया इन्हीं के पास और उनका रुख अपने माफिक देख मन की बात कहने लगा। वह बोला—"मैं चाहता हूँ कि हमारे गांव को सरकार की ओर से कुछ आर्थिक सहायता दी जाये ताकि अच्छी नस्ल के जानवर और अच्छी किस्म के बीज हम प्राप्त कर सकें। जिससे हमारा उत्पादन बढ़े। खेतों के लिए यदि कुछ ट्रैक्टर मिल जायें तो परती जमीन को जो ऊसर और बंजर है सहज ही तोड़ा जा सके।

उसमें भी फसल पैदा की जाये।"

कौशल की यह बात सुन मन्त्री जी मुस्करा दिये और बोले—"कौशल ! जो पत्थर काटकर पत्थर लाता है वह निरन्तर आगे ही बढ़ता जाता है, उसे कोई रोक नहीं पाता जो तुम चाहते हो सब होगा। मैं तुम्हारे साथ हूँ। चलो मेरे साथ लेजिस्लेटिव असेम्बली। वहाँ तुम्हारी माँगें उसी समय स्वीकृत कर ली जायेंगी। हर आगे बढ़ने वाले को सरकार मदद देती है, सहयोग देती है। इसके अतिरिक्त मेरी एक इच्छा और है कि तुम मेरे साथ राजधानी भी चलो। वहाँ संसद भवन में मैं सबके सामने तुम्हें पेश करूँ और यह दिखलाऊँ कि देखो यह जीता-जागता नमूना है। इस युवक ने श्रमदान योजना, सहकारिता और सहयोग को कितना बल दिया है कि एक उजड़े और पिछड़े हुए गाँव को स्वर्ग बना दिया है।"

"आप मेरी प्रशंसा कर, मुझे शर्मिन्दा न कीजिए। मैंने कुछ नहीं किया। यह सब आप ही लोगों का आशीर्वाद है और हमारे ग्रामीण भाइयों की मेहनत का फल है, मैं भला किस योग्य हूँ।"

कौशल के मुँह से यह सुन मंत्री जी का कलेजा हाथ भर का हो गया। वे बोले—"कौशल ! हीरा हमेशा अपने को काँच ही बतलाता है, यही उसका महत्व है, यही उसकी श्रेष्ठता। आदमी जब अपने को मिट्टी समझ लेता है तभी वह सोना बनता है। मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूँ। तुम्हारी हर माँग पूरी की जायेगी। तुम जो चाहोगे वही होगा।"

इस तरह मन्त्री और कौशल में न जाने कितनी देर तक बातें होती रहीं। कौशल को जो कुछ कहना था उसने कह डाला विनय और सरलता भरी वाणी में। मन्त्री महोदय उसकी प्रत्येक बातको स्वीकार करते चले गए और तय यह हुआ कि कल बारात की विदाई के बाद दूल्हा कौशल दुलहिन चंदा को लेकर बारात के साथ शहर वापस नहीं जायेगा, बल्कि यह यात्रा करेगा दिल्ली के लिए कृषि मंत्री के साथ। ऐसा सुअवसर उसे फिर जिन्दगी में बार-बार नहीं मिलेगा। यह उसका सौभाग्य है

जो मंत्री महोदय ने उसे अपने स्नेह का पात्र बनाया।

सवेरे जिस समय मंडप के नीचे नेग-जोग हो रहे थे, समधोटे की रस्म अदा की जा रही थी तभी यह बात सबके कानों में घूम गई कि कौशल कृषि मन्त्री के साथ दिल्ली जायेगा और फिर वहां से लखनऊ। वह अपने गांव की तरक्की के लिए सरकार से सहायता लेने जा रहा है। मन्त्री जी ने उसे आश्वासन दिया है कि वहां पर उसकी हर मांग पूरी की जायेगी। यह सुनते ही सब लोग चौंक गए और चौंके पुजारी पाठक तथा कौशल के बाप भी; लेकिन इन दोनों व्यक्तियों ने गर्व का अनुभव किया।

दुलहिन, चंदा मंडप के नीचे घूंघट डाले बैठी थी। उसे यह समाचार सुनकर जहां एक ओर हर्ष हुआ वहां दूसरे क्षण ही उसके मुंह पर विषाद की रेखायें दौड़ने लगीं। वह मन ही मन गुनकर रह गई और सोचने लगी कि देश सेवकों तथा सुधारकों का जीवन उनके अपने लिए नहीं, बल्कि दूसरे के लिए होता है। पर सेवा ही उनका धर्म होता है, पर सेवा ही उनका लक्ष्य। उनकी अपनी कोई समस्या ही नहीं होती। कौशल नेता है समाज का, देश का, अपने गांव का। वह जायेगा राजधानी दिल्ली। वहां काम बनाकर ही आयेगा। मैं ऐसी वधू जो देश के लिए अपने सुख, अपनी इच्छाओं का बलिदान करूं, यही त्याग मेरा सबसे बड़ा पातिव्रत्य धर्म होगा।

बाहर शहनाई बज रही थी। अन्दर पर्दे की ओट में बैठी स्त्रियां गीत गा रही थीं। बाराती और जनाती सभी मंडप के नीचे बैठे थे। नाई, बारी, और माली आदि अपना नेग मांग रहे थे। पुजारी पाठक दिल खोलकर पैसे निछावर कर रहे थे चंदा और कौशल पर। कौशल के पिता ने भी इस समय पैसे का मोह छोड़ दिया था। वे भी दरिया दिल हो रहे थे। और सबसे मजे की बात तो हुई उस समय जब वर और वधू गठबन्धन किये उठकर खड़े हुए। वे देवी, पितरों के पास जाने लगे तो कृषि मन्त्री ने रुपये-रुपये के नोटों की एक मोटी-सी गड्डी खोली और दोनों हाथों से लुटा दी वर-वधू पर। आंगन भर में नोट ऐसे बिखर

गये। जैसे खेत में राई। कहार, लोहार, धोबी और कुम्हार आदि सभी टूट पड़े नोट बटोरने लगे। ऐसे में ही आतिशबाज ने गोले पर बत्ती रखी, धाँय की आवाज हुई और होती चली गई। लगातार सात गोले छूटे।

पुजारी पाठक ने हँसकर डाल दी गुलाब के फूलों की एक बड़ी-सी माला मन्त्री के गले में। तभी लोगों ने देखा और वे विस्मय से चौंक पड़े। मंगरू तथा गौरी दोनों मन्त्री जी के पास खड़े थे। मंगरू अपनी माला पहना चुका था मन्त्री जी को और गौरी के हाथ इस कार्य को सम्पादित करने के लिए ऊपर उठ रहे थे। इधर मन्त्री मुस्करा रहे थे। उनका एक हाथ मंगरू के सिर पर था और दूसरा गौरी के बालों को स्पर्श कर रहा था, स्नेहपूर्वक सब लोग आनन्दातिरेक में झूम रहे थे। उनके होठों पर मुस्कान नाच रही थी थिरक थिरक।

: ८८ :

बारात मंडप के नीचे से बाहर गई। तय यह हुआ कि लड़की की विदा अभी नहीं होगी। जब कौशल दिल्ली और लखनऊ होकर वापस लौट आयेगा तभी यह शुभ कार्य सम्पादित होगा। पाठक की यह नेक सलाह कौशल के बाप को बहुत जँची और उन्हें तनिक भी मालूम नहीं हुआ कि वे बिना वर और वधू की बारात लेकर घर जा रहे हैं, देखने वाले क्या कहेंगे। लौटती बारात के बीच में जा रही दुल्हिन की डोली हो तो उसकी शोभा होती है; लेकिन वे कमजोर दिल के बाप नहीं थे। उनका कलेजा हाथ भर का था। वे इस समय बहुत प्रसन्न थे।

कौशल सबके बीच बाहर बैठा था फर्श पर। वहीं मखमली कालीन बिछ रहा था। उस पर मन्त्री महोदय बैठे थे और [illegible] उन्हें। इतने में मंगरू आया। उसने कौशल के कान में कुछ धीरे से कहा। कौशल उसके साथ तत्क्षण ही चल दिया। दरवाजे पर उसे गौरी मिली। वह बोली—"हाँ भइया कौशल मैंने ही बुलाया है तुम्हें। एक जरूरी काम है। यहीं आओ मेरे साथ।"

कौशल गौरी के पीछे-पीछे चलने लगा और सोचने लगा कि गौरी का कौन-सा जरूरी काम निकल आया ? यह मुझे कहाँ लिये जा रही है। वह यह सोचता गया और उसके पीछे चलता गया।

गौरी उस कोठरी के सामने जाकर रुकी। जिसमें चंदा बैठी थी। दरवाजे पर पहुँच उसने भिड़े किवाड़े खोल दिये और कौशल की ओर हँसती हुई देख कहने लगी—"परदेश जा रहे हो भइया। जाते-जाते अपनी नई-नवेली दुलहिन से दो बातें तो करते जाओ। मैंने सोचा कि विछोह होने जा रहा है इसके पहले मैं मिलन करा दूँ।" यह कहने के बाद हँसती हुई वह वहाँ से भाग गई।

व्यवहारी स्त्रियाँ चली गई थीं। जो दो-एक थीं वे बाहर दरवाजे पर लग रहीं। कौशल ने दृष्टि घुमाई देखा चंदा बैठी है। चुनरी की ओट में उसकी बड़ी-बड़ी आँखें झाँक रही हैं। उनसे टपक रहे हैं अनमोल मोती उसके कपोलों पर।

"तुम रो रही हो चंदा ?" कौशल के मुँह से यह निकला। बात पूरी होते-होते वह पहुँच गया उसके निकट। तब चंदा उठकर उसके वक्ष से लग गई और रोने लगी दुःख करके।

कौशल ने अपनी धोती से चंदा के आँसू पोंछे। फिर उसने सिर पर हाथ रख समझाता हुआ बोला—"चंदा तुम में साहस और संयम दोनों होने चाहियें और दोनों थे; क्योंकि मेरी आस्था कभी झूठ के प्रति नहीं रहती। अब क्या हो गया है ? आज क्या देख रहा हूँ मैं ? मैं जा रहा हूँ, जल्दी ही वापस लौटूँगा। इसका तुम्हें दुःख है और वे बहादुर राजपूतनियाँ कैसी थीं, जो अपने पति को रणक्षेत्र में भेजती थीं अपना अगूँठा चीर रक्त का तिलक लगाकर। चलते समय मैं बादल, बिजली और बरसात देखकर नहीं जाना चाहता हूँ। हँसो चंदा और मुझे हँसते-हँसते विदा करो। ब्याह, विदाई, मिलन और वियोग ये सब सांसारिक चक्कर हैं। काम बड़ा है। उसके करने का समय निकलकर फिर बार-बार नहीं आता मैं तो अपना सौभाग्य सराहूँगा कि कृषि मन्त्री ने मुझ पर वरदहस्त रख

बहुत बड़ा महत्त्व प्रदान किया । वरना मैं किस योग्य था चंदा ।"

कौशल की बात लम्बी होती जा रही थी । इस बीच चंदा के आँसू रुके । वे भीतर ही भीतर सूख गये पलकों में और अवसाद की जगह 'उल्लास ने ली । न जाने कैसे उसके होंठ हिले उनपर मुस्कान दौड़ी और एक क्षण के लिये उसकी दूधिया बत्तीसी चमक गई, फिर स्वर निकला बहुत ही घबराया और सकुचाया-सा—"मुझे भ्रम हो गया था । मैं भटक गई थी । तुम ठीक कहते हो । तुम्हारी मंजिल मेरी मंजिल है । चलो ! मन्त्री जी को देर हो रही होगी । बापू कहते थे कि बारात तो तभी विदा होगी जब वे कूच कर जायेंगे ।"

कौशल चल पड़ा और कहने लगा—"मैं समझ गया चन्दा कि तुम भी साथ चलना चाहती थीं । यह कोई मुश्किल भी नहीं, चल सकती हो; लेकिन मैं आवश्यकता नहीं समझता हूँ और तुम स्वयं समझदार हो । बस ! इतना काफी है और···।"

"हाँ और क्या ? चुप क्यों हो गए ?"

चंदा के इस चौंकाने प्रश्न पर कौशल ने सहज ही सामने की ओर इंगित कर दिया और व्यग्र स्वर में कहने लगा—"देखो वह देखो सामने मन्त्री जी की भी आँखें लग रही हैं इस ओर । वे शायद मेरा इन्तजार कर रहे हैं । जल्दी से घूँघट डाल लो, नहीं तो क्या कहेंगे ?"

इस पर चन्दा लजा गई । वह मुस्कराई और लम्बा-सा घूँघट खींच लिया । तभी उसने सुना—"अच्छा, विदा चन्दा ! चलता हूँ, फूल मुरझाये न । यह हँसता और खिला रहे ।"

चंदा ने ऊपर दृष्टि उठाई । कौशल जा रहा था । वह वहीं स्थिर होकर रह गई, न हिली और न डुली । लोग मन्त्री जी के उठते ही ससम्मान उन्हें कार पर बैठाने गये । बस अब देर थी तो केवल इतनी ही कि वे बैठें और कार स्टार्ट हो । फूल-मालायें पहनाई गईं [illegible] मन्त्री को । कार पर फूलों की वर्षा हुई । लोग बहुत हर्षित हुए जब उन्होंने अपने पास बैठाया कौशल को ।

कार चल दी। कौशल का दाहिना हाथ बाहर था। उस में था रूमाल जिसे वह हिला रहा था। पीछे भी रामदयाल दादा, पुजारी पाठक आदि के रूमाल हिले और कार धीरे-धीरे दौड़ने लगी गलियारे में धूल के बादल उड़ाती। ऐसे में कौशल ने तनिक गरदन और बढ़ाई बाहर को। उसने देखा चौखट पर खड़ी चंदा की चुनरी का छोर हिल रहा है। वह लहरा रहा है हवा में। वह मन ही मन हँस दिया। कार और आगे निकल आई, अब भी धुँधले-धुँधले चित्र पीछे दिखलाई पड़ रहे थे। यह विदा की वेला थी। दुःख का कहीं नाम नहीं सब ओर खुशी ही खुशी बरस रही थी। ऐसा लगता था कि आशा और उल्लास दोनों अबीर तथा गुलाल बनकर सब पर बरस रहे हैं और होली का पुनीत त्योहार आ गया है।

***